आमुख

राजस्थान के शिक्षक-साहित्यकारो की सृजन-यात्रा को शुरु हुए 22 वर्ष बीत चुके हैं। 1967 मे शिक्षक दिवस प्रकाशनो की जिस शृंखला का सूत्रपात किया गया था, उसमे अब तक 106 पुस्तकें सामने आ चुकी हैं। सृजन का शतक तो हमने गत वर्ष ही पार कर लिया था, अब हमारी यात्रा दूसरे शतक की ओर है—क्रमबद्ध, गतिमान और पुख्ता। सृजन-यात्रा की इस सफलता पर मैं राजस्थान के शिक्षक साहित्यकारो को बधाई देता हू। मुझे विश्वास है कि अपनी रचनात्मक प्रतिभा और मौलिक ऊर्जा से वे पीढी को सस्कारित करने और मानव प्रकृति को परिष्कृत करने मे कामयाब होगे।

शिक्षक साहित्यकारों की इन कृतियो को राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता और सराहना मिली है। अपने प्रकाशनो मे हमने विविधता और गुणवत्ता दोनो पर ही ध्यान दिया है तथा देश के प्रतिष्ठित साहित्यकारो से उनका सम्पादन करवाकर उन्हे हर दृष्टि मे स्तरीय बनाने का प्रयास भी किया है। जाहिर है कि उच्चकोटि के सम्पादन के कारण ऐसी रचनाए ही निखर कर सामने आई हैं जो युग की रचनात्मक सवेदना को सार्थक अभिव्यक्ति दे सकें।

साहित्य-लेखन अपने आप मे एक अनुष्ठान है। यह सत्य तक पहुचने की मनुष्य की ललक का एक ऐसा यज्ञ है जिसमे क्षर न होने वाले 'अक्षर' की तथा चिरन्तन 'शब्द' की पूजा होती है। शब्द की यह अनुगूज ही युग की अनुगूज है। वर्तमान को सस्कारित करके एक आस्थावान उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करना ही इसका लक्ष्य है। मुझे आशा है कि हमारे शिक्षक साहित्यकार इस कसौटी पर खरे उतरेंगे।

गत वर्ष के आमुख मे मैंने एक सुझाव दिया था। मैंने कहा था कि "साहित्य की सभी विधाओ मे गति के साथ लिखने वाले कलम के धनी अध्यापकगण शिक्षक दिवस योजना के तहत प्रकाशित होने वाली पाच पुस्तको की अगली कडी को इतना स्तरीय बनायें कि उनकी रचनाओ पर राज्य के विद्यालयो मे और साहित्य-सस्थाओ मे गोष्ठिया आयोजित की जाए। इसके लिए वे अभी से प्रयत्न मे लग जायें ताकि अगले वर्ष के प्रकाशनों मे उनकी वर्ष के दौरान लिखी गई प्रतिनिधि रचनाए ही प्रकाश मे आयें।" आशा है इस वर्ष की पाचों पुस्तकें इस कसौटी पर खरी उतरेंगी तथा साहित्यिक चर्चा का एक ऐसा माहौल बनेगा जो लेखकों और पाठको के बीच मे एक सार्थक संवाद सिद्ध हो सकेगा।

सम्पादकीय

गद्य लेखन कठिन कार्य है। 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' संस्कृत की बड़ी प्रसिद्ध उक्ति है। कविता की सहायता के लिए, ध्वनि, अलकार, तुक, ताल, छन्द सभी हाथ जोड़कर खड़े रहते हैं, जबकि गद्य कई प्रकार के बन्धनों में जकड़ा होता है। कविता के लिए व्याकरण का बन्धन यत्र-तत्र ढीला हो सकता है, शब्दों की वर्तनी में आवश्यकतानुसार छूट मिल सकती है, पर गद्य को ये सुविधाएं सुलभ नहीं होती। गद्य से हम उम्मीद करते हैं कि वह सहज-स्वाभाविक भी हो और सर्जनात्मक भी, उसमें व्यावहारिक गद्य की पूरी औपचारिकता भी हो और लालित्य भी। सहज और विश्वसनीय, सटीक और प्रामाणिक, सक्षिप्त और प्राजल बने रहना गद्य की नियति है। अत यदि आचार्यों ने गद्य को कवियों की कसौटी कहा है तो इसमें कोई अनौचित्य नहीं।

गद्य साहित्य आधुनिकता की देन है। यो आधुनिक युग के आगमन के पूर्व गद्य साहित्य का सर्वथा अभाव नहीं था, पर वर्चस्व कविता का ही था जो छन्द-बद्ध होती थी। ससार की सभी भाषाओं में आधुनिक युग के आविर्भाव के बाद ही गद्य साहित्य का बहुमुखी विकास हुआ। भारतीय भाषाएं भी इसका अपवाद नहीं हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में किसी भी भारतीय भाषा में उपन्यास, कहानी, ललित निबन्ध, एकाकी, व्यग्य, रेखाचित्र, सस्मरण, रिपोर्ताज आदि का आविर्भाव नहीं हुआ था। पर आज इन विधाओं की धूम मची हुई है। विगत सौ-सवा सौ वर्षों में हिन्दी में इन विधाओं की पर्याप्त प्रगति हुई है। राजस्थान के हिंदी लेखकों का भी इस प्रगति में महत्त्वपूर्ण योगदान है। यह सकलन इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण प्रयास है।

राजस्थान सरकार का शिक्षा विभाग इस बात के लिए बधाई का पात्र है

कि सन् 1967 में ही असम राज्य के गुवाहाटी [illegible] की मांग
प्रतिभा को पहचान दी और इस प्रकाशन माला के लिए उन्हीं रचना
संकलन प्रकाशित करता आ रहा है। इस योजना के अंतर्गत अब तक 106 पु
प्रकाशित हो चुकी हैं, जो इस बात का परिचायक है कि लिखना केवल श
ही नहीं करना, वरन् मौलिक चिन्तन और कला सर्जन भी होता है।

विविध गद्य विधाओं का यह संकलन भी पूर्वांचल के लिखक-लेख
गंभीर चिन्तन क्षमता और सर्जनात्मक मानस का परिचय देता है। इसमें उप
कहानी और पूर्वोत्तर भारत को छोड़कर अन्य प्रायः सम्पूर्ण गद्य वि
को स्थान [illegible] की गयी है। कहानी को सबसे अधिक स्थान प्राप्त हुआ
है। पर कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि समकालीन सामाजिक-राजनी
पारिवारिक विसंगतियों का उद्घाटन में कोई दूसरी विधा इतनी सक्षम नहीं
सकती।

कहानी रचनाओं के बाद संख्या की दृष्टि से इस संकलन में दूसरे स्थान
लघु कथाएं हैं। लघुकथा हिन्दी में उभरती हुई एक नयी विधा है, जो अपनी ल
और पैनेपन के कारण आज विशेष लोकप्रिय हो रही है। यह सुखद आश्चर्य
बात है कि शिक्षक रचनाकारों ने इस अपेक्षाकृत नयी विधा को भी अपनाया
और इसमें उन्हें अच्छी सफलता मिली है।

कहानी रचनाओं तथा लघुकथाओं के अतिरिक्त प्रस्तुत संकलन में ल
निबन्ध, वैचारिक और आलोचनात्मक निबन्ध, यात्रा-वर्णन, रेखाचित्र, संस्मर
एकांकी, आदि भी संकलित हैं। इस प्रकार प्रस्तुत संकलन विविध गद्य विधा
का सही प्रतिनिधित्व करता है। यह सही है कि संस्मरण और रेखाचित्र विधा
की श्रेष्ठ रचनाएं इस संकलन में नहीं है, पर जो हैं वे सर्वथा निराश करने वाल
नहीं है। हम आशा करते हैं कि इस प्रकार के आगामी संकलनों में हमारे शिक्ष
बन्धु इन विधाओं को अपनी संवेदना और सर्जन-क्षमता से समृद्ध बनाएंगे।

विविध विधाओं की रचनाओं का संकलन सम्पादित करना तनिक मुश्कि
काम है। यह मुश्किल तब और बढ़ जाती है जब अभीष्ट संकलन की पृष्ठ-संख्य
पूर्व निर्धारित हो और अधिकाधिक रचनाकारों और विधाओं को प्रतिनिधित्
भी देना हो। जिस विशेष उद्देश्य से यह योजना लागू की गयी है, उसे देखते हु
ये सीमाएं सर्वथा उचित भी हैं। पर इन सीमाओं के भीतर 115 लेखकों क
लगभग 150 रचनाओं से केवल 144 मुद्रित पृष्ठों के लिए सामग्री का चयन
करना, वह भी अत्यन्त अल्पकाल में, कितना मुश्किल काम है, इसे भुक्तभोगी ही

बता सकते हैं। श्रेष्ठ रचनाओं के चयन में सम्पादक का विवेक ही अन्तिम निर्णायक होता है, पर वह हमेशा भरोसेमन्द होता है, इसका दावा नहीं किया जा सकता। सम्पादक अधिक से अधिक अपनी साहित्यिक तटस्थता और ईमानदारी का आश्वासन दे सकता है। इस संकलन के सम्पादक के नाते मैं शिक्षक-लेखक बन्धुओं से यही निवेदन कर सकता हू कि रचनाओं के चयन में मैंने अपने अब तक अर्जित साहित्यिक विवेक, तटस्थता और ईमानदारी का भरपूर परिचय दिया है। यदि संकलन में कुछ कमज़ोर रचनाएं दिखाई दें, तो इसका कारण अधिकाधिक लेखकों और विधाओं को प्रतिनिधित्व प्रदान करना ही है। हमने इस संकलन में किसी एक लेखक की एकाधिक रचनाओं को, उनकी श्रेष्ठता असन्दिग्ध होने पर भी, स्थान नहीं दिया है। पर मैं पूरी तरह आश्वस्त हू कि विविध विधाओं को प्रतिनिधित्व देने की मजबूरी में कोई प्रथम श्रेणी की रचना संकलित होने से रह नहीं गयी है।

इस संकलन में जो रचनाएं स्थान पाने में समर्थ हुई हैं उनकी श्रेष्ठता स्वतः प्रमाणित है। ये रचनाएं लेखकीय संवेदना, अनुभव, चिन्तन, शिल्प और भाषिक सर्जनात्मकता की दृष्टि से स्तरीय हैं। जो रचनाएं संकलन में स्थान नहीं पा सकीं हैं वे भी लेखकों की सम्भावनाओं के प्रति आश्वस्त करने वाली हैं। केवल ज़रूरत है थोड़े और अभ्यास की, भाषा में निखार की और अनुभव की संवेदनशीलता तथा चिन्तन की प्रखरता की। मुझे विश्वास है कि जिन लेखकों की रचनाएं इस संकलन में स्थान नहीं पा सकी हैं, वे आगामी संकलनों में अवश्य ही स्थान पा सकेंगी।

साहित्यिक लेखन के लिए कोई पेटेण्ट नुस्खा नहीं हो सकता। लेखक की अपनी संवेदना, अनुभव, चिन्तन और विवेक ही उसके एकमात्र मार्गदर्शक हो सकते हैं। संपादन के अपने यत्किंचित् अनुभव के आधार पर मैं नये लेखक बंधुओं को मात्र यही सलाह दे सकता हू कि वे अपने लेखन के स्वयं ही आलोचक भी बनें। स्वयं की कठोर आलोचना ही व्यक्ति को अच्छा लेखक बनाती है। मेरी सलाह मानें तो कोई भी रचना तब तक प्रकाशन के लिए न भेजें जब तक आपका आलोचक उसकी अनुमति न दे। जहा तक भाषिक दक्षता का प्रश्न है, उसके लिए एकमात्र सहायक श्रेष्ठ साहित्य का निरन्तर अध्ययन ही हो सकता है। आप कभी भी अपने प्रथम लेखन को अन्तिम न समझें। जो लिखें उसे एक-दो दिन बाद पैनी आलोचनात्मक दृष्टि से देखें, जैसे आप अपने छात्रों की अभ्यास पुस्तिकाओं को देखते हैं, अनावश्यक और अनुल्लेखनीय को निर्ममतापूर्वक काट दें, पुनरावृत्ति से बचें और अपने द्वारा प्रयुक्त प्रत्येक शब्द के औचित्य की निर्ममतापूर्वक जांच कर लें। अच्छे गद्य लेखन के लिए ये नुस्खे आजमाये जा सकते हैं।

है, पुस्तकालय दरिद्र है, विद्यालयों के भवन अपर्याप्त और जर्जर अवस्था में है, छात्रों के शारीरिक विकास के लिए खेल-कूद की व्यवस्था नगण्य है। यदि यही मानव संसाधन का विकास है, तो फिर ह्रास किसे कहेंगे ? इस संकलन में शामिल रचनाओं से इस तथ्य की पुष्टि होती है। पर इससे यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि इन रचनाओं में किसी राज्य-विशेष, विशेषत राजस्थान की शिक्षा-व्यवस्था के प्रति असन्तोष, नाराजगी और व्यंग्य अभिव्यक्त हुआ है। वस्तुत ये रचनाएं पूरे देश की शिक्षा व्यवस्था के ह्रास की ओर अंगुली निर्देश करती हैं। यह ह्रास बिहार और उत्तर प्रदेश में अपने चरम पर है पर धीरे-धीरे सारा देश इसकी लपेट में आ रहा है और समय रहते यदि इसे रोका नहीं गया तो इसके भयानक दुष्परिणाम निकल सकते हैं। साहित्य यदि समाज का दर्पण और दीपक है तो इस संकलन की रचनाएं इस तथ्य को सम्यक् प्रतिपादित करती है।

संकलन की व्यंग्य रचनाओं का दूसरा प्रमुख विषय पत्नियां हैं। आज यह आम धारणा बन गयी है या बनती जा रही है कि भारतीय समाज में पत्नियों की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। पर इस संकलन की रचनाओं में जो तथ्य ध्वनित होता है वह इस प्रचलित धारणा का समर्थन नहीं करता। मैं स्वयं भी इस प्रचलित या प्रचारित धारणा में विश्वास नहीं करता। मध्यवर्गीय भारतीय परिवारों में पत्नियों का स्थान उतना नगण्य नहीं होता जितना प्राय समझा जाता है। इस दृष्टि से इस संकलन की रचनाएं हमें इस विषय पर नये ढंग से सोचने को प्रेरित करती हैं।

इसके साथ ही इन रचनाओं में लेखकीय चिन्तन के अनेक स्तर उद्घाटित हुए हैं। शिक्षा जगत के यथार्थ के साथ-साथ पारिवारिक सम्बन्धों, पर्यावरण और दवाओं में प्रदूषण तथा मिलावट की प्रवृत्तियों, दफ्तरों में भ्रष्टाचार की नग्नता, कवि सम्मेलनों की विसंगतियों, दूरदर्शन से जुड़ी आधुनिक मानसिकता, भविष्यवाणियों की व्यर्थता आदि जीवन के अनेक पक्ष इन रचनाओं में उभरे है। आलोचनात्मक और वैचारिक निबन्धों में लेखकों का साहित्य-विवेक और समझदारी प्रकट हुई हैं। इस प्रकार ये रचनाएं शिक्षक-रचनाकारों के अनुभव वैविध्य, चिन्तन की गम्भीरता और गहरी संवेदनशीलता की परिचायक हैं।

संकलन, अन्तत कैसा बन पड़ा है, इसका निर्णय पाठक और विशेषत राजस्थान के शिक्षक बन्धु ही करेंगे। पर मैं इस बात से आश्वस्त हू कि इससे शिक्षकों और प्रतिभाशाली छात्रों को गद्य लेखन की प्रेरणा मिलेगी। यह संकलन संकलित लेखकों के लिए दर्पण है और असंकलित लेखकों के लिए चुनौती। मुझे विश्वास है ये दोनों बातें भावी गद्य लेखन के लिए स्वास्थ्यवर्द्धक होंगी।

मैं राजस्थान के शिक्षा विभाग के अधिकारियों के प्रति आभार व्यक्त करता

सबसे अधिक कठिनाई मुझे इस संग्रह के शीर्षक के चुनाव में हुई है।
बताया जा चुका है, अनेक वर्षों से राजस्थान सरकार की एक विशिष्ट योज
अन्तर्गत इस प्रकार के गद्य संकलन प्रकाशित किये जा रहे हैं। मेरे पूर्ववर्ती सपा
ने अब तक अच्छे-अच्छे सारे शीर्षक चुन लिये हैं। मेरे लिए समस्या हो गयी है
इस संकलन को कौन-सा सटीक शीर्षक दूं? क्या इसे 'बूंद-बूंद सागर' कहूं, क्यों
इसमे छोटी-छोटी रचनाओ ने मिलकर संकलन का रूप दिया है, या इसे 'अनुभव
के स्फुलिंग' कहूं, क्योंकि इन रचनाओ मे राजस्थान के शिक्षकों के तप्त अनुभव
स्फुलिंग के रूप में प्रकट हुए है। और भी कई शीर्षक सुझाये जा सकते हैं, मसलन
'संवेदना के फूल', 'अनुभव के रंग', 'आक्रोश के अंकुर', 'रेत पर पांव', 'दर्द की
रेखाए', आदि। पर मैं इनमे से 'अनुभव के स्फुलिंग' को ही प्राथमिकता दे रहा
हूं। कारण यह है कि इस संकलन की रचनाओ मे राजस्थान के शिक्षको और
शिक्षण से जुड़े कर्मचारियो के रोज-रोज के अनुभव अपनी समस्त पीड़ा, आग और
विद्रोह के रूप मे व्यक्त हुए हैं। ये सचमुच ही जलते हुए अनुभव के स्फुलिंग है
जो समकालीन, चतुर्दिक, यथार्थ की भट्ठी से निकले हैं।

इस संकलन की रचनाओ के सारे लेखक शिक्षक या शिक्षा से सक्रिय रूप से
जुड़े कर्मचारी है। स्वाभाविक है कि इनमे कथ्य के रूप मे वर्तमान शिक्षा जगत का
स्वरूप और समस्याए प्रमुख हो। इन रचनाओ से इस बात का तल्ख अहसास होता
है कि हमारी आज की शिक्षा व्यवस्था सर्वनाश के कगार पर है। सरकार ने
शिक्षा मंत्रालय का नाम बदलकर 'मानव संसाधन विकास मंत्रालय' रखा है। पर
आज जिस तेजी से शिक्षा पतन की ओर अग्रसर हो रही है उसमे यह नामकरण
एक व्यंग्य की तरह प्रतीत होता है। इन रचनाओ से आधुनिक शिक्षा जगत् की
ह्रासशीलता की नयी तस्वीर उभरती दिखाई पड़ती है। विद्यार्थी स्कूलो मे पढ़ने
पर ध्यान देने के बजाय गुंडागर्दी मे दक्षता हासिल कर रहे हैं। परीक्षाओ मे नकल
आम बात हो गयी है। नकल रोकने वाले शिक्षक पीछे जा रहे है। कभी-कभी
...जान से भी हाथ धोना पड़ रहा है। फलत शिक्षक धीरे-धीरे उदासीन हो
रहे हैं और इसकर छात्रो को नकल की छूट दे रहे है। शिक्षक भी अपने कर्तव्य के
प्रति जागरूक नहीं है। उनमे भ्रष्टाचार प्रवेश कर गया है। अधिकतर शिक्षक
...अध्यापन या पढ़ाने में रुचि नहीं लेते। उनमे अन्य तरीको से पैसा कमाने
की प्रवृत्ति अधिक प्रमुख हो गयी है।

...शिक्षकों की नियुक्तियां, उनकी सेवाओ का पुष्टीकरण और उनके
...करण, सभी जिस आधार पर हो रहे हैं, उससे हम परिचित है। सरकार
...कम-से-कम धनराशि खर्च करना चाहती है, इसस देश की शिक्षा मे
...पैदा नहीं हो रहा, जिसकी हम आशा रखते हैं। शिक्षा मे अगताप

है, पुस्तकालय दरिद्र है, विद्यालयों के भवन अपर्याप्त और जर्जर अवस्था में है, छात्रों के शारीरिक विकास के लिए खेल-कूद की व्यवस्था नगण्य है। यदि यही मानव संसाधन का विकास है, तो फिर ह्रास किसे कहेंगे? इस संकलन में शामिल रचनाओं से इस तथ्य की पुष्टि होती है। पर इससे यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि इन रचनाओं में किसी राज्य-विशेष, विशेषत राजस्थान की शिक्षा-व्यवस्था के प्रति असन्तोष, नाराजगी और व्यंग्य अभिव्यक्त हुआ है। वस्तुत ये रचनाए पूरे देश की शिक्षा व्यवस्था के ह्रास की ओर अगुली निर्देश करती हैं। यह ह्रास विहार और उत्तर प्रदेश में अपने चरम पर है पर धीरे-धीरे सारा देश इसकी लपेट में आ रहा है और समय रहते यदि इसे रोका नहीं गया तो इसके भयानक दुष्परिणाम निकल सकते हैं। साहित्य यदि समाज का दर्पण और दीपक है तो इस संकलन की रचनाए इस तथ्य को सम्यक् प्रतिपादित करती हैं।

संकलन की व्यंग्य रचनाओं का दूसरा प्रमुख विषय पत्नियां हैं। आज यह आम धारणा बन गयी है या बनती जा रही है कि भारतीय समाज में पत्नियों की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। पर इस संकलन की रचनाओं में जो तथ्य ध्वनित होता है वह इस प्रचलित धारणा का समर्थन नहीं करता। मैं स्वय भी इस प्रचलित या प्रचारित धारणा में विश्वास नहीं करता। मध्यवर्गीय भारतीय परिवारों में पत्नियों का स्थान उतना नगण्य नहीं होता जितना प्राय समझा जाता है। इस दृष्टि से इस संकलन की रचनाए हमें इस विषय पर नये ढंग से सोचने को प्रेरित करती हैं।

इसके साथ ही इन रचनाओं में लेखकीय चिन्तन के अनेक स्तर उद्घाटित हुए हैं। शिक्षा जगत के यथार्थ के साथ-साथ पारिवारिक सम्बन्धों, पर्यावरण और दवाओं में प्रदूषण तथा मिलावट की प्रवृत्तियों, दफ्तरों में भ्रष्टाचार की नग्नता, कवि सम्मेलनों की विसगतियों, दूरदर्शन से जुड़ी आधुनिक मानसिकता, भविष्य-वाणियों की व्यर्थता आदि जीवन के अनेक पक्ष इन रचनाओं में उभरे हैं। आलोचनात्मक और वैचारिक निबन्धों में लेखकों का साहित्य-विवेक और समझदारी प्रकट हुई है। इस प्रकार ये रचनाए शिक्षक-रचनाकारों के अनुभव वैविध्य, चिन्तन की गम्भीरता और गहरी संवेदनशीलता की परिचायक हैं।

संकलन, अन्तत कैसा बन पड़ा है, इसका निर्णय पाठक और विशेषत राजस्थान के शिक्षक बन्धु ही करेंगे। पर मैं इस बात में आश्वस्त हूं कि इससे शिक्षकों और प्रतिभाशाली छात्रों को गद्य लेखन की प्रेरणा मिलेगी। यह संकलन संकलित लेखकों के लिए दर्पण है और असंकलित लेखकों के लिए चुनौती। मुझे विश्वास है ये दोनों बातें भावी गद्य लेखन के लिए स्वास्थ्यवर्द्धक होंगी।

मैं राजस्थान के शिक्षा विभाग के अधिकारियों के प्रति आभार व्यक्त करता

अनुक्रम

हास्य व्यंग्य

ललित निबन्ध

यात्रा वर्णन

रेखाचित्र

नाटक

डायरी

लघुकथा

वैचारिक और आलोचनात्मक निबन्ध

लेख/निबन्ध

दुनिया के पतियो, एक हो !

जगदीश प्रसाद सैनी

दुनिया के पतियो ! गृहस्थी के दीपक की बत्तियो ! खुद जलकर भी घर भर को सुगन्धित रखने वाली अगरबत्तियो ! आज घर-घर मे पति नामधारी जीव की जो दुर्गति हो रही है, उससे आप सभी परिचित है । जो कभी आर्यपुत्र कहलाता था वह आज महज कार्यपुत्र होकर रात-दिन इशारो पर नाचने को बाध्य हो गया है। जो कभी प्राणपति हुआ करता था वह अब ओठाण पति होकर जूठे बर्तनो से जूझता रहता है। सदियो से जिसे पत्नियो ने पति-परमेश्वर के नाम से जाना है वही आज दूध की मक्खी और गृहस्थी की चक्की का दाना है। इस प्रकार हमारी गौरवशाली प्राचीन पति-संस्कृति आधुनिक पतियों के हाथों मे पडकर पतन को प्राप्त होती जा रही है। आज पतित्व पर सकट के काले बादल मडरा रहे हैं। उनमे से पत्नी रूपी बिजलिया कडकडाकर टूटी पड रही हैं। घनघोर ओलावृष्टि से अपनी गजी चांदो को बचाना है तो अपने सारे भेद-भाव भूलकर एक हो जाओ। जैसे अकेला चना भाड नहीं फोड सकता वैसे ही अकेला पति पत्नी से राड मोल नहीं ले सकता। उधर देखो न। अपने स्वार्थों के लिए तमाम पतितन्त्र विरोधी शक्तिया हमारी श्रीमतीजी के नेतृत्व मे एकजुट और सगठित होती जा रही है।

अभी कल ही की तो बात है। हमारी श्रीमतीजी ने नारी जागरण सघ का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न कराया है। उद्घाटन समारोह मे मुख्य अतिथि के बहाने हमे भी घसीट ले गयीं। वहा जो कुछ हुआ उसे देखकर बिल्कुल भी शक नहीं रहा कि गृहस्थी के क्षेत्र मे समग्र क्रान्ति का बिगुल बज गया है। सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव पारित किया गया कि आगे से लडकिया बरात लेकर लडके के यहा जाया करेंगी। लडके के मा-बाप को न केवल बरात की खातिरदारी करनी पडेगी

बल्कि मुहमागा दहेज भी देना पडेगा। लडके को सोलह शृगार कर गठजोड़ा बाधे लडकी के पीछे-पीछे चलते हुए उसके घर आना होगा और 'घरह जवाई लों' अपना मान घटाकर आजीवन वही रहना होगा बशर्ते कि उसे कम दहेज लाने की वजह से कैरोसीन छिडककर पहले जला न डाला जाये।

इस बात पर वक्ताओ (वक्ताणियो) ने तीव्र आक्रोश व्यक्त किया कि साला जैसे तुच्छ जीव से भी नारी को वचित कर दिया गया। कहा गया कि हमारे भाइयो को तो पति साला कहे और अपने भाइयो को हमसे देवर कहलवायें। भला यह कहा का न्याय ? 'देवर' शब्द को शब्दकोष से हटाना होगा क्योकि यह एक बुर्जुआ सस्कृति का शब्द है। मानव मात्र समान हैं अत सबके साले होंगे। पति हमारे भाइयो को साला कहेगे तो हम भी उनके भाइयो को साला कहेंगी। इस बात पर भी सख्त एतराज किया गया कि पत्निया अपने पति के उपनाम को चिपकाकर श्रीमती गुप्ता, श्रीमती वर्मा आदि क्यो कहलाती हैं ? इसके विपरीत पतियो को उनकी पत्नियो के नामो से पहचाना जाना चाहिए—श्रीमता अरोडा, श्रीमता मीरचन्दानी, श्रीमता त्यागी आदि। इतना ही नही, यहा तक कहा गया कि पत्निया ही अपनी माग मे सिन्दूर क्यो भरे ? पतियो को भी अपनी मूछो के बीच की माग मे सिन्दूर भरना चाहिए। आगे हमारी सहन-शक्ति जवाब दे गयी सो उठकर चले आये इसलिए कुछ नही कह सकते कि और क्या-क्या कहा गया। सभवत यह भी कहा गया होगा कि स्त्री को नारी कहा जाता है तो पुरुष को नर कहकर ही क्यो छोडा जाए ? उसे भी नारा कहा जाना चाहिए।

इसलिए हे पति परमेश्वरो, अपनी आन-बान और शान के रक्षार्थ कुछ करो। पत्नियो की इस अति के खिलाफ पतियो मे जागृति आवश्यक है—

जागो फिर एक बार।
मत हो हलाल।
काल ने छीना है सम्मान,
पूजते चरण
उन्ही हाथो ने पकडे कान।
क्यो न हो रे उदास ?
चरणो की दासी के
बन गए चरणदास।
यह भी क्या जीवन है—
ज्यो सडता अचार,
जागो फिर एक बार।

दोस्तो, आज पति की रत्ती भर भी कदर नही रह गई है। पर को

नग

क मुँहमांगा दहेज भी देना पड़ेगा। लड़के को सोलह शृंगार कर गठजोड़ा बांधे
दमी के पीछे-पीछे चलते हुए उसके घर आना होगा और 'घरजवाई सो'
पना मान घटाकर आजीवन वहीं रहना होगा बशर्ते कि उसे कम दहेज लाने की
जह से कैरोसीन छिड़ककर पहले जला न डाला जाये।

इस बात पर वक्ताओं (वक्ताणियों) ने तीव्र आक्रोश व्यक्त किया कि साला
जैसे तुच्छ जीव से भी नारी को वंचित कर दिया गया। कहा गया कि हमारे
भाइयों को तो पति साला कहें और अपने भाइयों को हमसे देवर कहलवायें।
भला यह कहां का न्याय? 'देवर' शब्द को शब्दकोष से हटाना होगा क्योंकि यह
एक बुर्जुआ संस्कृति का शब्द है। मानव मात्र समान हैं अत: सबके साले होंगे।
पति हमारे भाइयों को साला कहेंगे तो हम भी उनके भाइयों को साला कहेंगी।
इस बात पर भी सख्त एतराज किया गया कि पत्नियां अपने पति के उपनाम को
चिपकाकर श्रीमती गुप्ता, श्रीमती वर्मा आदि क्यों कहलाती हैं? इसके विपरीत
पतियों को उनकी पत्नियों के नामों से पहचाना जाना चाहिए—श्रीमता अरोड़ा,
श्रीमता मीरचन्दानी, श्रीमता त्यागी आदि। इतना ही नहीं, यहां तक कहा गया
कि पत्नियां ही अपनी मांग में सिन्दूर क्यों भरें? पतियों को भी अपनी मूंछों के
बीच की मांग में सिन्दूर भरना चाहिए। आगे हमारी सहन-शक्ति जवाब दे गयी
सो उठकर चले आये इसलिए कुछ नहीं कह सकते कि और क्या-क्या कहा गया।
संभवत यह भी कहा गया होगा कि स्त्री को नारी कहा जाता है तो पुरुष को नर
कहकर ही क्यों छोड़ा जाए? उसे भी नारा कहा जाना चाहिए।

इसलिए हे पति परमेश्वरो, अपनी आन-बान और शान के रक्षार्थ कुछ करो।
पतियों की इस अति के खिलाफ पतियों में जागृति आवश्यक है—

जागो फिर एक बार।
मत हो हलाल।
वाम ने छीना है सम्मान,
पूजते चरण
उन्हीं हाथों ने पकड़े कान।
क्यों न हो रे उदास?
चरणों की दासी के
बन गए चरणदास।
यह भी क्या जीवन है—
ज्यों सड़ता अचार,
जागो फिर एक बार।

दोस्तो, आज पति की रत्ती भर भी कदर नहीं रह गई है। घर को

रने की स्थिति मे हैं या नही। यदि नही, तो वे आज मे ही अपनी माशूकाओं से तियाना छोड उन्हें लतियाना शुरू कर दें। चोरी-चोरी अब तक जिस प्रेम की ारी में बधे हुए थे उसे एक झटके से तोड कर नये सिरे से डोरे डालना चालू कर । डोरे डालने की कला मे नितान्त कोरे छोरे भी इस बात का ध्यान रखें कि र्फ गोरे गात से ही बात नही बनेगी। चेहरे-मोहरे को भेदकर उनकी नजरें ोटो के बोरे पर भी जानी चाहिए।

अत मे हर जोर-जुल्म की टक्कर में हमारा एक ही नारा है—दुनिया के नियो, एक हो। तुम कुछ नहीं खोओगे, सिवा अपनी दुर्गति के। बोलो पति रता—जिन्दाबाद! □

और बृहस्पति, स्थूलपति और सूक्ष्मपति—ये सब तो सिर्फ बानगी है । सबके भीतर
एक ही पति समाया हुआ है । इस इस तथ्य को पहचान कर उनका विकास करना
है । सभी दलों के पतियों का निष्पक्ष चिन्तन मनन न भी हो तो उनका एक
संयुक्त मोर्चा अवश्य गठित कर लिया जाए । सब पति अपने 'अधिकारों' बनाएं
जाए जो सबल अभियान चलाया जाए । 'सत्याग्रह' और 'विरोधाभास' के प्रहार से जिन
पतियों की खोपड़ी का कल्याण हो जाए उनकी मरहमपट्टी की व्यवस्था के लिए
'पति कल्याण कोष' गठन किया जाए ।

इसके अतिरिक्त पतियों को अपने आचार और व्यवहार में भी आमूलचूल
परिवर्तन लाना होगा । पति को नाटे एवं स्मार्ट होने के साथ ही नीट एवं क्लीन
भी होना चाहिए । हीनभाव से वह कितना भी छोटा हो सकता है पर उसे पूरा
न होकर 'गलगोचा' या 'दूल्हा' होना चाहिए । पत्नी को घर से बेदखल करने के
लिए आवश्यकतानुसार मां-बाप की मदद भी ली जा सकती है । निम्न सूत्र उठा-
कर उन्हें अपनी माताओं और पिताओं को इस सब का जाप करवाना चाहिए—

बहू तो ऐसी चाहिए गऊ की जैसा सुभाय ।
जो पय दे तो पूजिए, नहीं तो मार भगाय ।

हर क्षेत्र के पतियों को अपना-अपना मोर्चा सावधानी से संभालना है ।
असली पति पत्नी को 'ताड़न की अधिकारी' मानकर उसकी हड्डी-पसली एक
करते रहें । नकली या जाली पति अपना जाल फैलाकर नित नई दुल्हनें फंसाते
रहें । गाली पति नवीन तथा मौलिक गालियों के कोश की रचना करें ताकि अन्य
पति भी लाभान्वित हो सकें । खाली पति पत्नियों की कमाई से बोतलें खाली करने
के पुनीत कार्य में अधिकाधिक प्रगति लाएं । लखपति करोड़पति और करोड़पति
अरबपति बनने के लिए काला बाजारी, मिलावट, कर चोरी और भ्रष्टाचार के
सारे पूर्व रेकार्ड तोड़ने की कोशिश करते रहें । मलपति मल को शिरोधार्य करं
रहें और हलपति हलाल होते रहे । चलपति खाना खाते ही थाल में उंगली डाल
कर चुपचाप चल दें और अचलपति इस कदर समाधिस्थ हो जाए कि घर में चो
घुस आये तो भी टस से मस न हो । मचलपति और अधिक दहेज के लिए मचल
रहें और ढलपति अपनी सुस्ती दूर करने के लिए योगाभ्यास शुरू कर दें । वनस्प
अपने ऊपर आये संकट से लड़ने के लिए अपने शरीर में चरबी की मात्रा अ
अधिक बढ़ा लें ।

आसन्न भविष्य में पति बनने वाले आशिकों को भी इस अभियान में
नहीं रहना चाहिए । अनजाने में वे अगर किसी को दिल दे बैठे हैं तो कोई
नहीं, अब भी बेटी बाप के ही है । उन्हें देखना यह चाहिए कि उनके बाप,
— जनको उन्होंने अपना दिल दे दिया है उनके बाप, उस दिल की पूरी कीमत

ये भी खूब रही

गोपाल प्रसाद मुद्गल

आए दिन ऐसी अनहोनी, अटपटी, बेतुकी, बेढंग घटनाएं घट जाती हैं जिन्हें देखकर मुंह खुला रह जाता है या हंसी फूट पड़ती है और होंठों से अनायास निकल पड़ता है, वाह भाई ये भी खूब रही।

बस हो या ट्रेन, गली हो या चौराहा, घर हो या बाहर, हर जगह 'यह भी खूब रही' की धूम मची दिखाई पड़ती है। इसके लिए माथा पचाने की जरूरत नहीं। इसके लिए आंखें फाड़ने की भी जरूरत नहीं। न अकल दौड़ाने की जरूरत है और न जेब खाली करने की। हां जनाब जरूरत है तो आंख खुली रखने की, फिर देखिए, 'ये भी खूब रही' की रील घूमने लगती है। कहकहों की धूम मच जाती है।

कल की ही बात है। एक हमारे हमउम्र भरे बाजार में मिले। अपनी धुन में नाक की सीध चले जा रहे थे। हाथ-पाव कीर्तन कर रहे थे। पर लग रहा था मानो हम चौड़े और सड़क सकरी हो। हमने उनको नमस्कार किया। नमस्कार लेकर श्रीमान् मुस्कराये। हमने कहा, "हुजूर आपने तो दार्शनिकों को भी मात कर दिया।" वह चौंके। पूछ बैठे "क्या बात है?" हमने कहा, "जनाव आली अपने पैरों पर तो नजर डाल लेते।" उन्होंने उसी वक्त नजर नीचे घुमाई, एक पाव में नीले और दूसरे पाव में पीले रंग की चप्पल देखकर खुद दंग रह गए। हमने कहा "यार यह भी खूब रही। खैर जो हुआ सो तो हुआ, "बीती ताहि बिसारिए आगे की सुधि ले।" घर से जब चलो तो इत्मीनान के साथ चलो। श्रीमतीजी से अपनी जाच पड़ताल कराकर निकलो या अपने आप अपना हुलिया शीशे में देखकर निकलो। सच मानो, यार पर घड़ों पानी पड़ा। वह भूल गया कि बाजार क्या-क्या सामान लेने आया है। वह लौट पड़ा उसी क्षण उल्टे पाव। घर जाकर

ही दम लिया। अब तो मेरा यार छाछ को भी फूंक-फूंककर पीता है।

एक हमारे मित्र और है, पत्नी भक्त, बेहद मजेदार। चटपटे आलू जैसे जायकेदार हैं। घर बाहर दोनो जगह भीगी बिल्ली दिखाई पड़ते हैं। उनको पिछले इतवार को एक शौक चर्राया। अपनी मैडम से बोले, "आज इतवार है। हम तुम्हारी सेवा करेंगे। तुम रोज हमारे लिए मरती खपती हो। डार्लिंग, आज तुम डबल बैड पर भैंस की तरह पसरो। हम सुबह से, सफाई से लेकर रात के डिनर तक का काम खुद करेंगे। अपने हाथ से चाय बनाकर पिलायेंगे, अपने हाथ से खाना बनाकर खिलायेंगे। हम घर मे समाजवाद लायेंगे। असमानता मिटायेंगे। जो कहेंगे वह करके दिखायेंगे।"

उनकी भारी भरकम पत्नी ने उन्हें काफी समझाया। पर सींकिया पहलवान की समझ मे कुछ भी नही आया। पत्नी भक्त पिल पड़े झाड़ू लेकर सफाई पर। पर दो-चार हाथ मारे होंगे कि पसीना आ गया। बहाना बनाकर बोले, "डार्लिंग मन कर रहा है पहले आपको चाय पिला दी जाये। हम भी चाय पी लें। शरीर मे करेंट आ जायेगा। काम फटाफट हो जायेगा। झाड़ू को छूते ही सफाई ऑटोमैटिक हो जायेगी।" उनकी घरवाली ने कह दिया, "जो चाहो सो करो, पर टाइम बरबाद मत करो।"

पत्नी भक्त रसोई घर मे गए। चाय के लिए पानी गैस पर रख दिया और आप प्याले साफ करने लगे। प्याले ऐसे साफ करना चाहते थे जिनमे गन्दगी न रहे। उन्हें पता था कि कप के हैंडिल मे गन्दगी रहती है उसी को साफ करने के लिए उन्होंने अंगूठा हैंडिल मे घुसाकर, घुमा-घुमाकर साफ करना चाहा पर मजे की बात यह रही कि अंगूठा हैंडल में घुसा तो दिया पर घुमाना मुश्किल हो गया। घुमा नहीं पाये तो निकालने के लिए बेताब हो गए पर कमाल, वह ऐसा फंसा कि निकलने का नाम ही नही लेता। अंगूठा तो हैंडल में फस कर रह गया।

सींकिया पहलवान ने काफी जोर लगाया। बात बेकाबू हो गई। मैडम को बुलाने में शर्म आ रही थी। आखिर खुद जोर लगाते-लगाते पसीने से लथपथ हो गए, पर अंगूठा हैंडिल मे फस गया। वह गश खाकर गिर पड़े। रसोई के कई बर्तन भी झनझनाकर फैल गए। तब उनकी मैडम की अक्ल में आई, कोई गड़बड़ी है। भागकर रसोई घर में आई तो देखा हजरत रसोई के फर्श पर पड़े हैं। 'कप के हैंडल में अंगूठा फस गया' कहते हुए जनाब रो पड़े। उनकी भैंस छाप मैडम गर्ज कर बोली, "तुमने अंगूठा कप के हैंडल में क्यो फंसा दिया था? क्या उस पर जोर अजमा रहे थे? अरे अंगूठा की वरजिश ही करानी थी तो और भी बहुत-सी जगहे थीं।" वह बिचारे क्या कहते! उनकी मैडम बरसती रही और वे भीगते रहे।

घरवाली ने भी हैंडिल मे अंगूठा निकालने के लिए साबुन तेल लगाया, खूब रगड़ा भी पर कुछ काम नहीं आया। उन्होंने अंगूठा ढीला छोड़ने को भी

कहा पर कप तो अकड़ गया था। मैडम ने अपना माथा ठोक लिया। हैंडिल
पहलवान बोले "मैडम दर्द हो रहा है, हैंडल तोड़ दो।" इस पर तो वह आग
बबूला हो गई, हैंडल तोड़ दूंगी तो पूरा सेट बिगड़ जायेगा और मेरी जिस सहेली
ने यह भेंट दी है उसे किस तरह समझाया जायेगा।"

आखिर भैंस छाप ने ही सुझाव दिया अब अस्पताल चलना होगा। डॉक्टर
ही मामला सुलझाना पड़ेगा। अस्पताल और डॉक्टर का नाम सुनते ही सीकि
पहलवान घबरा गए। खुद चक्कर खा रहे थे, और चक्कर खा गए। टालमटो
करने लगे तो मैडम ने ऑर्डर सुना दिया, "जल्दी करो वर्ना और हाल खराब
जायेगा।" सीकिया पहलवान कपड़े पहनकर चलने लगे तो अंगूठा कप के हैंडिल
फंसा था। ऐसे कैसे जाते। उस पर उन्होंने रूमाल ढंक लिया।

घर से बाहर निकले ही थे कि मिल गए लंगोटिए यार। नमस्कार किया
हाथ मिलाने को हाथ बढ़ाया। पर हाथ कैसे मिलाते, अंगूठा तो फंसा था क
हैंडिल में। अपनी बेवकूफी कैसे समझाते। उनसे कहा, "यार जल्दी में हूं।
मिलूंगा।" आगे चले तो दूसरे मुंहफट यार मिल गए। उन्होंने दोनों हाथ बढ़ा
जबरदस्ती हाथ मिला ही लिया, लेकिन कप के हैंडिल में अंगूठे को फंसा देख
बोले "यार यह क्या माजरा है?" पत्नी भक्त बोले, "कुछ मत पूछो, चलो
अस्पताल चलो, पीछे बात बताऊंगा।"

अस्पताल पहुंचे तो अस्पताल बन्द था। इमरजैन्सी वार्ड में गए तो म
हुआ नर्स लिपस्टिक लगाने में मशगूल थी। उन्हें इमरजैंसी बताई तो उ
समझ में आई। वह आराम से डॉक्टर को बुलाकर लाई। डॉक्टर ने देख
कहा, 'ऑपरेशन थियेटर में ले चलो। मेज पर लिटाओ।' ऑपरेशन थियेटर
नाम सुनते ही सीकिया पहलवान को कंपकंपी छूट गई। अरी मम्मी, अरी म
चिल्लाने लगे। मगर भैंस छाप मैडम के ऑर्डर पर उन्हें ऑपरेशन थियेटर
जाया गया। टेबिल पर लिटाया गया। औजार खटकने लगे। पत्नी भक्त मन
मन रोने लगे। धुकधुकी बढ़ रही थी। उस समय सर्जन आया उसने कुछ सु
और फिर अपना करिश्मा दिखाया।

पत्नी भक्त को जब होश आया तो देखा उनके कप के हैंडल में उनका अं
नहीं था। अंगूठा कटा भी नहीं था। न कहीं खून का निशान था और न
नाखून था। उनके दम में दम आया। राहत पाई। अस्पताल से लौटे। आगे-
बीवी, पीछे-पीछे पालतू कुत्ते की तरह दुम दबाते पत्नी भक्त। घर आते ही
पर पड़ गए और बीवी से बोले, "बहुत देर हो गई एक कप चाय तो पिला दो
घरवाली कह-कहे लगाकर बोली, "वाह यह भी खूब रही, आज तो डार्लिंग
प्यार करने को कहा था, उसकी सेवा करने की कही थी, समाजवाद लाने
कही थी। अब उल्टे बांस बरेली को लद रहे हैं।" सीकिया पहलवान सुनते

और चाय के लिए आख फाड-फाडकर देखते रहे। हा, वह भी मन-ही-मन कहते रहे—'वाह यह भी खूब रही।''

इसी तरह हजारों नजारे बिखरे पडे हैं। कभी अपने बेतुकेपन पर हसी आती है तो कभी दूसरे की करतूत हसा जाती है और कहला जाती है 'यह भी खूब रही।' हा कभी-कभी व्यग्य के रूप मे इसकी मार बडी पैनी होती है। देखिए—हमने पानी लाने के लिए एक अष्ट धातु की टकी बनवाई, उसमे चादी के पाइप लगवाए और सोने की टूटी लगवाई। लेकिन पानी नहीं आया और लोगो के मुख मे अनायास निकल पडा—'ये भी खूब रही।' □

हड़ताल के फायदे

निशान्त

हड़ताल को खामख्वा कोसा जाता है। ध्यानपूर्वक देखा जाए तो इसके कई फायदे हैं। आज हमारे देश मे सबसे बड़ी जरूरत एकता और भाईचारे की है। महासंघ के आह्वान पर सब कर्मचारी एक हो जाते हैं। 'कर्मचारी-कर्मचारी भाई-भाई' के नारो से आकाश गूंज उठता है। कर्मचारियो मे समानता की भावना भर जाती है। कई ग्रेड के कर्मचारी एक ही दरी पर बैठे नजर आते हैं। और तो और इन दिनो ये अफसर अपने मातहत काम करने वाले चतुर्थश्रेणी कर्मचारियो को भी बड़े प्यार से बुलाते हैं।

हड़ताल मे कर्मचारियों को कई लाभ होते हैं। इन दिनों मे कई कमजोर स्वास्थ्य वाले कर्मचारी घर मे बैठकर स्वास्थ्य-लाभ प्राप्त कर लेते हैं। मौसम की भयंकरता यानी सर्दी हो तो तेज सर्दी से और गर्मी हो तो तेज गर्मी से बच जाते हैं। बीमार कम पड़ते हैं। इस प्रकार देश के बीमार आदमियो के आकड़े कम हो जाते है।

आलसी कर्मचारी इन दिनो मे अपने कई दिनो से 'पेण्डिग' पड़े घरेलू काम निपटा लेते हैं। इस प्रकार आलस्य टूटता है। साइड बिजनेस करने वाले कर्मचारियो की तो इन दिनो मे पौ बारह ही समझो। रात-दिन लग करके धधा खूब जमा लेते हैं। जो कर्मचारी लेखक और कवि होते है उन्हे लिखने का समय और मसाला मिल जाता है। इस प्रकार हमारे साहित्य मे वृद्धि हो जाती है। हड़ताल वक्ता-कर्मचारियो को मच प्रदान करती है। इस प्रकार कई भावी नेता तैयार होते हैं कई नेता हड़ताल के बहाने अपनी छवि बना जाते हैं और बाद मे चुनाव जीत जाते हैं।

रग-बिरगे बड़े-बड़े बेनरो और छोटी-छोटी तख्तियो वाले मीलों लम्बे जुलूस

का तो नजारा ही अजब होता है। ढोल पर नाचते कर्मचारियों, नेताओं के पुतलों और 'पिटने' इत्यादि को देखकर जनता दंग रह जाती है। खास करके घरेलू औरतें, जो कभी इतना बड़ा जनसमूह नहीं देख पातीं, घर के दरवाजे पर खड़ी होकर या छत पर चढ़कर खूब मजा लूटती हैं।

जनता जब अपने नेताओं के पुतलों के गले में जूतों की पड़ी माला देखती है, उनके विरुद्ध बेशर्मी की हद तक जाने वाले नारे सुनती है तो उनकी असलियत पहचान जाती है। प्रजातन्त्र में जनता नेताओं की असलियत पहचान जाए, उनसे बेखौफ हो जाए इससे बड़ा फायदा भला और क्या सोचते हैं आप ? अजी और तो और, नेताओं की इतनी 'फजीती' होते देखकर कई लोग तो नेता बनने का इरादा तक बदल लेते हैं।

सरकार को भी हड़ताल में कोई कम फायदे नहीं। सरकार 'काम नहीं तो दाम नहीं' की नीति अपनाती है। इस प्रकार करोड़ों रुपये बचा जाती है। हड़ताल के दौरान जो काम इकट्ठा होता रहता है उसे तो कर्मचारियों को ही निपटाना होता है। बेचारे हड़ताल के बाद जब काम पर जाते हैं तो हाथ धोकर जुट जाते हैं। वैसे भी कई दिनों के बाद काम पर जाते हैं इसलिए उन्हें काम पर प्यार आने लगता है। कर्मचारी को काम में प्यार हो जाये, इससे बड़ा फायदा आप और क्या चाहेंगे ?

हड़ताल की वजह से सरकार को जब-जब वेतन बढ़ाना पड़ता है तो उसका ध्यान अपने खाली पड़े खजाने की ओर जाता है। तब उसे अपने-आप को चुस्त-दुरुस्त करने का ख्याल आता है। कर चोरी और भ्रष्टाचार खत्म करने का ध्यान आता है। अमीरों की अमीरी कम करने का ध्यान आता है। अपना खर्चा घटाने की बात भी कभी-कभी दिमाग में आती है।

सब जानते हैं हड़ताल महंगाई की वजह से होती है। सरकार भी जानती है। इसलिए हड़ताल उसे नसीहत देती है कि वह महंगाई को बढ़ने न दे। हड़ताल जब इस प्रकार का अहसास सरकार को कराती है तो मेरे ख्याल में तो बहुत बड़ा फायदा पहुंचाती है। आपका ख्याल क्या है ? □

गिरगिटी रंग

शीतांशु भारद्वाज

'त्रियाचरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः'—अर्थात् स्त्री के चरित्र और पुरुष के भाग्य का पूर्वानुमान देवता तक नहीं लगा पाते, मनुष्य की तो बात ही क्या है! संस्कृत की यह लोक प्रचलित सूक्ति प्राय: आचार-संहिताओं के निर्माताओं की है। आज के इस संश्लिष्ट जन-जीवन की आपाधापी में इस धारणा का परिहार किया जा सकता है। तकदीर अथवा भाग्य को लेकर हम और इतने भयाकुल हुए जाते हैं कि जब भी कभी हमारे गली-मोहल्ले में लॉटरी के टिकट बेचने वाला अपने किसी माइक से—"लखपति बनो!" की चीख-पुकार मचाया करता है, हम भागकर वहां खड़े हो जाते हैं। यों, तकदीर अपना कर्म ही तो किसी व्यक्ति विशेष को सौभाग्य के निकट लाता है। गीता भी तो निरन्तर कर्म करते रहने का संदेश देती है। अतः भाग्य जैसी अदृश्य बात को छोड़कर यहां हम केवल चरित्र पर ही विचार करेंगे।

आधुनिक साहित्य के विविध आयाम हों अथवा यथार्थ का खुरदरा धरातल, नित्य-प्रति ही तो आपका अनेक चरित्रों से वास्ता पड़ता रहता है। चरित्र जो प्राय: संदिग्ध ही हुआ करते हैं। चरित्र जिनके सम्बन्ध में आप पहले से ही अपने मानस-पटल में कोई भी पूर्वानुमान नहीं लगा सकते। यह पहले से ही कैसे कहा जा सकता है कि कौन, कब, क्या बन जाये! दस्युराज मानसिंह क्रूर होते हुए भी साधु-सन्तों जैसा हृदय रखा करता था। बुरा-से-बुरा आदमी भी न जाने कब संत बन जाये!

लो आइये साहब, आज हम आपको अपने ही आस-पास के कुछ जाने-पहचाने हुए चरित्रों से परिचित करवाते हैं। कौन जाने ये लोग आपके और हमारे बीच हो कहीं छिपे बैठे हों!

आप एक राजपत्रित अधिकारी हैं। हमेशा ही तो अनेक व्यक्तियो मे आपका सम्पर्क बना रहता है। रोजी-रोटी से लेकर चरित्र-सम्बन्धी प्रमाण-पत्र लेने के लिए आपके कार्यालय और निवास-स्थान मे आने-जाने वालो का ताता ही लगा रहता है। अभी-अभी आपकी बैठक मे एक बेरोजगार युवक आया है। आप भी कितने दयालु हैं कि उसके भोले-भाले मुखडे को देखकर ही उस पर द्रवीभूत हुए जा रहे हैं! बेचारा! किन्तु साहब, बेचारा वह नही है। बेचारे तो आप हैं। जानते नहीं कि वह आपके बारे मे क्या-कुछ सोच रहा है? नही? तो साहब, हम आपको उसके मनोभावो से परिचित करवा देते हैं।

इधर आप उस युवक का साधारण-सा परिचय लेने के बाद उससे बात करने लगे हैं और उधर वह मन-ही-मन चोरी की योजना बनाता आ रहा है। उसकी दृष्टि बार-बार आपकी मेज पर रखे हुए कीमती पेन पर जा लगती है। वह तो उसे चुराने के अवसर की ताक मे है।

कौन जाने, जब आप उसे एक हाथ से सच्चरित्रता का प्रमाण-पत्र दे रहे हो, उसका हाथ उस पेन को अपनी जेब के हवाले कर दे। स्पष्ट है कि जब आप उसके नैतिक चरित्र का आकलन कर रहे होते हैं, वह अपनी दुश्चरित्रता का प्रमाण-पत्र दे रहा होता है। देख लिया तो 'ही-ही' और न देखा तो चोरी!

आप अपनी मित्र-मडली के ही चरित्र को देख लीजिए न! उन्हीं मे से आपको दोहरे-तिहरे चरित्र मिलने लगेंगे। आपकी लम्बी-चौडी चमचमाती हुई मेज पर न जाने कितनी बेशकीमती चीजें रखी हुई हैं। आपके मित्र का मन अन्दर-ही-अन्दर डोल रहा है। आपने उन्हे किसी वस्तु को उठाते हुए देख लिया तो वे उसे परिहास का रूप देने लगेंगे। नहीं तो आपकी अनुपस्थिति मे वे उसे गायब तो कर ही सकते हैं। इसलिए हमारे आस-पास जितने भी चरित्र हैं उन सबको सच्चरित्र ही नही कहा जा सकता।

स्थानीय निकाय के कार्यालय मे अनेक बाबू कार्यरत हैं। सामने ही तीसरी कतार की पहली मेज पर जो बाबू साहब बैठे हुए हैं, उन्हें जानते हैं आप? नही? चलिये साहब, हम आपको उनसे भी परिचित करवा देते हैं। यदि आप अपनी याददाश्त पर थोडा-सा भी ध्यान दें तो आपको याद आने लगेगा कि वे तो 'भाई साहब!' हैं। जी हा, ऐसे भाई साहब आपको अनेक कस्बे-शहरों या गावो मे मिल जाया करेंगे। गली मोहल्ले का हर कोई आदमी उन्हे इसी नाम से पुकारा करता है। वे मोहल्ला-सुधार कमेटी के महामन्त्री हैं। किन्तु जब वे घर से कार्यालय को चलते हैं तो अपनी उस सुधारवादी विचारधारा को घर मे ताक पर छोडकर आया करते हैं। यहां तो वे एक-दूसरा ही मुखौटा ओढ़ने लगते हैं। विश्वास न हो तो उनकी मेज के सिरे पर रखे हुए दान-पात्र को देख लीजिये। टीन के रंगे-पुते उस डिब्बे पर एक ओर रेड क्रॉस का चिह्न है तो उसकी दूसरी ओर 'जय माता दी!'

भी लिया हुआ है। दान, रिश्वत, प्राप्त करने का यह वैज्ञानिक तरीका उन्हीं 'भाई साहब' ने ईजाद किया है।

सरकारी कार्यालयों में हर कहीं ही तो आपको नैतिकता की एक तख्ती टंगी हुई दिखाई देती है। "रिश्वत लेना-देना, दोनों ही कानूनी जुर्म हैं।" ठीक है साहब, सरकार और सरकारी कानून इसे अपराध मानते हैं। किन्तु हम-तुम तो नहीं मानते न ! क्यों साहब, आप क्यों पानी-पानी हुए जा रहे हैं ? हम तो जनाब, आप से ही मुख़ातिब है।

उस दिन टाउन हॉल के म्युनिसिपल खजाने की खिड़की पर खड़े-खड़े आप पांच रुपये के नोट की बत्ती बनाये हुए उससे कानों का मैल निकाल रहे थे। आपके उस मैल निकालने के नये तरीके से हम आश्चर्यचकित रह गये थे। जी हां, पिछले महीने की ही तो बात है। हम भी वहां किसी काम से गये हुए थे। तभी एक छोटी घटना घट गयी थी। आपने उस नोट को खिड़की से आगे खिसका दिया था। उसके एवज में आपके हाथ में गुलाबी रंग का चेक था।

—कहिए साहब ? हमने दूर से ही आपको नजरअन्दाज कर लिया था।

आप मुस्कराकर खिड़की से एक ओर हट गये थे। हम खिड़की के माथे पर लटकी रही तख्ती को देखने लगे थे—"रिश्वत लेना-देना, दोनों ही कानूनन जुर्म है।"

—सब चलता है ! कहकर आप ट्रेजरी से बाहर चल दिये थे। और हम उस रिश्वतखोरी पर सोचते ही रह गये थे।

'और, साहब, आप भी तो कम छुपे हुए रुस्तम नहीं हैं ! आप ही कौन-से पाक-साफ हैं ! उस दिन हम आपके पास सीमेंट का परमिट बनवाने गये थे। उस समय आप नगरवासियों से घिरे हुए थे। बहुत मिन्नत करने के बाद ही कहीं हमारी बारी आ पाई थी। हमने आपसे अपना आवेदन-पत्र निकलवा लिया था। आपने उसे एकदम आंखों के पास ले जाकर फरमाया था, माफ कीजिए, हमें तो कुछ भी नहीं दिख रहा है।

आदतन हम दीवार पर टंगी हुई उसी नैतिक तख्ती को देखने लगे थे।

—अजी यह तो अंग्रेजों के जमाने से लटकी चली आ रही है। आप मुस्करा दिये थे, समय के साथ-साथ' ।

हम हतप्रभ रह गये थे।

हमारे मोहल्ले में पंडित सुखराम शर्मा रहा करते हैं। वे भी एक महत्वपूर्ण कार्यालय में काम किया करते हैं। न जाने कब और कैसे वे मोहल्ले भर में 'मक्खनबाज' के नाम से प्रसिद्ध हो आये ! हर कहीं ही तो उनकी चर्चा चलती रहती है। 'मक्खनलालजी' से कहिए, काम चुटकियों में बन जायेगा। हर कोई यहीं कहा करता है।

एक दिन हम भी मक्खनलाल के कार्यालय मे जा पहुचे थे। उस समय वे बडे साहब के चैम्बर के आगे टहलकदमी कर रहे थे। उनकी प्रसिद्धि ने हमें भी तो प्रभावित कर दिया था। हम भी उनके करिश्मे देखना चाहते थे। तो उस दिन मक्खनलालजी का वास्तविक रूप भी देखने को मिल गया। ज्यो ही अन्दर से बडे साहब की घटी बजती, उसके कान चौकन्ने हो जाते। चपरासी भागा-भागा अदर चल दिया था। बरामदा पार कर हम भी उधर ही चल दिये थे।

—क्यो भैया ! ये साहब यहा क्या करते हैं ? हमने बडे साहब के अर्दली को एक कोने मे ले जाकर मक्खनलालजी के बारे मे पूछा था।

—बस साहब, किसी दिन हम में से किसी एक को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा। अर्दली ने दात निपोर दिये थे।

हम सब कुछ समझ गये थे। कहा है न कि समझदार को इशारा ही बहुत होता है।

हमारे गाव मे एक बार कोई नेताजी क्षेत्रीय दौरे पर आये हुए थे। वहा के घीसू भैया राजनीतिज्ञ तो नही, नेताओ के पिछलग्गू जरूर कहे जाते हैं। जब भी किसी नेता का उस ओर आगमन होता है, उनकी अगवानी वही किया करते हैं। गिरगिटी रग बदलने मे वे बहुत चतुर हैं। इसी मे वे दो रोटी खा रहे हैं।

उस दिन भी उस क्षेत्र मे कोई नेताजी दौरे पर आये हुए थे। साथ मे घीसू भैया भी थे। सहसा ही नेताजी के पाव एक तालाब के पास आ ठिठके थे। वह बरसाती पानी का तालाब था। वहा आस-पास का पानी जमा होता था।

—इस सडे हुए पानी से तो आस-पास के इलाके मे मलेरिया फैलता होगा। नेताजी के माथे पर बल पड गये थे।

—हा जी ! घीसू भैया उस पानी को हथेली पर रखकर सूघने लगे थे, आखिर पानी, पानी ही हुआ करता है !

—जी हा। जी हा, ' घीसू भैया झट-से रग बदलने लगे थे, कुछ लोग तो इस पानी को पीने के उपयोग मे भी लाया करते हैं।

'''और, घीसू भैया अजुरि भर-भर कर उस पानी का आचमन करने लगे थे।

आप मक्खनलाल बनिये अथवा किसी के स्तुति गायक और अध-भक्त। कही ऐसा तो नहीं कि आप अपनी स्वार्थपरता में अंधे होकर किसी दूसरे को हानि पहुचा रहे हो ! चापलूसी करना अथवा समय को देखते हुए रग बदलना कोई बुरी बात नही है। हमे तो आपसे केवल यही निवेदन करना है कि आप सरेआम यो अनर्थ न ढाया करें। लेकिन जनाब, हमें न आप पर ही विश्वास है और न ही अपने-आप पर ! न जाने कब और किन परिस्थितियो मे हम-तुम गिरगिटी रग बदलने लगें ! ☐

खूबसूरत बनने की चाह

दीनदयाल शर्मा

बचपन मे न खूबसूरती का खयाल था, न बदसूरती का। लेकिन ज्यों ज्यों उम्र बढ़ी खूबसूरती की महत्ता से वाकिफ होते गये। और तभी से हम खूबसूरती के कायल हैं। खूबसूरत बनने के लिए बड़े पापड़ बेले हैं हमने। मौके-बेमौके अपने आपको खूबसूरत बनाने का अथक प्रयास करते रहे हैं।

सर्दी के मौसम मे सप्ताह मे एक बार नहाना और गर्मी के मौसम मे शैम्पू से रोजाना दो बार नहाना। बालों को बार-बार सजाना-सवारना, मेरी दिनचर्या का मुख्य अंग था यह। मैं अपनी जेब मे एक छोटा-सा कंघा और दर्पण हमेशा रखता। यही नहीं, अपने खास दोस्तों के अलावा नीम-हकीम, वैद्य डॉक्टर सभी से खूबसूरत बनने के नुस्खे पूछता रहता।

एक बार एक साथी ने हमे दाढ़ी रखने का सुझाव दे दिया। साथी दार्शनिक विचारधारा का था। अतः बोला—"दाढ़ी रखोगे तो तुम्हारे व्यक्तित्व मे निखार आयेगा और आत्मविश्वास भी बढ़ेगा।" मैंने सोचा आत्मविश्वास बढ़े न बढ़े, दाढ़ी बढ़ाने से महीने-के-महीने पचास-साठ रुपये तो बचेंगे। कुछ ही दिनों मे दाढ़ी अच्छी खासी बढ़ गई थी।

दाढ़ी बढ़ाने का यह परिणाम हुआ कि छोटे-बड़े सब मुझे अंकलजी कहने लग गये थे। जो कल तक भाई साहब कहते थे और जो साथी मेरा नाम लेकर पुकारा करते थे, वे सब भाई साहब कहने लग गये। श्रीमतीजी दाढ़ी के कारण रोज ताने मारतीं कि—"शहद की मक्खियों का सा छत्ता लिए घूमते रहते हैं। किस मुए ने आपके कान भर दिये कि आप दाढ़ी मे खूबसूरत लगते हैं। मुझे तो आप दाढ़ी के कारण निरे बुद्धू दिखाई देते हैं। न मानो तो शीशा देख लो।"

मैंने महसूस किया कि मैं अपनी दाढ़ी के कारण कम उम्र मे ही बुजुर्ग-सा बन

गया हूं। खैर साहब, 'लेडीज फर्स्ट' को मद्दे नजर रखते हुए मैंने दाढ़ी कटवा ली। लेकिन मूछें यथावत् थी। पत्नी बोली—"नाक के नीचे इन थोड़े से बालो की पंक्ति से आपका क्या तात्पर्य है, नाथ ?" मैंने कहा, "देवी तुम अभी भोली हो—नासमझ हो, नॉन मैट्रिक हो। यदि मैट्रिक होती, सवाल नही करती। नाक आदमी की इज्जत होती है, मेरी गोगोजी! और इज्जत को 'अण्डर लाइन' इसलिए किया है ताकि सनद रहे। वैसे भी बालो की इस पंक्ति को हम मूछ के नाम से पुकारते हैं। मूछों की महिमा अपरम्पार है। स्वय शास्त्र के अनुसार मूछें खूबसूरती मे चार चाद लगाती हैं।"

एक बार मेरे एक मित्र ने मुझे सुझाव दिया कि शैम्पू की बजाए आप अमुक साबुन से नहाया करें। बस उनका सुझाव सुनने की देर थी। मैं वह साबुन पाने को लालायित हो उठा और एक दुकान पर सरपट पहुंच गया। दुकान पर काफी भीड़ थी। लेकिन मैं तो सोच रहा था कि मुझे अपना इच्छित साबुन मिल जावे। दुकान मे तीन-चार नौकर भी थे। एक नौकर ने फरियाद सुनी और झट से सुन्दर-सी साबुन की टिकिया लेकर मैं खुशी खुशी घर पहुंचा।

श्रीमतीजी मेरी आदत से अच्छी तरह परिचित थी। वह कभी साबुन की उस टिकिया को देख रही थी, कभी मेरी आखो मे झाक रही थी। मैं आज बहुत प्रसन्न था। आख का इशारा पाते ही पानी की दो बाल्टिया भर कर श्रीमतीजी ने बाथ-रूम मे रख दीं और मैं दर्पण मे अपने चेहरे को निहारता हुआ 'स्नान-ए-जंग' मे कूद पड़ा, अपनी प्यारी साबुन की टिकिया लेकर। खूबसूरत बनने की लालसा मे खूब मल-मलकर नहाया। साबुन की टिकिया आधी हो चुकी। फिर जैसे ही शरीर पर पानी डाला तो मेरी सारी खुशियां सिमट कर मेरे हाथो मे आ रही थी यानी ज्यो ही मैं अपने सिर के बालो के हाथ लगाता तो वे मेरे हाथ मे आ रहे थे। रही-सही कसर सोलिए ने पूरी कर दी। पूरे शरीर पर बालों का अकाल पड़ गया। बाथरूम से निकलना मुश्किल हो रहा था।

सोचा अब क्या करू ? अपने बालों को मैं कभी राजेश खन्ना-कट मे सजाता था, कभी राज बब्बर स्टाइल मे। लेकिन अब सेठी स्टाइल ने तो मेरा हुलिया ही बदल दिया था। फिर बिलकुल सफाचट। चोटी भी नहीं बची थी। मेरे तनबदन मे आग लग गई। मैंने सोचा कि उस सेठ के बच्चे की खाल उधेड़ दूगा, जिसने मेरी ये हा[illegible] है। हिम्मत करके मैं बाथरूम से बाहर आया तो श्रीमती जी मुझे [illegible] मारकर बेहो[illegible]ई। मेरा पारा तो वैसे ही सातवें आसमान [illegible] उनकी बेहोशी दूर करने का प्रयास करने

[illegible] के अन्य किरायेदार बन्धु श्रीमतीजी की

[illegible] शिकारी बाज की भाति। मैं चीखा-

चिल्लाया। लेकिन मेरी किसी ने नहीं सुनी। मेरी अच्छी खासी धुनाई हो गई थी। मैं सोचा—और चिल्लाने से कुछ नहीं होगा और मैं जानबूझकर बेहोश हो गया। बेहोश होते ही पिटाई का क्रम रुक गया। तब मैंने राहत की सांस ली, लेकिन मकान-मालिक और किरायेदार बन्धु तो मुझे बजाय अस्पताल के थाने पहुंचाने की योजना बना रहे थे।

कुछ देर बाद मामला ठण्डा हुआ तो मैंने हाथ जोड़कर अपनी राम कहानी मकान मालिक को बताई। तब उन्होंने थोड़ी देर पहले जो मेरी हड्डी पसली एक कर रहे थे, मेरी धुनाई पर अफसोस जाहिर करने लगे। उन सबने तो अपने-अपने हाथ हल्के कर लिए थे। लेकिन मेरा पूरा शरीर भारी होने लगा था। इसी दौरान श्रीमतीजी भी होश में आ चुकी थी। वह बार-बार मुझे देखकर हंस रही थीं। मैं क्या करता। हंसना रोना सब भूलकर कुर्सी पर आराम फरमाने लगा। तभी शायद श्रीमतीजी को दया आ गई थी मुझ पर। उसने मेरे पूरे शरीर पर मालिश की। हाथ-पैर दबाये। लेकिन दर्द था कि कम होने का नाम ही नहीं ले रहा था। फिर चाय के साथ दर्द की दो गोलियां ली तो आराम मिला।

शरीर का दर्द ठीक हुआ तो उस सेठ पर गुस्सा आने लगा। जिसने बेकार-सी साबुन देकर मेरी ये हालत की थी। मैंने सोचा कि उस सेठ से पूरा बदला लेना है और तब मैं पैंट-बुशर्ट पहन, साबुन की उस टिकिया को कागज में लपेटकर जेब में डाला तो मुझे यूं लगा मानो जेब में साबुन की टिकिया नहीं बल्कि बिच्छू पड़ा है।

"टोपी लाना तो जरा।" मैंने श्रीमती को धीरे से कहा।

वह हंसती हुई बोली, "टोपी ! गर्मी के मौसम में ऊन की गर्म टोपी पहनों तो लोग क्या कहेंगे ?"

मैं गुस्से से बोला—"तू अब जले पर नमक मत छिड़क और जल्दी से टो ढूंढकर ला।"

वह मुस्कराती हुई सन्दूक से मेरी टोपी निकाल लाई और टोपी के साथ-स मुझे अपना पॉकेट-दर्पण और कंघा भी देने लगी। गुस्से से मेरी आंखें लाल हो उ लेकिन अपनी गलती का गुस्सा मैंने श्रीमतीजी पर उतारना ठीक नहीं समझा अ टोपी पहनकर अपने कमरे से बाहर निकल पड़ा।

बाहर मकान-मालिक, पड़ौसी किरायेदार और उनके सभी बच्चे मुझे देख हंस रहे थे। पड़ौसियों की नन्ही प्यारी-सी गुड़िया काकू, जो मुझे रोजाना 'ट करती थी ने, आज जब 'टाटा' किया तो यूं लगा मानो आज वह भी मेरा मजाक उड़ा रही है। मैं अन्दर-ही-अन्दर राख हो रहा था।

रास्ते में मैंने आंखों पर ऐनक भी लगा ली ताकि कोई जान-पहचान वाला मुझे पहचान न ले। मैं अपनी मूर्खता पर शर्म से गड़ा जा रहा था। थोड़ी देर बाद

वह दुकान आ गई। मैंने देखा कि दुकान पर आज भीड़ कतई नहीं है, बस इक्के-दुक्के ग्राहक ही हैं। मैं दुकान पर पहुंचा और सेठ से बोला—"क्यों सेठ, लोगों को उल्लू बनाते हुए तुम्हें कितनेक साल हो गये?" सेठ ने मुझे ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर तक देखते हुए कहा, "पर भैया, बात क्या है, साफ-साफ क्यों नहीं कहते?"

मैंने कहा, "अच्छा, तो मैं साफ नहीं कह रहा हूं।" फिर मैं जेब से साबुन की वह टिकिया दिखाते हुए बोला, "इस टिकिया को देख रहे हो? यह आज सुबह मैं आपकी दुकान से लेकर गया था।" फिर मैंने अपनी टोपी और ऐनक उतारते हुए कहा, "और ये देखो, आपकी साबुन की इस टिकिया से ये हालत हो गई है मेरी।"

सेठ बोला, "पर भैया, हम तो आपको पहली बार देख रहे हैं। आखो पर ऐनक, सिर पर टोपी और ऐसी शक्ल सूरत। आप यह साबुन किसी और दुकान से ले गये होंगे।"

मैंने जोर देकर कहा, "नहीं, मैं यह साबुन इसी दुकान से लेकर गया हूं और मैंने उनके एक नौकर की तरफ इशारा करते हुए कहा, जिससे कि मैं साबुन लेकर गया था—आपके इस आदमी ने मुझे यह टिकिया दी थी सेठ, और पैसे मैंने आपको दिये थे।"

सेठ ने अपनी ऐनक में झांकते हुए नौकर से पूछा, "क्यों भई मिट्ठू, ये भाई साहब, सुबह अपने यहां साबुन लेने आये थे?"

"नहीं तो, मैं तो इन्हें पहली बार देख रहा हूं।" नौकर ने अनजान बनते हुए कहा। मैं अपना-सा मुंह लेकर घर आ गया। अकेले में कई बार दर्पण में अपने आपको देखा करता और बालों के लिए चिन्ता करता रहता। सिर बिलकुल सूना था, थार के मरुस्थल जैसा।

एक दिन हमारे शहर में एक हकीमजी ने अपनी दुकान खोली। दुकान पर बोर्ड लगा था। जिस पर लिखा था कि—यहां प्रत्येक बीमारी का इलाज गारंटी से किया जाता है। दवा पहले और पैसे इलाज के बाद।

मैंने सोचा कि हकीमजी को अपनी व्यथा सुनाऊंगा तो शायद कोई इलाज हो जाये। क्योंकि इनके यहां दवा पहले मिलती थी और पैसे इलाज होने के बाद देने पड़ने थे।

यही सोचकर एक दिन मैं डरता-डरता हकीमजी की दुकान में घुसा। हकीमजी मुझे देखते ही यूं मुस्कराने लगे मानो वे मेरे काफी पुराने परिचित हों। फिर मैंने सोचा कि हो न हो, ये मेरी ऐसी हालत देखकर हंस रहे हैं। क्योंकि मुझे वहां मेरे अलावा ऐसी कोई चीज दिखाई नहीं दी, जिसे देखकर हंसा जा सके।

हकीमजी ने कुर्सी से खड़े होते हुए अदब से हाथ मिलाया। फिर सामने की कुर्सी पर बैठने का इशारा करते हुए बोले, "कहिये जनाब, कैसे आना हुआ?"

मैंने कहा, "हकीमजी, मुझे कोई बीमारी नहीं है। लेकिन समस्या काफी बड़ी है।"

हकीमजी बोले, "हा-हा बेफिक्र होकर कहिये। आपकी प्रत्येक बात गुप्त रखी जायेगी और गारंटी से इलाज किया जायेगा। आपका शरीर फौलाद-सा नहीं बना दू तो मेरा नाम बदल देना।"

मैंने कहा, "नहीं-नहीं, मुझे कोई रोग नहीं है।" फिर मैंने अपनी टोपी और ऐनक उतारते हुए कहा, "देखिये हकीमजी, पूरे शरीर पर एक भी बाल नहीं है। आप कोई ऐसी दवा दीजिए ताकि बाल वापिस आ जायें और मेरी खूबसूरती में चार चाद लग जायें।" और तभी मैंने उन्हें 'बाल विछोह काड' की पूर्ण जानकारी दी।

हकीमजी ने तत्काल ही आठ-दस जड़ी-बूटियां पीसकर एक दर्जन पुड़िया बना दी और बोले, "शाम को सोने समय एक पुड़िया दूध के साथ लेनी है, एक पुड़िया को ठण्डे जल मे डालकर स्नान करना है तथा शेष दस पुड़ियों का पूरे शरीर पर हल्का-हल्का लेप करके सोना है। दवा लेकर मैं घर आ गया। घर पर उनके द्वारा बताई गई प्रक्रिया दोहराई।

एक पुड़िया को जल मे डालकर स्नान किया। फिर एक दूध के साथ ली तथा शेष दस का एड़ी से लेकर चोटी के स्थान तक पूरे शरीर पर लेप करके सो गया। सुबह श्रीमतीजी की चीख के साथ ही मेरी आख खुली।

श्रीमतीजी घबरातीं-चिल्लाती हुई मकान-मालकिन के पास पहुची और उनसे बोली—"आण्टीजी, हमारे कमरे मे मेरे बिस्तर पर एक भालू सो रहा है।" मैंने इधर-उधर देखा। मुझे तो कहीं भालू दिखाई नहीं दिया। मैंने श्रीमतीजी के भोले-पन पर मुस्कराकर अपनी आखें बन्द कर ली।

तभी मकान मालिक और पड़ोसी सहित पाच-छ जने सभी मुझ पर लाठी और डण्डे बरसाने लगे। मैं चीखा-चिल्लाया—'बचाओ-बचाओ'। तब मेरा एक घनिष्ठ मित्र पड़ोसी बोला, "कमाल है, ये तो बिलकुल आदमी की तरह बोलता है।" मैं उनकी लाठी और डण्डे की मार से बचता हुआ बोला, "आदमी की तरह बोलता क्या हू, आदमी ही तो हू।" फिर मैंने अपने शरीर को गौर से देखा तो दन्न रह गया। पूरे शरीर पर तीन-तीन, चार-चार इंच लम्बे बाल थे।

श्रीमतीजी एक तरफ खड़ी भय-मिश्रित आखों से मुझे निहार रही थी। मैंने उन सबसे हाथ जोड़कर कहा, "न तो मुझे मारने की जरूरत है और न ही डरने की आवश्यकता है। मेरी जो हालत देख रहे हो, यह तो बस खूबसूरत बनने का नज़ारा है। मैं कौन हूं, आप पहचान ही गये होंग।"

सब चले गये। श्रीमतीजी भी जाने लगी तो मैंने धीरे से कहा, "सुनती
।"

वह घबराई हुई धीरे से बोली, "क्या ?"

"नजदीक आओ तो।" मैंने कहा।

वह बोली—"डर लगता है।"

मैं उसके सामने 180 डिग्री कोण पर पसर गया। तब उसका भय कुछ कम
ा। तो साहब, आप मानेंगे नहीं, कई साल तक मैंने भालू-सा जीवन बिताया।
। कहीं आकर कुछ सुधार हुआ है। लेकिन क्या फायदा। अब तो बस उम्र ढल
ी है। बीस कम सौ का हो गया हूं। बूढ़ा हो चला हूं अब तो। खूबसूरत बनने
चाह मन में ही रह गई है। □

आखिर दिन बीता, घड़ी आ पहुंची, जब अध्यक्ष बनाकर संयोजक को संचालन का भार सौंपा जाना था। मैंने सदा की भांति मंच के कालीन पर रखे मुरगी तकिए को सुशोभित करने हेतु अध्यक्ष को बिठा दिया। संयोजन के लिए एक नवोदित कवि का नाम उच्चरित कर शेष दायित्व से छुट्टी चाही, तो मंच के कालीन से धरती पर बिछी दरियों तक सभी ने विरोध कर मुझे ही संयोजन का आदेश दे डाला। लाख कोशिशें की, बीमारी के बहाने बनाए, पर मैं बच न सका। बुरा फंस गया संयोजन में।

सामने श्रोता नाम मात्र को थे। इतने कवि-शायरों को मंच की जाजम पर बिठाया नहीं जा सकता था, इसलिए उन्हें दरियों पर बैठना और श्रोता की भूमिका में रहना था। जब किसी की काव्य पाठ की बारी आती केवल कविता सुनाने भर तक उसे कवि रहना था। अनुभव है कि हर कुत्ता दूसरे कुत्ते को देखकर गुर्राता है और कवि दूसरे कवि को देखकर मायूस होता है।

यहां कोई कवि किसी दूसरे कवि को देखकर गुर्रा नहीं रहा था। वह मायूस था। मायूसी को भूलने के लिए कवि आपस में बतिया रहे थे। इधर मंच से कोई कवि पाठ कर रहा होता तो उधर श्रोता कवि अपने कवि-कर्म का निर्वाह आपस में उसकी निन्दा करते हुए कर रहे होते। काव्य-पाठ करते हुए कवि की आंख यदि किसी श्रोता कवि से मिल जाती तो श्रोता चौंक कर 'वाह-वाह' इस नाटकीय अन्दाज में दाद देता कि शेष सब चौंक कर देखने लग जाते। मैं मंच पर माइक पकड़े बैठा देखता रहता।

उस रात अध्यक्षजी बाजी मार गए। वे यों भी हमेशा बाजी मार लेते थे। हर साहित्यिक मंच पर अध्यक्ष प्रायः वे ही होते। उनके पास कोई ऐसी सिद्धि थी कि मुझे उनका लोहा हर बार मानना पड़ता। कार्यक्रम दिन में हो या रात में, वे तकिए के सहारे बैठ कर माला न पहनने तक तो बड़े जाग्रत और चुस्त दिखते रहते किन्तु जैसे ही माला गले में पड़ती, उनकी पलकें झुकने लगतीं। फिर वे थोड़ी देर सप्रयत्न जागते रहते। कुछ देर तक ऊंघते हुए झोंके खाते, और फिर तकिए पर सिर रखकर सो जाते। उनसे प्रेरणा पाकर यह छूत का रोग सम्पूर्ण उपस्थिति में संक्रमित हो जाता।

उस कवि सम्मेलन में भी रात के दस बजते-बजते अध्यक्षजी शव तकिये पर सिर रखकर पौढ़ गये। उपस्थित जन उनके शयन के दर्शन करते रहे। मैं उबासियां लेता रहा और एक के बाद एक को बुलाता रहा। कभी-कभी तो ऐसा मौका आता कि कवि का या शायर का नाम बोलने पर पास वालों को उसे झिंझोड़कर जगाना और माइक पर भेजना पड़ता।

रात ग्यारह बजे मैंने देखा तो एक सौ तिरेपन नाम शेष थे और उपस्थिति भी लगभग इतनी ही रह गई थी। जिस कवि का नाम बोला जाता, वही अपनी

कविता पढ़कर घर चल देता। शुद्ध श्रोता तो केवल वे रहे थे जिनके घरो पर जन-संख्या की अधिकता या मेहमानो के कारण सोने के लिए ठौर नहीं थी। वे दूरदर्शी थे। घर से ओढ़ने या कम्बल लेकर आये थे और उसका सदुपयोग करते सो गये थे।

मंच पर आसीन मंडली के लिए ठंडे मौसम को देखते हुए रजाइयों का प्रबन्ध प्रारम्भ से ही कर दिया गया था।

रात के तीन बज जाने के बाद मैंने गौर किया, केवल अठहत्तर कवि शेष रहे थे। काव्य-पाठ कर चुकने वाले या तो जा चुके थे या वहीं कम्बलों में दुबक कर सो गये थे। कविता पाठ के प्रत्याशियों में कोई-कोई सप्रयास निद्राजित बने अपनी बारी की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सम्मेलन धुआंधार चलता रहा। भवन के बाहर चारों दिशाओं में लगे शक्तिशाली भोंपू पूरे मोहल्ले के घरों में सोने वालों को जगाते रहे। आखिर सवेरे की सफेदी आसमान में घुली। धीरे-धीरे दिन का उजाला रोशनदानों और खिड़कियों के रास्ते सम्मेलन भवन में प्रवेश करने लगा।

अब केवल पच्चीस कवि शेष रहे थे। प्रातःकाल के आठ बज गये थे। सोने वालों में से बहुत लोग जागकर घर चले गये थे। कितने ही समिति-भवन की सुविधाओं का लाभ उठाकर नित्य-कर्म से निवृत्त होने में लग गये थे।

मैं मंच पर नजरबन्द था। पच्चीस कवियों की पचास आँखें मुझे पूरी चुस्ती के साथ घूर रही थीं। मैं राज कर्मचारी ठहरा। मेरा ड्यूटी का समय प्रातः नौ बजे से था। मैंने क्षमा माग कर उठना चाहा कि घर जाकर ड्यूटी पर पहुंचने की तैयारी करूं तो पच्चीस कवियों ने एक साथ बाहें चढ़ा लीं। बोले—आपको अन्तिम कवि तक साथ निभाना होगा।

अध्यक्षजी को कोई राज-काज था नहीं। वे पुलिस विभाग से सेवानिवृत्त हुए थानेदार थे। वे भी जागने के बाद नित्यकर्म से निवृत्त होकर आ चुके थे। उन्होंने भी कवियों का पक्ष लिया। बोले, "ये ठीक कहते हैं। आखिर राष्ट्रीय पर्व का कवि सम्मेलन है, आप यदि इन्हें रात भर बिठाकर भी बिना कविता पढ़ाये घर भेज देंगे, तो ये बेचारे फिर कहां जाकर काव्य-पाठ करेंगे। इन पर तो यह घोर अत्याचार होगा। मैं अगर रिटायर न हो गया होता तो दो सिपाही आप पर निगरानी को बिठाता और ये जो कवि कविता सुना-सुना कर चले गये हैं उनकी एफ० आई० आर० लिखकर उनके घर घर पुलिस भेजता और उन्हें जबरन बुलवाता। यहां बुलाकर नजरबन्द कर देना और इन कवियों की व आपकी कविता सुनवा कर ही उन पर से पहरा-बंदी उठाता। आप क्या इस संयोजन और ऐसी शायरी के लिए एक दिन की सी० एल० भी नहीं ले सकते?" फिर वे कवियों को संबोधित करते हुए बोले, "आप निश्चिन्त रहें। समिति भवन में पर्याप्त सुविधा

उपलब्ध है। नित्य कर्म से निवृत्त हुए। हम फिर साढ़े नौ बजे से कवि सम्मेलन शुरू कर देंगे। चाय का प्रबन्ध समिति से करवा दिया गया है। इस समय तक यदि और भी कवि, जो कल न आ सके थे, आ गये हों तो वे भी काव्य पाठ हेतु हमारी सूची में नाम लिखवा दें।

डेढ़ घंटे का विश्राम काल घोषित कर दिया गया। कविगण दस बजे तक पुन एकत्र हो गये। अब सूची फिर बढ़ने लगी थी। पच्चीस से बढ़कर चालीस पर पहुच गई थी। मैंने अपने कार्यालय में फोन से सूचना दी कि मैं फंस गया हू। आज अवकाश पर रहूगा। प्रार्थना-पत्र कल साथ ले आऊगा।

अफसर अलग किस्म का आदमी था। बोला—पूर्व-स्वीकृति के बिना सी० एल० कैसे स्वीकृत होगी? आए तो अपना स्पष्टीकरण भी साथ ही लिख लायें।

मैं पुन सयोजन के लिए बैठ गया। कवि सम्मेलन फिर से शुरू हो गया।

दिन के साढ़े बारह बज गये थे। कवि सम्मेलन अबाध गति से चल रहा था। कवि-सूची में अब भी सात नाम शेष थे और थोड़ी-थोड़ी देर मे एक दो नाम बढ़ जाते थे।

मैं अध्यक्षजी को तकिए पर सिर रखे खर्राटे भरते देख रहा था। मुझे अपने अफसर द्वारा मागा गया स्पष्टीकरण याद आ रहा था। रहे-सहे मनोबल को सहेज कर मैं अपनी पूरी ऊर्जा से सयोजन में लगा था। रह-रह कर सोच रहा था। आज तो बुरे फसे सयोजक बनकर। □

टीवी बनाम बीवी

मुख्तार टोंकी

"आजकल बीवी को अपने मंगलसूत्र की इतनी चिन्ता नहीं होती जितनी टीवी की।"

यह हमारा स्वयं का नवीनतम अमूल्य कथन है और हमने इसलिए प्रस्तुत कर दिया है ताकि सनद रहे और आवश्यकतानुसार जिज्ञासु पाठक इससे लाभ उठा सकें। अभी पिछले दिनों की चिरस्मरणीय घटना है कि हम 'मण्डे मूड' में आराम कुर्सी पर अर्द्ध लम्बायमान होकर समाचार-पत्र सेवन कर रहे थे कि हमारी इकलौती बीवी साहिबा हमारे निकट आईं और बड़े रोमाण्टिक अन्दाज में बोली—"कुछ सुना है जी। सब के घरों में टीवी आ रहा है, आप भी एक टीवी खरीद लाइये न।" हमने कौटिल्य दृष्टि से अपनी बीवी की ओर देखा जो टीवी की फरमाइश इस प्रकार कर रही थी जैसे कि बाजार से शाक-सब्जी लाना है। इस समय हमारी बीवी हमें जीनत अमान लग रही थी जिसके गुलाबी होंठों पर एक अर्थपूर्ण मुस्कान नृत्य कर रही थी। हमने साहस बटोर कर कहा—"यह सुबह ही-सुबह तुम्हें टीवी का दौरा कैसे पड़ गया? कल रात 12 बजे तक तो तु अच्छी हुआ करती थी।"

उसने अपनी सुन्दर व सुकुमार बाहें हमारे गले में डाल दीं और हमें प्यार सराबोर करते हुए कहा—"ले आइये न। आजकल तो टीवी पलंग की चा बन गया है। जिधर देखो टीवी की धूम है। जरा देखिये। टीवी के बिना सूना-सूना लगता है।"

घर का सूनापन दूर करने की रामबाण औषधि और टीवी! हम इस प्रतीति ...लत न हुए और प्रतिरक्षात्मक ढंग से उसे अपनी मांसल भुजाओं

र्ग —

"मेरे लिए तो जानेमन ! तुम ही 'ब्राउन' टीवी हो। क्यो चार-पांच हजार की चपत लगवाती हो।"

—"छोड़िये हमें ! यह अच्छा नहीं लगता। कितने दुख की बात है। हमारी सब सहेलियों के घरों में बड़े-बड़े टीवी हैं और हमारे यहां पोर्टेबल भी नहीं। आप इतना भी नहीं कर सकते।"

बीवी और वह भी सुन्दर पतिव्रता बीवी। हम सोचने पर मजबूर हो गये। वास्तव में हम भी कई दिनों से दिमाग में टीवी की खिचड़ी पका रहे थे। अब उसने याद दिलाया तो हमें याद आया। वह पति ही क्या जो बीवी की किसी भी बात पर तुरन्त ही 'यस' कर दे। हमने बहुत सन्तुलित शब्दों में कहना आरम्भ किया—"हे प्रिय ! तुम्हारे लिये तो हम आकाश के तारे तोड़कर ला सकते हैं क्योंकि तुम हमारी वैधानिक पत्नी हो। हमारे जीवन की ट्रेन का दूसरा पहिया हो। तुम्हारी इच्छा सिर आंखों पर। कृपया हमें इतना बता दो कि यदि घर में टीवी आ गया तो हमें-तुम्हें इससे क्या-क्या लाभ होंगे ताकि हम अपने मन में भी टीवी का औचित्य सिद्ध कर सकें।"

हमारी बीवी वैसे लोमड़ी की तरह चालाक है। तुरन्त हमारा अर्थ समझ गई और टीवी की उपयोगिता एवं महत्ता पर आधा घण्टा भाषण झाड़ दिया। भाषण बहुत ओजस्वी एवं धारा प्रवाह था। हम पूरी तरह बीवी के मूल शब्दों को 'कैच' नहीं कर सके फिर भी संक्षेप में हम बीवी द्वारा बताए गये टीवी के कुछ लाभों को प्रस्तुत करते हैं—

(i) "पतिदेव ! टीवी का सबसे बड़ा लाभ तो यह है कि जिस घर में टीवी हो, उस घर की शान बढ़ जाती है। सब समझते हैं कि इस घर पर लक्ष्मी देवी की कृपा है और 'लग्जरी' यहां निवास करती है। दूसरे लोगों पर धाक जम जाती है और वे उस घर के सदस्यों का अधिक आदर-सत्कार करने लगते हैं।

(ii) टीवी आजकल मनोरंजन और दिल बहलाव का भरपूर साधन है। नाटक, एकांकी, विभिन्न खेलों के मैच, लोकनृत्य और साहित्यिक व गैर-साहित्यिक पचासों ऐसे कार्यक्रम हैं जिनसे आनन्द-उल्लास की प्राप्ति होती है। यदि घर में टीवी होगा तो सप्ताह में एक दो बार फिल्म देखने की आवश्यकता नहीं है। टीवी हमें घर बैठे फिल्म की भी पूर्ति कर देगा। इस प्रकार पैसों की साप्ताहिक बचत होगी।

(iii) आप जानते हैं कि सरकार विद्युत गति से समूचे देश में दूरदर्शन के रिले-सेण्टर स्थापित कर रही है ताकि देश के हर समुदाय को और सामान्य जनता को टीवी की सुविधा प्राप्त हो सके क्योंकि यह सामान्य जानकारी का सशक्त माध्यम है। दुनिया भर की खबरों का दिग्दर्शन

रूप में सुगम हो जाता है। रेडियो की तुलना में टीवी इसलिए अधिक उपयोगी एवं प्रभावी है कि सभी गतिविधियों एवं क्रियाकलापों को यह पूर्ण रूप में प्रस्तुत करता है।

(१०) टीवी शैक्षिक दृष्टि से भी लाभदायी है। शिक्षा के प्रसार-प्रचार में यह महत्वपूर्ण योगदान कर रहा है। यूरोपीय देशों में तो टीवी द्वारा शिक्षा आरम्भ हो चुकी है क्योंकि बच्चे 'श्रवण' के बजाय 'दर्शन' से अधिक प्रभावित होते हैं।"

बीवी ने कुछ इस प्रकार और रोचक शैली में टीवी के लाभों का बखान किया कि हमारी खोपड़ी में शत प्रतिशत टीवी खरीदने की बात बैठ गयी। हमने फौरन तैयारी की और बाजार की ओर सरपट दौड़ पड़े। आप विश्वास करें अथवा न करें, हमारी स्पीड इस समय काफी तेज थी और हम किसी 'टीवी शॉप' पर पहुंचने को लालायित थे क्योंकि 'काल करै सो आज कर' की उक्ति को चरितार्थ करने की तीव्र उत्कण्ठा थी। तभी मार्ग में हमारी भिड़न्त हमारे लंगोटिया यार मास्टर बुद्धि प्रकाश से हो गयी। मास्टर बुद्धि प्रकाश हर विषय में पारंगत और हर 'फील्ड' के अनुभवी खिलाड़ी हैं। उन्होंने जब हमें द्रुत गति से नाक की सीध में भागते देखा तो मार्ग अवरुद्ध करके कारण पूछा। हमने सन्दर्भ सहित पूरी बात बताई और टीवी के साथ बीवी का भी गुणगान करने लगे। वह हमें कन्धा पकड़कर चाय की एक घटिया होटल में ले गये और वहां टीवी के बारे में अपने मौलिक विचार प्रकट किये। अन्दाज ऐसा ही था कि जैसे हमारी बुद्धि भ्रष्ट होने पर खेद प्रकट कर रहे हों। उन्होंने जो कुछ भी अपने श्रीमुख से कहा, उसका सार-संक्षेप इस प्रकार है—

"शर्माजी ! आजकल टीवी एक फैशन बन गया है। लोग सामर्थ्य न रखते हुए भी अपना बड़प्पन जताने के लिए टीवी खरीद रहे हैं। नि:सन्देह टीवी में अनेक गुण हैं और इससे बहुत कुछ लाभ भी उठाये जा सकते हैं किन्तु टीवी से बहुत-सी हानियां हैं और यह बहुत-सी समस्याएं खड़ी कर रहा है।

प्रथम बात तो यह कि टीवी के लिये एक अच्छी खासी रकम की आवश्यकता होती है। इसका प्रथम चरण ही धन की बरबादी है। इसके साथ समय का दुरुपयोग भी टीवी द्वारा होता है। जिस घर में टीवी होता है, परिवार के सारे सदस्य इसके प्रोग्राम देखने में अपना समय नष्ट करते हैं। यहां तक कि बच्चे भी अपना अधिक समय पढ़ाई में न लगाकर बस इसी के चक्कर में पड़ जाते हैं। जब घर में टीवी चलेगा तो स्पष्ट है कि सभी छोटे-बड़े अनायास ही इसे देखने पर विवश होंगे। अपने अमूल्य समय को व्यर्थ ही नष्ट करेंगे। अब तो यह 'दूरदर्शन' वाले रात को भी फिल्म देने लगे हैं। इसका अर्थ यह है कि अब समय के साथ सभी परिवार वालों की नींद भी हराम होगी। टीवी का शैतान आपकी रातों को भी

इसे तुरन्त हो जाता है। रेडियो की तुलना में टीवी इसलिए अधिक
उपयोगी एवं प्रभावी है कि सभी गतिविधियों एवं क्रियाकलापों
यह पूर्ण रूप में प्रस्तुत करता है।

(iv) टीवी शैक्षिक दृष्टि से भी लाभकारी है। शिक्षा के प्रचार-प्रसार में
यह महत्त्वपूर्ण योगदान कर रहा है। यूरोपीय देशों में तो टीवी द्वारा
शिक्षा आरम्भ हो चुकी है क्योंकि बच्चे 'श्रवण' के बजाय 'दर्शन' से
अधिक प्रभावित होते हैं।"

बीवी ने कुछ इस प्रकार और रोचक शैली में टीवी के लाभों का बयान किया
कि हमारी खोपड़ी में शत प्रतिशत टीवी खरीदने की बात बैठ गयी। हमने फौरन
तैयारी की और बाजार की ओर सरपट दौड़ पड़े। आप विश्वास करें अथवा न
करें, हमारी स्पीड इस समय काफी तेज थी और हम किसी 'टीवी शॉप' पर पहुंचने
को लालायित थे क्योंकि 'काल करे सो आज कर' की उक्ति को चरितार्थ करने
की तीव्र उत्कण्ठा थी। तभी मार्ग मे हमारी भिड़न्त हमारे लंगोटिया यार मास्टर
बुद्धि प्रकाश से हो गयी। मास्टर बुद्धि प्रकाश हर विषय मे पारंगत और हर
'फील्ड' के अनुभवी खिलाड़ी हैं। उन्होंने जब हमें द्रुत गति से नाक की सीध मे
यो भागते देखा तो मार्ग अवरुद्ध करके कारण पूछा। हमने सदर्भ सहित पूरी बात
बताई और टीवी के साथ बीवी का भी गुणगान करने लगे। वह हमें कन्धा
पकड़कर चाय की एक घटिया होटल मे ले गये और वहां टीवी के बारे मे अपने
मौलिक विचार प्रकट किये। अन्दाज ऐसा ही था कि जैसे हमारी बुद्धि भ्रष्ट होने
पर खेद प्रकट कर रहे हो। उन्होंने जो कुछ भी अपने श्रीमुख से कहा, उसका सार-
संक्षेप इस प्रकार है—

"शर्माजी ! आजकल टीवी एक फैशन बन गया है। लोग सामर्थ्य न रखते
हुए भी अपना बड़प्पन जताने के लिए टीवी खरीद रहे है। निःसन्देह टीवी मे
अनेक गुण हैं और इससे बहुत कुछ लाभ भी उठाये जा सकते हैं किन्तु टीवी से
बहुत-सी हानिया हैं और यह बहुत-सी समस्याए खड़ी कर रहा है।

प्रथम बात तो यह कि टीवी के लिये एक अच्छी खासी रकम की आवश्यकता
होती है। इसका प्रथम चरण ही धन की बरबादी है। इसके साथ समय का
दुरुपयोग भी टीवी द्वारा होता है। जिस घर मे टीवी होता है, परिवार के सारे
सदस्य इसके प्रोग्राम देखने मे अपना समय नष्ट करते है। यहा तक कि बच्चे भी
पना अधिक समय पढ़ाई मे न लगाकर बस इसी के चक्कर मे पड जाते है। जब
र मे टीवी चलेगा तो स्पष्ट है कि सभी छोटे-बड़े अनायास ही इसे देखने पर
वश होगे। अपने अमूल्य समय को व्यर्थ ही नष्ट करेंगे। अब तो यह 'दूरदर्शन'
ने रात को भी फिल्म देने लगे हैं। इसका अर्थ यह है कि अब समय के साथ सभी
वार वालो की नींद भी हराम होगी। टीवी का शैतान आपकी रातो को भी

दुखदायी बनायेगा।

दूसरे यह कि टीवी द्वारा 'आचरण' पर जबरदस्त प्रहार हुआ है। आज जो चरित्रहीनता और अनैतिकता पाव फैला रही है उन्हें बढ़ावा देने मे दूरदर्शन पूरा सहयोग दे रहा है। नई नस्ल और छोटे बच्चो पर इसके घातक प्रभाव पड रहे हैं। टीवी के कार्यक्रम, अनेक सीरियल एव विज्ञापन आदि ऐसे होते हैं जो चरित्र नष्ट करते हैं और बच्चे दिमागो को विषाक्त बना देते हैं। बहुत से माता-पिता भी यह महसूस करते हैं कि बच्चो एव परिवार के सारे सदस्यो के साथ अमुक कार्यक्रम देखना अनुचित है।

इन बातो को छोडिये ! सबसे बडा नुकसान तो यह है कि मिस्टर टीवी स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं। आप शायद नही जानते कि टीवी मे 'एक्सरेज' से काम लिया जाता है। मेडिकल एक्स-रे मशीन मे हानियो से बचाव की व्यवस्था होती है जबकि टीवी सेट मे यह प्रबन्ध नही होता और इसकी 'क्ष' किरणें सीधा स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती हैं। इस सम्बन्ध मे अमेरिका की डॉक्टर एन० विगमूर के कथनानुसार यह शरीर मे कैन्सर पैदा कर देती है तथा अमेरिका मे अल्पवयस्क बच्चों मे जो खूनी कैन्सर फैला है, इसका एकमात्र कारण भी टीवी की प्राणघातक किरणें हैं। अमेरिका मे कई वैज्ञानिको ने अनेक प्रयोग किये हैं और सिद्ध किया है कि टीवी सेट की किरणो से स्वास्थ्य को बडा खतरा है और आखो को भी नुकसान पहुच सकता है।

अत मैं तो आपको यही परामर्श दूगा कि टीवी जैसी सक्रामक बीमारी से अपने घर को दूर रखें। घर मे यदि तबाही लाना चाहते हैं तो यह आपकी इच्छा पर निर्भर है'' "

मास्टर बुद्धि प्रकाश की यह बुद्धिमत्तापूर्ण बातें सुनकर हमारी आखें खुल गईं। उन्होने टीवी की हानियों एव दूरगामी परिणामों का जो भयानक नक्शा खीचा, वह हमारे होश उडाने के लिए पर्याप्त था। हम पूरी तरह से विचलित एव कम्पित हो गये। उल्टे कदम अपने घर की ओर दौडे। गली के नुक्कड पर एक अन्य मित्र ज्ञानचन्द से टकरा गये। उन्होने जो हमारी भाव-भगिमा देखी तो परेशानी की वजह पूछी। हमने पूरे धैर्य से बीवी के आग्रह-अनुरोध और बुद्धि प्रकाश की 'नेक सलाह' से उनको अवगत कराया। वह देर तक हमारा मुह ताकते रहे और फिर जोर से ठहाका लगाते हुए कहने लगे—

"शर्माजी ! आप बहुत भोले हैं। आइये ! बैठक मे चलकर बैठें। मैं चुटकी बजाते आपको इस दुविधा से निकाल दूगा।"

जैसे-तैसे हम घर पहुचे। बीवी महोदया को चाय तैयार करने को कहा और तदुपरान्त ज्ञानचन्द से ज्ञान प्राप्त करने लगे। उन्होने हमे सात्वना दी और फिर निम्न वर्णित पक्तियो को अपने दिमाग से हमारे दिमाग मे स्थानान्तरित किया—

3 टीवी के सामने उसकी सीध मे न बैठें बल्कि एक तरफ साइड मे बैठकर देखें तो अच्छा है ।
4. टीवी दृष्टि बाधकर लगातार न देखें बल्कि इधर-उधर भी नजरें दौड़ाते रहें ताकि किरणें प्रभावी न हो ।
5. टीवी लेटकर न देखें । डॉक्टर की सलाह से किसी प्रकार का रगीन चश्मा आखों पर लगाकर भी इसे देखा जा सकता है ।
6. यह भी आपको बता दू कि 'रगीन' टीवी के बजाय 'ब्लेक एण्ड व्हाइट' टीवी खरीदें क्योंकि रगीन टीवी से शक्तिशाली 'एक्सरेज' निकलती हैं ।

ज्ञानचन्द की बातो ने हमारे भय को समाप्त कर दिया और हम भागमभाग बाजार से 'श्याम एव श्वेत' टीवी खरीद लाए । पहले तो हम केवल बीवी से सावधान रहते थे लेकिन अब टीवी से भी सावधान रहना पड़ता है । समस्त बीवी एव टीवी होल्डरों से हमारा अनुरोध बल्कि करबद्ध प्रार्थना है कि वे भी दोनो से सचेत रहें क्योंकि दोनो भूल-चूक मे हानिकारक सिद्ध हो सकते हैं । □

"निःसन्देह टीवी में बहुत-सी अच्छाइयां हैं और इनसे हमें बहुत से लाभों की प्राप्ति हो सकती है। इसमें भी दो राय नहीं कि इसमें बुराइयां हैं और इनसे अनेक हानियों की सम्भावना है। आपकी प्रशंसनीय पत्नी ठीक कहती हैं और श्री मुदि प्रकाशजी भी अपनी जगह ठीक फरमाते हैं। आप निःसंकोच होकर अपनी पहली फुर्सत में टीवी खरीद लें। जहां तक उससे पहुंचने वाली हानियों का मामला है, उनसे बचाव के कुछ उपाय मैं आपको बताता हूं। यह टीवी देखने वाले पर निर्भर है। यदि वह सावधानी बरते तो टीवी उसके लिये अभिशाप न होकर वरदान सिद्ध हो सकता है। सुनिये ! टीवी पर यह आरोप सही है कि इसमें समय बरबाद होता है। लेकिन सारा इल्जाम हम टीवी को ही नहीं दे सकते। क्या यह आवश्यक है कि हम शुरू से आखिर तक सारे ही कार्यक्रम विज्ञापनों सहित देखें ? हर समय टीवी के सामने बैठे रहें ? इस प्रकार तो समय हर दशा में नष्ट होगा। सभी कार्यक्रमों को देखने की कोई तुक नहीं है। अच्छे और उद्देश्यपूर्ण, हल्के मनोरंजन के कार्यक्रमों को देखने में कोई बुराई नहीं है। शैक्षिक एवं खेलकूद सम्बन्धी प्रोग्राम भी देखे जा सकते हैं लेकिन यह सब काम अपने 'लेजर टाइम' में होना चाहिए। उचित कार्यक्रमों को चुनकर ही हम अपना समय व्यर्थ नष्ट होने से बचा सकते हैं।

जहां तक बच्चों को बिगाड़ने एवं चरित्र-हनन की बात है, इसमें भी कुछ उत्तरदायित्व की भूमिका माता-पिता या घर के मुखिया को निभानी चाहिए। ऐसे कार्यक्रम, जो आचरण पर सीधा प्रभाव डालते हैं उन्हें न तो स्वयं देखें और न अपने बच्चों को देखने दें। साफ-सुथरे नाटक, उद्देश्यमूलक फीचर फिल्म और शिक्षाप्रद सीरियल ही देखें। औद्योगिक कम्पनियों के अश्लील विज्ञापनों को टीवी पर न दिखाए जाने का विचार हो रहा है। वैसे भी टीवी पर यदि गलत और नैतिक मूल्यों को गिराने वाले कार्यक्रम प्रस्तुत किये जाते हैं तो इनमें सुधार के लिये पब्लिक को आवाज उठानी चाहिए और सरकार का ध्यान भी इस ओर आकर्षित कराना चाहिए।

'स्वास्थ्य-बिगाड़ किरणों' से भी भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं है। इनसे बचने के तरीके भी हैं—

1 टीवी से निकलने वाली हानिकारक किरणों से सुरक्षा के लिए यह आवश्यक है कि सेट से कम-से-कम सात-आठ मीटर के फासले पर बैठा जाए।
2 टीवी को पूर्ण अन्धेरे में न देखकर किसी बल्ब की रोशनी में देखा जाए। इससे स्क्रीन पर प्रकाश पड़ेगा तो उन किरणों का प्रभाव क्षीण हो जायेगा।

3 टीवी के सामने उसकी सीध मे न बैठें बल्कि एक तरफ साइड मे बैठकर देखें तो अच्छा है।

4. टीवी दृष्टि बाधकर लगातार न देखें बल्कि इधर-उधर भी नजरें दौड़ाते रहे ताकि किरणें प्रभावी न हो।

5 टीवी लेटकर न देखें। डॉक्टर की सलाह से किसी प्रकार का रगीन चश्मा आखो पर लगाकर भी इसे देखा जा सकता है।

6 यह भी आपको बता दू कि 'रगीन' टीवी के बजाय 'ब्लेक एण्ड व्हाइट' टीवी खरीदें क्योकि रगीन टीवी से शक्तिशाली 'एक्सरेज' निकलती हैं।

ज्ञानचन्द की बातो ने हमारे भय को समाप्त कर दिया और हम भागमभाग बाजार से 'श्याम एव श्वेत' टीवी खरीद लाए। पहले तो हम केवल बीवी से सावधान रहते थे लेकिन अब टीवी से भी सावधान रहना पड़ता है। समस्त बीवी एव टीवी होल्डरों से हमारा अनुरोध बल्कि करबद्ध प्रार्थना है कि वे भी दोनो से सचेत रहे क्योकि दोनो भूल-चूक मे हानिकारक सिद्ध हो सकते हैं। □

कई बार ज्योतिषी या भविष्यवक्ता भविष्यवाणियों में इस प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं कि यदि भविष्यवाणी झूठी सिद्ध होती है तो वे साफ बच निकलते हैं। जैसे आपसे कहा गया कि अमुक माह में यात्रा नहीं करें, करेंगे तो आप कष्ट पायेंगे। ज्योतिषी की बात की अवहेलना कर यदि आप यात्रा करते हैं तो हो सकता है कि यात्रा में आपको आज के भीड़ भरे वातावरण में कुछ कष्ट सहना पड़े। कोई छोटी-मोटी दुर्घटना भी हो जाये, जिसकी आशंका रहती ही है। इसके आधार पर क्या ज्योतिषी को आप त्रिकालदर्शी मान लेंगे? आपके राशिफल में कहा गया कि अमुक माह में आपको आर्थिक लाभ होगा। यह तो आम बात है कि हर व्यक्ति हर माह कुछ-न-कुछ आय अर्जित करता ही है, इसमें क्या नई बात हुई। कहने का अभिप्राय यह है कि जो व्यक्ति वाक्पटु होता है वह अच्छा ज्योतिषी या भविष्यवक्ता भी बन सकता है।

मेरा एक मित्र है। उसे एक ऑफिस में साधारण क्लर्क की जगह मिली। आज वह एक उच्च-पद पर कार्यरत है। अपनी पदोन्नति का कारण उसने ज्योतिष विद्या को बतलाया। इस कला के माध्यम से उसने अपने उच्च अधिकारियों से जान-पहचान निकाली। उसने ज्योतिष विद्या के कई ग्रन्थों का अध्ययन किया। सामुद्रिक विद्या अर्थात् हस्त रेखा विज्ञान का भी अध्ययन किया। ज्योतिष विज्ञान की पत्र-पत्रिकाओं का नियमित रूप से अध्ययन किया। भृगु-संहिता को पढ़ा। जन्म-पत्री, कुंडलियों आदि का गणित भी सीखा। इसी विद्या के बल पर उसने उच्चाधिकारियों को खुश किया। परिणामस्वरूप उसका गोपनीय प्रतिवेदन (सी० आर०) अच्छा लिखा गया और पदोन्नति का मार्ग खुल गया। अब तो उसकी इस कला में पारंगत होने के कारण बड़े-बड़े मंत्रियों से जान-पहचान हो गई है। उसकी पौ-बारह है।

भविष्यवाणी करने का धन्धा आजकल बहुत लोकप्रिय हो रहा है। भविष्य-वक्ताओं की चांदी-ही-चांदी है।

कई मंत्री या राजनेता भी बिना तान्त्रिकों-ज्योतिषियों की सलाह लिए किसी कार्य का शुभारम्भ नहीं करते। प्राचीन काल में भी राजा-महाराजाओं के दरबार में ज्योतिषियों का बड़ा मान-सम्मान था।

यदि कोई व्यक्ति हस्तरेखा विशेषज्ञ या भविष्यवक्ता है तो सभी व्यक्ति उसके इर्द-गिर्द चक्कर लगाते हैं।

पुरुष ही नहीं महिलायें भी ऐसे व्यक्तियों की ओर शीघ्र ही आकर्षित हो जाती हैं। कई बार श्रद्धालु व्यक्ति इन धूर्त ज्योतिषियों के चक्कर में पड़कर अपना सब कुछ गवा बैठते हैं।

बेरोजगारी दूर करने का यह एक अचूक नुस्खा है। आप एक चटाई बिछाकर सड़क के किनारे बैठ जाइये या भीड़-भाड़ वाले राजमार्ग पर एक अलग-अलग

कई बार ज्योतिषी या भविष्यवक्ता भविष्यवाणियों मे इस प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं कि यदि भविष्यवाणी झूठी सिद्ध होती है तो वे साफ बच निकलते हैं। जैसे आपसे कहा गया कि अमुक माह मे यात्रा नही करें, करेंगे तो आप कष्ट पायेंगे। ज्योतिषी की बात की अवहेलना कर यदि आप यात्रा करते हैं तो हो सकता है कि यात्रा मे आपको आज के भीड भरे वातावरण मे कुछ कष्ट सहना पड़े। कोई छोटी-मोटी दुर्घटना भी हो जाये, जिसकी आशंका रहती ही है। इसके आधार पर क्या ज्योतिषी को आप त्रिकालदर्शी मान लेंगे ? आपके राशिफल मे कहा गया कि अमुक माह मे आपको आर्थिक लाभ होगा। यह तो आम बात है कि हर व्यक्ति हर माह कुछ-न-कुछ आय अर्जित करता ही है, इसमे क्या नई बात हुई। कहने का अभिप्राय यह है कि जो व्यक्ति वाक्‌पटु होता है वह अच्छा ज्योतिषी या भविष्यवक्ता भी बन सकता है।

मेरा एक मित्र है। उसे एक ऑफिस मे साधारण क्लर्क की जगह मिली। आज वह एक उच्च-पद पर कार्यरत है। अपनी पदोन्नति का कारण उसने ज्योतिष विद्या को बतलाया। इस कला के माध्यम से उसने अपने उच्च अधिकारियो से जान-पहचान निकाली। उसने ज्योतिष विद्या के कई ग्रन्थो का अध्ययन किया। सामुद्रिक विद्या अर्थात् हस्त रेखा विज्ञान का भी अध्ययन किया। ज्योतिष विज्ञान की पत्र-पत्रिकाओं का नियमित रूप से अध्ययन किया। भृगु-संहिता को पढा। जन्म-पत्री, कुंडलियो आदि का गणित भी सीखा। इसी विद्या के बल पर उसने उच्चाधिकारियो को खुश किया। परिणामस्वरूप उसका गोपनीय प्रतिवेदन (सी० आर०) अच्छा लिखा गया और पदोन्नति का मार्ग खुल गया। अब तो उसकी इस कला मे पारगत होने के कारण बड़े-बड़े मन्त्रियो से जान-पहचान हो गई है! उसकी पौ-बारह है।

भविष्यवाणी करने का धन्धा आजकल बहुत लोकप्रिय हो रहा है। भविष्य-वक्ताओ की चादी-ही-चादी है।

कई मंत्री या राजनेता भी बिना तान्त्रिकों-ज्योतिषियो की सलाह लिए किसी कार्य का शुभारभ नही करते। प्राचीन काल मे भी राजा-महाराजाओं के दरबार में ज्योतिषियो का बड़ा मान-सम्मान था।

यदि कोई व्यक्ति हस्तरेखा विशेषज्ञ या भविष्यवक्ता है तो सभी व्यक्ति उसके इर्द-गिर्द चक्कर लगाते हैं।

पुरुष ही नहीं महिलायें भी ऐसे व्यक्तियों की ओर शीघ्र ही आकर्षित हो जाती हैं। कई बार श्रद्धालु व्यक्ति इन धूर्त ज्योतिषियों के चक्कर मे पड़कर अपना सब कुछ गवा बैठते हैं।

बेरोजगारी दूर करने का यह एक अचूक नुस्खा है। आप एक चटाई बिछाकर सड़क के किनारे बैठ जाइये या भीड़-भाड़ वाले राजमार्ग पर एक अलग-अलग

दुम कुत्ते की

प्रेम भटनागर

कहानी पुरानी है पर सन्दर्भ नया है। एक ओझा थे। उन्होने भूत पाल रखे थे। भूत कमाते और वे खाते थे। भूत काम करते वे आराम करते थे। उनके पडोस में एक गरीब लकड़हारा रहता था। बेचारा दिन भर काम करता था, पर फिर भी पेट नही भरता था। उसने सोचा कि काश उसे भी एक कमाऊ भूत मिल जाता तो उसके सूखे जीवन मे बहार आ जाती। वह ओझा के पास पहुचा और मन की बात बताई। ओझा ने उसे एक भूत दे तो दिया पर सख्त हिदायत भी दी। भूत भूत है, आदमी नहीं। इसान बस आराम ही आराम चाहता है, काम नही। भूत बस काम ही काम चाहता है आराम नही। इसान हमेशा हराम की ही खाने की सोचता है और भूत हलाल की। आदमी और भूत मे बस यही अन्तर है। ओझा ने कहा कि जिस दिन भूत को काम नहीं दिया जाएगा, भूत उसे खा जायेगा। लकड़हारा ओझा की बुद्धि पर हसा। काम बताना भी भला कोई काम है।

आते ही भूत बोला—'काम' लकड़हारा ने कहा, "जाओ जगल की लकडी काटकर लाओ।" आदमी मिनटो का काम घटो और कभी-कभी दिनो मे करता है। पर भूत वर्षों का काम मिनटो मे ही कर देता है। कुछ ही देर मे लकडियो का ढेर लगा था। भूत बोला—'काम'! लकड़हारे ने कहा, "समुद्र के तमाम मोती हाजिर करो।" बस कहने-भर की देर थी कि मोतियो का ढेर लग गया। भूत बोला . 'काम'? और लकड़हारे को लगा कि अब गये प्राण। बेचारे की सिट्टी-पिट्टी हो गई गुम और तभी उसे दिखाई दी कुत्ते की दुम। सामने एक कुत्ता बडे प्यार मे दुम हिला रहा था। लकड़हारे ने कहा . जरा कुत्ते की दुम को सीधी कर। अब भूत कुत्ते की दुम सीधी करने लगा। पर दुम थी कि सीधी होती ही नहीं। ., जैसे ही सीधी करता फिर वही टेढ़ी की टेढ़ी। बेचारे ने हार कर विदा

सवाल है कि क्या फेतो साहब अपने मिशन में कामयाब होंगे और उनकी कसम पूरी होगी? क्या कुत्ते की दुम कभी सीधी होगी? अब दुनिया की तो दुनिया जाने, पर अपने राम को कतई विश्वास नहीं। और जब समझदार भूत ही कुत्ते की दुम सीधी नहीं कर सकता, बेचारा यह दिमागी भूत किस खेत की मूली है। कुत्ता कुत्ता है, इंसान नहीं। इंसान अवसरवादी है। उसका कोई उसूल नहीं। समय के अनुसार वह अपना रंग बदलता है। कुत्ते की अपनी संस्कृति और उसूल है। वह बिना दुम भले ही रह जाय पर अगर दुम रहेगी तो बस टेढ़ी की टेढ़ी ही □

आई रे आई स्कूल में जुलाई

अरविन्द तिवारी

स्कूल और जुलाई की जोडी वैसी ही है जैसे शादी के बाद किसी लडके और लडकी की जोडी। शादी के बाद के चन्द दिन जिस तरह किसी जोडे के लिए अविस्मरणीय होते हैं उसी प्रकार स्कूल के लिए जुलाई के सभी दिन अविस्मरणीय होते है। ऐश कर लो जुलाई मे फिर साल-भर खटना है। मास्टरो को पढाना है (स्कूल मे नही, ट्यूशनें) और छात्रो को पढ़ना (?) है। ऊपर से टैस्ट-परीक्षाओ का भूत अलग। जिस तरह किसी षोडशी को देखकर वृद्ध मन भी पुलकित हो उठता है उसी तरह कड़े से कड़े अनुशासन वाला स्कूल भी जुलाई को देखकर खुल जाता है। सीनियर लडके जूनियर लडको के 'प्राथमिक विद्यालयी' संस्कारो पर हसते हैं, नई लडकियो की पोशाक देखकर पुरानी लडकिया हसती हैं। उधर अध्यापक वृन्द नये छात्रो या छात्राओ मे ट्यूशन की सभावनाओं पर बहस करते हैं परन्तु किसी ठोस निष्कर्ष पर नहीं पहुच पाते हैं। यो आजकल अध्यापक निष्कर्षों पर पहुचना भी नही चाहते।

जुलाई आते ही स्कूल मे मधुमास छा जाता है। एडमीशनो का सिलसिला घपलो के साथ प्रारम्भ होता है। जहा घपला नही होता वहा प्रधानाध्यापक और प्रबन्धको का विकास नही हो पाता। अत विकास के लिए घपला आवश्यक है। यों विकास के लिए स्कूलों मे विकास-शुल्क भी लिया जाती है, जिसके द्वारा बिना घपले के भी प्रधानाध्यापको का विकास हो सकता है। जुलाई कुछ लोगो के लिए 'सीजन' होता है। जो जुलाई मे नया-नया स्कूल मे घुसा उसे लूटो। एडमीशन फार्म जो बाजार मे दस पैसे मे उपलब्ध हैं उसे आराम से दो रुपये मे बेचा जा सकता है। जिन मास्टरो के हाथ मे 'एडमीशन' का कार्य होता है उनका रुतबा और दबदबा बढ़ जाता है। बाकी के मास्टर 'इन्फीरियटी कापलेक्स' से ग्रसित

जाते हैं। किसी का फोन आने पर एडमीशन इन्चार्ज मास्टर कहते हैं "भाई मीशन में बिजी हू, मरने की भी फुर्सत नहीं है।" अब उन्हें कौन समझाये कि मीशन करते-करते भी मरा जा सकता है। बस एडमीशन के काबिल छात्र को मीशन मत दो और रिश्वत लेकर बहुत ही कमजोर छात्र को एडमीशन दे दो। अर्ज करने वाले छात्र के मा-बाप थोड़े बहुत राजनीतिक व्यक्ति हुए तो आपके थ-पैर तोड़ देने की व्यवस्था कर देंगे। यह अस्पताल पर निर्भर करेगा कि डमीशन' कार्य में बिजी रखे या फिर पूरी तरह संसार से छुट्टी देकर नर्क यादि संस्थाओं में आपकी पोस्टिंग करवा दे। एडमीशन के नाम पर 'डोनेशन' कर अपना कमीशन बनाने में जितना आनन्द प्रिंसिपल को आता है उतना दो म्बर की कमाई करने वाले को भी नहीं आता। प्रिंसिपल के रुके हुए सारे काम लाई में पूरे हो जाते हैं। बीवी बच्चों के कपड़ों से लेकर फ्रिज, कलर टी० वी० ा० सी० आर० आदि की व्यवस्था प्रिंसिपल जुलाई में कर सकते हैं।

देखा जाये तो जुलाई किसी महीने का नाम नहीं, बल्कि रामबाण औषधि है। र रोग का इलाज है जुलाई। किसको साइंस देना है, किसको कामर्स देना है और कौन आर्ट्स फैकल्टी के काबिल है यह फैसला करने वाले अध्यापकों की चांदी ो जाती है। सुबह से शाम तक उनके घर छात्रों का मेला लगा रहता है। मुहल्ले ने वे मास्टर जी नये आये हैं तो लोग उन्हें वी० आई० पी० मानकर बिना वजह मस्कार कर लेते हैं। लेकिन जुलाई खत्म होते-होते पोल खुल जाती है। सरकार ो चाहिए कि जुलाई का महीना कम-से-कम साठ दिन का कर दे। कापियों की प्लाई, साइकिल स्टैण्ड का ठेका, कैन्टीन का ठेका, ब्लैक बोर्ड पर पालिश आदि कमीशन वाली समस्त क्रियायें जुलाई में की जाती हैं। उधर अभिभावकों के लिए जुलाई किसी आतंक से कम नहीं होती है। बच्चों की फीस, स्कूल ड्रेस आदि की मार से वे ऐसे घायल होते हैं कि वर्ष-भर तक बीमार रहते हैं। दुकानदार, चाहे वे किराने के हो चाहे जनरल स्टोर्स वाले, अपनी चीजों के दाम जुलाई में बढ़ा देते हैं।

अध्यापकों के लिए यह महीना 'पिकनिक' मनाने का होता है। कभी 'रेनी डे' के बहाने और कभी बिना बहाने वे दस्तखत करके खिसक लेते हैं। बोर्ड की परीक्षायें पास हुए लड़के जुलाई में ही अपने अध्यापकों को मिठाई खिलाते हैं। जुलाई में अध्यापक इस जुगाड़ में रहते हैं कि टाइमटेबल में कमाई वाला विषय उन्हें पढ़ाने को मिल जाये। इसके लिए वे प्रिंसिपल या प्रधानाध्यापक की नेताओं के स्तर तक की चमचागिरी कर लेते हैं और कभी-कभी कामयाब भी हो जाते हैं। इसी महीने में अध्यापकों को उनका टाइम टेबल दे दिया जाता है और कहा जाता है कि कक्षाओं में जाओ। अध्यापकों को पूरी जुलाई टाइम टेबल रटने में लग जाती है। फिर अगस्त में 15 अगस्त के कार्यक्रमों का रिहर्सल होता है।

ड़कना आंख का

ुश कुमार चतुर्वेदी

ख को लेकर हिन्दी मे कई मुहावरे प्रचलित हैं। मसलन आखें दिखाना, आखें
र होना, आख मारना, आख फडकना, आखें लडाना, आखो का तारा होना,
खो-आखो मे बातें होना आदि मुहावरे जहा कई दिलचस्प घटनाओ और
हानियो के निर्माण मे सहायक हैं वही आख फडकना या आख मारना व्यक्ति
जीवन मे या तो बहार ला देगी या फिर पतझड। यकीन न हो तो करके देख
ीजिए।

सडक पर चलती हुई किसी षोडसी नवयौवना मे आपकी आख लडी। उसे
ख आपकी आंख हरकत मे आयी और फडकने लगी। हसीना ने यदि आख मे आख
लाकर आपको आख मारकर लाइन क्लीयर होने का सिगल दे दिया तो समझो
ाप धन्य हो गये, और आखो-आंखो मे बात कर आपने साथ जीने और साथ
रने का वादा भी कर लिया। किन्तु जनाब आपके आंख मारने का झटका लडकी
म्भाल न सकी और उसने आखें तरेरते हुए आंखें निकाली और चप्पलो-सैण्डिलो
आपकी चाद (सिर) की मातमपुर्सी कर दी तो समझो आपकी कयामत आ
यी। ऐसे समय उस हसीना को देख मनचलो का जमघट लग जाएगा और फिर
ापकी धुनाई शुरू, तब आपको लगेगा कि गुरू न घर के रहे न घाट के, फिर आप
वह हिम्मत भी नही रहेगी कि आप समाज मे आंख उठाकर चल सकें। फिर
ापकी आंखें हमेशा-हमेशा के लिए समाज के आगे झुक जाएगी, मारे समाज मे
फिर आप ही अधों मे काने राजा होंगे। गली-गली, घर चौराहे और अखबारों मे
आपकी इश्क की शोहरत के चर्चे सुने जायेंगे। तब आपके पास घर के किसी कोने
मे बैठकर आठ-आठ आंसू बहाने के सिवा और कोई दूसरा चारा भी तो नहीं
रहेगा। ऐसे मे जले पर नमक छिड़कने कोई पुलिस वाला आ धमका तो उसे भी

ले देकर शान्त करना पड़ेगा। फिर भला क्यों न इस छोटी-सी चीज कमबख्त आंख को हरकत में आने से पहले ही रोक लें। यदि आपकी आंख को फड़कने की आदत है तो फिर भला आप कर ही क्या सकते हैं। आप चाह कर भी आंख को आंख से अलग नहीं कर सकते।

कभी-कभार फड़कने वाली आंख ज्योतिष के अनुसार शुभ-अशुभ की द्योतक मानी जाती है। किन्तु कुछ लोगों का बुरा हाल है। वे बात-बात में सिग्निल लाइट की तरह अपनी एक या दोनों आंखें फड़काते रहते हैं। डाक्टर लोग इसे एक प्रकार की बीमारी का नाम देते हैं। बहरहाल डाक्टर के पास इस बीमारी का कोई कारगर इलाज हो या न हो किन्तु आप अपनी आंख पर रंगीन चश्मा चढ़ा कर हसीन दुनिया को और भी रंगीन देख सकते हैं और चश्मे में ही कई बार आंख फड़काकर आंख मारने का लुत्फ उठा सकते हैं। यदि आपने बिना चश्मा पहने ही आंख फड़काने की हिम्मत कर ली, तो समझो गये काम से।

आंख फड़कने की आदत क्या गुल खिलाती है, आप ही पढ़ लीजिए और यदि आपकी भी आंख फड़काने की आदत है तो उपर्युक्त कारगर उपाय (रंगीन चश्मा पहनने का) अपना लीजिए। वर्ना जैसी आपकी मर्जी। फिर हमें दोष मत देना।

हां, तो आइए आपको बताएं कि उनकी आंख फड़कने की आदत ने क्या गुल खिलाये—

हमारे पड़ोसी जुम्मन चाचा। अधेड़ उम्र। सबकी जुबां पर जाना-पहचाना नाम। दिन-भर मुंह में पान दबा मुंह इस प्रकार चलाते रहते हैं मानो भैंस जुगाली कर रही है। इधर उनका मुंह चलता उधर उनकी बाईं आंख बार-बार फड़कती, आंख इस स्टाइल में फड़कती कि धीरे-से झपककर बंद होती और तत्काल खुल जाती। देखने वालों को ऐसा लगता कि सचमुच आंख मारी जा रही है। जो लोग जुम्मन चाचा के आंख फड़काने की इस आदत से परिचित थे वे हंसते, मजा लेते और चले जाते किन्तु जो लोग उनकी इस आदत को नहीं जानते वे गलत अर्थ लगाकर जुम्मन चाचा से उलझ पड़ते। कभी-कभी तो स्थिति इतनी बिगड़ जाती कि सम्भालना मुश्किल हो जाता।

एक दिन हुआ भी यही। जुम्मन चाचा अपनी दुकान पर बैठे थे कि एक सुन्दर जवान लड़की क्रीम-पाउडर खरीदने आयी। ज्योंही उस नवयौवना ने अच्छा-सा पाउडर बतलाने की फरमाइश की कि आदत के मुताबिक उनकी बाईं आंख फड़क उठी। लड़की ने देखा चाचा आंख मार रहा है। वह आपे से बाहर हो गई। जुम्मन चाचा को भला-बुरा कहने लगी। कहने लगी—बुढ़ापे में बुड्ढे की बुद्धि सठिया गयी है। कमबख्त मुझसे आंख लड़ाता है। शर्म नहीं आती इसे, गन्दी हरकतें करते। लड़की गुस्से में बोलती ही जा रही थी और जुम्मन चाचा जो थे वे बराबर अपनी आंख को फड़काये जा रहे थे, उनकी इस बेहूदी हरकत पर

लडकी को और भी ज्यादा गुस्सा आया। उसने चप्पल खोल कर चाचा की खोपड़ी लाल कर दी। वह चप्पल तब तक बरसाती रही जब तक कि लोगों ने आकर बीच-बचाव न किया, बेचारे चाचा करते भी क्या। उनकी फड़कती आंख ने उन्हें कहीं का न रखा छोड़ा था। बीच-बचाव करने वालों ने जब लड़की को बताया कि जुम्मन चाचा ने तुम्हें आंख नहीं मारी, उनको तो आंख फड़काने की बुरी आदत है तब बेचारी वह लड़की बहुत शर्मिन्दा हुई और जुम्मन चाचा से माफी मांगकर चलती बनी।

लड़की तो चली गयी पर जुम्मन चाचा को आंख फड़काने का अच्छा-खासा सबक मिल गयी।

जुम्मन चाचा की आंख का फड़कना लोगों के लिए तमाशा बन गयी। पर बेचारे चाचा अब भी बैठे आंख फड़काये जा रहे थे और देखने वाले हंसे जा रहे थे।

आंख फड़कना ज्योतिष के अनुसार शुभ-अशुभ की द्योतक हो न हो किन्तु जुम्मन चाचा की फड़कती आंख ने अशुभ घटना घटा ही दी।

हमने तो पहले ही आपको सचेत कर दिया था कि यदि आपकी आंख फड़कती है तो आप रंगीन चश्मा पहनिये और आंख मारने का लुत्फ उठाइये। लेकिन आपने हमारी बात न मानी। अब भुगतो अपने किये की सजा, इसमें हमारा क्या दोष। □

महिमा अंखियन की

सागरमल शाह

शुक्र है खुदा का जिसने हर प्राणी को, और खासकर मनुष्य को, देखने के लिए दो आखें दी। अगर आखें न होती तो मानव सौन्दर्यानुभूति से वंचित रह जाता। वैसे शरीर के अंग-प्रत्यंग का अपना ही सौन्दर्य है, किन्तु इन सब में आखो का स्थान सर्वोपरि माना गया है। इस प्रकार आखें एक ओर सौन्दर्यानुभूति कराती हैं तो दूसरी ओर स्वय सौन्दर्य की स्रोत है।

आखो की महिमा निराली है। कवियो एव लेखको को कभी मृग नयनियो ने लुभाया है तो कभी शर्मीली या शराबी आखो ने। कई कविताओ में हमे नायिका की मारक आखो से आहत कवि का करुणक्रन्दन सुनाई देता है कि आखो की अपनी ही भाषा है और अपना ही प्रभाव। तभी तो सूरदास जैसे सत कवि को आन्तरिक दृष्टि से रमणी के लजाने वाले नेत्रो की उपमा सुन्दर व चपल खजन से देने के लिए बाध्य होना पडा। यही नहीं, कवि जायसी को तो अद्वितीय सुन्दरी पद्मावती के नेत्र ऐसे प्रतीत हुए मानो लाल कमल पर दो भौरे मडरा रहे हो—

'राते कंवल करहि अलि भवा,
घूमहि मति चवहि उपसवा।'

सुन्दर सलोनी आखो की तुलना मृगनयनो से भी की जाती है क्योकि उसके नेत्र आकर्षक व बडे होते हैं। परन्तु जायसी के शब्दो में पद्मावती के नयन तो मृगो के लिए भी ईर्ष्या का कारण बन गये हैं—

खजन सुरहि मिरग जनु भूले।

साहित्य मे वर्णित उन अनोखे नयनो की तुलना में सामान्य आखें भी कम

जादुई प्रभाव नहा रखना। नीली आखो को देखकर भला कौन ऐसा होगा जिसका हृदय नही पसीजता ? और नारी की नीली आखो का तो कहना ही क्या ! इसी शस्त्र के बल पर नारी चरित्र की वैभवशाली अट्टालिका खडी हुई है। प्रजातत्र मे नेता चुनाव मे जनता के मतो मे विजयी होकर भले ही उ से आखें फेर लेते हो, किन्तु किसी युवती की नीली आखें देखकर उससे आखें फेर लेना उनके लिए भी असम्भव नही तो कठिन अवश्य है।

इगलैण्ड मे आखें गडाकर किसी नारी को देखना कानूनी अपराध माना जाता है, किन्तु हमारे देश मे तो इसे मात्र अशिष्ट आचरण की सज्ञा ही दी गई है। चचल-चपल आखो पर किसी और का नियत्रण तो सम्भव नही। तभी तो मनचले, दूसरों से आखें चुराकर, अपनी पसन्द को घूर ही लेते हैं। अगर ऐसा करते हुए पकडे गये तो उनके लिए आखें नीची कर लेने के अतिरिक्त कोई चारा नही होता। सौभाग्य से इस प्रक्रिया मे नायक व नायिका की आखें चार हो गई तो बस समझो, काम बन गया।

आख मिचौनी का खेल हमारे देश मे लोकप्रिय है। चुनाव मे नेता जनता को ढूढते हैं, तो चुनाव के पश्चात् जनता नेताओ को। आज के युग मे प्रत्येक व्यक्ति पर दूसरो की आखें लगी हैं। चतुर राजनेता सामान्य जनता की आखो मे चतुराई से धूल झोककर भले ही क्यो न बच निकलें, किन्तु पत्रकारो से आखें बचाना उनके लिए भी कठिन है। तभी तो पत्रकार उनकी आखो का काटा बनकर उनकी छाती पर मूग दलते हैं।

'गरीब की जोरू सबकी भाभी' वाली कहावत आज—'जिसकी लाठी उसकी भैस' वाले युग मे सत्य सिद्ध हो रही है। यदि बड़ा नेता अपने से कमजोर को आख दिखायें तो दूसरे के लिए भीगी बिल्ली बनकर बैठ जाना ही श्रेयस्कर होता है। यदि वह आख तरेरकर या आख लाल कर प्रत्युत्तर देने का प्रयास भी करें तो उसकी आवाज नक्कारखाने मे तूती की आवाज बनकर रह जाती है।

जनतन्त्र मे जनता की माया ही विचित्र है। वह कभी किसी नेता को अखियो के झरोखे मे आख के तारे की तरह बसाकर उसके लिए आखें बिछा देती है, तो कभी उसे आख की किरकिरी मानकर न केवल उससे आखें फेर लेती हैं, अपितु उसे धूल भी चटा देती है।

आज के युग मे आखें खोलकर कदम रखना बुद्धिमानी है। परन्तु इस पर भी ऊपर आ पड़े तो आखें बन्द कर विदेशी तत्वों के सिर मढ़ देना चतुराई है। कहते हैं सावन के अन्धे को हरा ही हरा सूझता है किन्तु आजकल तो हरा ही हरा देखने के लिए हरे रंग का चश्मा ही पर्याप्त है। इससे तो रेगिस्तान मे भी हरियाली के दर्शन हो सकते हैं।

आखों की अभिव्यक्ति क्षमता तो अद्वितीय है। मौन भाषा की धनी ये आखें

आखो मे ही वह बात कर देती है तो वाणी द्वारा सम्भव नही। इसका सुन्दर
बिहारी की इन पंक्तियो मे मिलता है—

कहत, नटत, रीझत, खिजत, मिलत, खिलत लजियात,
भरे भौन मे करत है, नैननु ही सब बात।

यही नही, अमृत व मद मिश्रित नयनो की शक्ति को रसलीन ने इन शब्दो
अभिव्यक्त किया है—

अमिय हलाहल मद भरे स्वेत स्याम रतनार,
जियत मरत झुकि झुकि परत, जेहि चितवत इक बार।

इन अखियन की महिमा अपार है। उन पर कितने ही निबन्ध, काव्य खण्ड-काव्य या महाकाव्य लिख डाले जाए तब भी उसकी महिमा का स्रोत सूख नही सकता।

□

पति बने रहने के लिए

रूपनारायण काबरा

जी हां, मैं एक पति हूं, यानी वह शख्स जिसके पास एक अदद पत्नी है। पति कहलाने के लिए न कोई डिग्री चाहिये न डिप्लोमा, न सर्टिफिकेट न ट्रेनिंग। दुनिया में एक जबरदस्त जिम्मेदारी का पद बस यूं ही मिल जाता है। पत्नी मिली नहीं कि पति बन गये। है न कितना सरल! हां साहब, बन जाना तो सरल है, पर बने रहना कितना मुश्किल! यह बात कुआरे क्या जानें! यदि आपमें दम-खम है तो सभी कुछ कर सकते हैं। नेता बन सकते हैं, लोगों को ठग सकते हैं, उल्लू बना सकते है, दस हजार से भी ज्यादा रन बनाने का हौसला रख सकते हैं, सागर की लहरों के बीच नाव पर विश्व-यात्रा कर सकते हैं, एवरेस्ट से भी ऊंची बर्फीली चोटी पर चढ़ सकते हैं या समुद्र की पेंदी में जाकर मोती ला सकते हैं, सीमा पर बढ़ रहे दुश्मन के सीने में संगीन घुसेड़ सकते हैं, सांपों से और शेरों से खेल सकते हैं, असम्भव को सम्भव भी कर सकते हैं पर पत्नी के पति बने रहने के लिए एक अलग ही किस्म का दिल-दिमाग और कूवत चाहिए, जो कि प्रत्येक में सम्भव नहीं। सुकरात और आइन्स्टीन जैसे तो आप, हम हैं नहीं कि बेखुदी में जी लें। यह सच है कि इस घाट पर बड़े-बड़े विश्व विजेता भी हार मान गये। नेपोलियन और सिकन्दर बस यहीं तो हारे थे। यही तो दर्द था। सब कुछ होना आसान है पर पति बने रहना मुश्किल है।

पति बने रहने से मेरा तात्पर्य है, पत्नी से वही रिश्ता आखिर तक कायम रहे जो कि कभी शुरू में था जब आपने पति कहलाने के लिए पत्नी को स्वीकारा था, जिन्होंने कभी मन से स्वीकारा ही नहीं, बस यूं ही खामख्वाह बन [illegible] की बात नहीं करता, जब पत्नी आपकी प्रेयसी थी, प्रेमिका [illegible] -डान, हाव-भाव, पहनना-ओढ़ना सब कुछ अच्छा लगता था। [illegible] बनवा [illegible] वे वादे हवा हो गये! फिर तो मात्र एक

साड़ी लाने या न लाने पर ही जग हो सकती है। सब्जी में नमक कम या ज्यादा होने पर ही तूफान आ सकता है।

मेरी उम्र तो बहुत हो गई पर पति रहने का अनुभव मात्र 20 वर्ष का ही है। इसमें मेरे से जूनियर उम्र के भी मेरे से सीनियर हैं क्योंकि मैंने पति कहलाने का शौक जरा देर से फरमाया। लेकिन अगर आप मुझे सही कहने के लिए माफ कर दें और इसे डींग मारना न कहें तो मैं कहना चाहूंगा कि मैंने 20 वर्षों में ही इतना देख लिया जितना कि लोग 40-50 वर्षों में भी नहीं देख पाते। देखने का भी अपना तरीका होता है। देखने वाले तो ऐसे भी हैं जो आखें बन्द करके भी ब्रह्मांड को देख डालते है। अन्तर्मन की, सृष्टि की, सारी समस्याओं का हल ढूंढ लेते है। *और ऐसे भी है जिन्हें आखें खुली रहते हुए भी कुछ नहीं दीखता।* नजरिया साफ हो, पैना हो, चश्मे के नम्बर ठीक हो तो सब कुछ दीख जाता है।

पति बने रहने के लिए अपनी पत्नी (औरो की नही) को समझना अत्यन्त आवश्यक है। आप आइन्स्टीन का सापेक्षवाद और ऋग्वेद के मन्त्र समझ सकते हैं सदैव आपके पास रहने वाली पत्नी को समझना आसान नहीं। एक तो इसलिए कि आप में इतनी हिम्मत, इतना हौसला, इतनी क्षमता ही नहीं और दूसरी बात यह है कि पत्नी विश्व का सर्वाधिक पेचीदा जन्तु है जिसको आज तक समझने का प्रयास करके भी कोई बिरला ही समझ पाया है। तभी तो कहा है कि, "स्त्रियस्य चरित्रम्, पुरुषस्य भाग्यम् देवो न जानाति कुतो मनुष्य,"। नारी-स्वभाव को, उसके व्यवहार की आप भविष्यवाणी नहीं कर सकते, पल में तोला पल में माशा, ऐसी को तोलना बड़ा मुश्किल है। फिर भी घबराइये नहीं, यदि वास्तव में पति बने रहने का इरादा है (यूं ही गाडी नहीं घसीटनी है) तो लीजिये हम बताते हैं कुछ भेद की बातें।

प्रत्येक नारी प्रशंसा को अत्यधिक महत्व देती है। प्रशंसा का स्वरूप तारीफ करना ही नहीं है। वस्तुतः इसका अर्थ है मान्यता देना यानी 'रिकग्नीशन'। आप नारी के तन को, मन को, वेश को, स्वर को, बात को, कार्य को जब भी अवसर हो सराहिये। उसके द्वारा किये गये छोटे से कार्य को भी, चाहे वह बटन टाकना हो अथवा फटी पैंट की सिलाई अथवा टेबल आलमारी को जमाना, आप इन्हें स्वीकारिये, सराहिये धन्यवाद दीजिए। आप कहा कीजिए, "तुम मेरा कितना खयाल रखती हो।" यदि उन्होंने कोई साड़ी चाव से पहनी हो तो चूकिये मत ऐसा कहने से 'वाह, क्या जच रही हो'! खाने में कोई नई चीज बनाई हो और वह ठीक हो तो स्वाद लेकर, चटखारे लेकर खाइये। उनके कहने से कोई काम किया हो, चाहे वह बाजार से सौदा लाने का हो अथवा पिक्चर देखने का ही क्यों न हो, उस सौदे और उस पिक्चर को सराहिए। इस प्रकार की प्रशंसा एवं मान्यता में ध्यान रखिये कि ऐसा तभी करना है जबकि प्रशंसा करने की गुंजाइश हो।

खामख्वाह की झूठी प्रशंसा व्यंग्य का रूप ले लेती है और वह आनन्द नहीं देती। एक बात और ध्यान में रखिये कि ऐसी प्रशंसा आवश्यकतानुसार यदि औरों के सामने की जाये तो और भी फलदायी होगी।

अपनी पत्नी का विश्वास कीजिए। देखिए न, वह अपना सब कुछ छोड़कर आपके यहां आती है और अपना सब कुछ आपको सौंप देती है, तो आप भी अपना सब कुछ उन्हें सौंपिये न! हर बात में सलाह लें, उनकी सलाह को यूं ही मत झटक दीजिए, उनसे अपनी बात बतायें, अपना आना-जाना, आय-व्यय सभी कुछ बतायें। याद रखिये, जब पत्नी को यह मालूम हो जाय कि आप उससे काफी कुछ छिपाते हैं, आप उसे इस लायक नहीं समझते कि उसे सब कुछ बताया जाय तो वह अन्दर-ही-अन्दर एक प्रकार का विद्रोह करती है, एक शीत-आक्रोश पनपने लगता है, जो किसी भी रूप में कभी भी 'गरम' हो उठता है। आपका परोक्ष या अपरोक्ष अविश्वास पत्नी में आपके प्रति सहज समर्पण को आघात पहुंचाता है और बेदिली और बेरुखी को जन्म देता है। और यही तो दूर रखना है।

सन्देह न खुद कीजिए न पत्नी को सन्देह करने का अवसर दीजिए। किसी पुरुष से यदि वह हंस बोल लेती है तो शंका न कीजिये। सन्देह ईर्ष्या एवं आशंका को जन्म देती है और अन्दर-ही-अन्दर एक दरार पैदा हो जाती है। पत्नी के सदेह का ध्यान रखिये। नारी सामान्यतः शंकालु प्रकृति की होती है और भले ही यह उसके हारमोन्स का परिणाम हो या कुछ और आपके यह कहने पर कि 'मुझे ऊषा पसन्द है' भले ही आपने ऊषा पत्ते के लिए यह बात कही हो, स्पष्ट न होने पर वह सन्देह के घेरे में घिर सकती है।

पत्नी की अभिरुचियों को, घर में उसके स्थान को, समाज में उसके स्थान को उसके व्यक्तित्व को, उसकी पसन्द को, उसकी सलाह को पूरा सम्मान दीजिए। आपकी पत्नी में भी कुछ-न-कुछ विशेषता अवश्य है, उसे पहचानिये, स्वीकारिये, उजागर करिये। पत्नी का सम्मान यदि सिद्ध करता है आपने उनके व्यक्तित्व को स्वीकारा है, यह एक बहुत बड़ी बात है।

प्यार करना एक बात है और प्यार का प्रदर्शन और बात है। प्यार करने से कहीं ज्यादा आवश्यक है प्यार का इजहार। कोई भी किसी के दिल को चीरकर नहीं देख सकता, न दिखा सकता इसीलिए प्यार की अभिव्यक्ति देनी ही होती है। हम कहीं भी जाते हैं अपने बच्चों के लिए खिलौने, मिठाई कपड़े जाने क्या-क्या लाते हैं न? क्यों लाते हैं? यह हमारे प्यार का प्रदर्शन ही तो है। प्यार का प्रदर्शन शब्दों से, व्यवहार से, वाणी से, पत्रों द्वारा सभी प्रकार से कीजिए। 'आई लव यू', 'डार्लिंग' 'प्रिये' इत्यादि का प्रयोग भी कीजिए। 'तुम्हारी याद आती है,' 'तुम्हारे बिना मन सूना है,' 'तुम कितनी अच्छी हो!' इत्यादि भी और जब तब कुछ-न-कुछ लाते रहिये। चाहे चीज छोटी हो या बड़ी। भावना में एक जोड़ी

विलप पसन्द करके लाना, अपनी पमन्द की चूडिया लाना भी उतना ही महत्व रखता है जितना कि एक अच्छी साडी। डरिये मत, कभी-कभी अपनी पसन्द की चप्पल, सैंडिल ले आना भी अच्छा रहता है।

यह तो कुछ मूत्र है जिनके सहारे नारी मन को जीता जा सकता है और पति बने रहने मे आसानी रहती है।

मंद समीरे त्रिवेणी तीरे

शशिबाला शर्मा

महस्त्र कार्तिके स्नान
माघे स्नान शमनि च ।
वैशाखे नर्वदा कोटि
कुभ स्नानेन् तत्फलम् ।।

हजारो बार कार्तिक मे स्नान, सैकडो बार माघ मे स्नान तथा करोडो बार नर्मदा मे स्नान का जो पुण्य है वह कुभ पर्व के एक ही स्नान से प्राप्त हो जाता है।

नेहरू की जन्मस्थली, महादेवी वर्मा की कर्मस्थली और तीन नदियो गगा यमुना तथा विलुप्त सरस्वती की सगमस्थली इलाहाबाद मे त्रिवेणी तट पर भर रहा है इस बार शताब्दी का सबसे बडा महाकुम्भ···सुनो देशवासियो, नव वर्ष की ताजा हवाओ ने मकर सक्राति के अभिनन्दन मे यह शुभ समाचार देश के कोने-कोने मे पहुंचा दिया था···रही-सही कसर पूरी कर रहे थे समाचार-पत्र, रेडियो और दूरदर्शन ··।

मेरी आखो मे 1986 का हरिद्वार का कुभ लहराने लगता है···न कोई पूर्वयोजना थी, न कोई तात्कालिक कार्यक्रम फिर भी तब तो बुला लिया था मगर इस बार ··?

हजारों किलोमीटर की दूरी से विवश, अक्षम, साधनहीन, किन्तु उडान भरने को आतुर कितने ही प्राण पक्षी, इन्ही मे से एक मैं भी, लघु···अति लघु··· अकिचन ··।

शादी के बाद ससुराल से पहली बार आई बिटिया की ढीली अगूठी को

किंचित छोटा करवाने शक्ति ज्वेलर्स के यहां जाना एक सुयोग ही रहा ।

"भाभीजी ! सोमवती अमावस्या-स्नान के लिए यहां से एक बस जा रही है। आप दोनों भी हो आइये" मुस्कान जड़ा अनुरोध गणेश भाई का।

"क्या सच ?" मैंने चौंक कर देखा, चश्मा उतार कर देखा। सचमुच मज़ाक नहीं था यह। आनन्दातिरेक में क्या कर डालूं समझ नहीं आ रहा था। चश्मा फिर चढ़ा लिया।

'हां कह दें ? ये मगर बगलें झांकने लगे'''अभी तो बेटी के विवाह से निबटे हैं। कितनी देनदारियां सिर पर है'' तुम तो बस ! गुस्सा थर्मामीटर के पारे की तरह चढ़ने लगा था। मैंने मगर अनदेखा किया।

लिखवा दीजिए हमारा भी नाम। तीर्थ तो माना स्थायी धरोहर हैं मगर पर्व क्या रोज-रोज आते हैं और फिर इस रोग-जर्जर शरीर से क्या अगले रिश्ते कुंभ तक टिकने की उम्मीद की जा सकती है !

प्रथमाभिव्यक्ति में स्वीकृति थमाने वाले उदार पति दुनिया में प्राय कम ही होते हैं। मगर अन्त तक अपने अस्वीकार पर अड़े रहने वाले और भी कम'''यह रहस्य जिसने जान लिया उन्हीं का दाम्पत्य जीवन विशिष्टानुभूतियों से मिलत है'' घर तक लौटने-लौटने ये भी एक पावन पुलक में डूबने उतराने लगे थे।

और फिर जनतन्त्रीय वातावरण से परिपूरित मेरे घर में बच्चों द्वारा मिला सामूहिक समर्थन इस अभियान की तैयारी में योगदान देने जुट गया

' मम्मी ! ये सफारी मेरी ले जाइये, बहुत हलकी है आपकी वी॰ आई॰ पी॰ में" रश्मि बोली।"

"मम्मी ! ये दो साड़ियां मेरी भी रखलें, सफर में अच्छी रहेंगी", बहू लता ने कहा।

"डैडी ! बिस्तर की चिन्ता आप मत करें, हम किस लिए है।" यह बड़े सुपुत्र राजीव है।

"मम्मी पापा ! आप लोगों की दवाइयां ला दूं ?" छोटे सुपुत्र संजय को भी अपना कर्त्तव्य याद आया।

और टुकुर-टुकुर देख रहा था मेरा नन्हा सा प्यारा सा पोता पल्लव—"आजी, मुझे ले चो।"

और फिर यात्रा की तैयारियां व बीच के तीन दिन किस तरह हवा हुए यह पता ही नहीं चला [illegible]

[illegible] के बाद, हम [illegible] पूर्व निर्देशानुसार ठीक ग्यारह बजे [illegible] "मां [illegible] [illegible] [illegible] के सामने खड़ी थी। [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] नहीं [illegible] थी,

पहुचाने वालो की भी—

शुभ कामनाओ के प्रतीक, गेंदे के हार उन हाथों में हमारे गलो में आते रहे'''कुछ हाथ नारियल झुलाते रहे और रुपये भी'''।

हमारे आचल भी मगल कामनाओ से रीते नही थे ' चौथाई शताब्दी से परिचित, आत्मीय स्वजनो से भी अधिक आत्मीय सुरेशजी भी अपनी मा के साथ हमारे साथ मौजूद थे। काश उनमे थोडी-सी कार्य निष्ठा कम होती तो सकून चैन और आजादी के कुछ पल अपने लिए भी निकाल कर कभी या फिर अभी हमारे सहयात्री तो बन पाते ! लगता है रिटायरमेंट तक ऐसा सभव नही होगा।

मनोहर भाई साहब ने भी हार और रुपये दिये, अपनी तरफ से, सावित्री बहनजी की तरफ से भी'''पर्व को अयाचित ही मिल रहा यह सहयोग एक और प्रसाद की गुरुता का दायित्व बोध भी रह रहकर कस रहा था' कर्णप्रिय न लगने पर भी 'जैसी तेरी नाच-कूद वैसी मेरी बारफेर' की सामाजिकता का निर्वाह करना ही पडता है।

और इसी बीच सौम्य वेशी मचालक पुरुषोत्तम जी बस मे आकर दुर्गा की तस्वीर के समक्ष दीप जलाते हैं। बस के पहिए के आगे नारियल फोडकर गुड सहित प्रसाद वितरित हो रहा है'''प्रस्थान मे 10 मिनट शेष है ' भीड मे हलचल बढ गई है। शब्दोंऔर हिदायतो का आदान-प्रदान तेजी से हो रहा है कहीं-कहीं कठावरोध छिप नही पाता'' छिपाया जा भी नहीं सकता ' मिलन का माधुर्य कहीं छिप पाता है ? फिर बेचारी प्रस्थान की पीड़ा ने ही क्या गुनाह किया कि उसे हृदय के तलघर मे ही दफन होने का आदेश दें आखों पर लाज के पहरुए बैठा दें !

मुरलीधरजी की पत्नी, वदना की मम्मी से खिडकी से बतियाती रही। मैं नीचे उतर आई ' लता, रश्मि सजू चुम गन्ने का रस पीओ न ! मैं राजीव को एक ओर ले आई ''कुछ कहना चाहा' समझाना चाहा ''आगू मगर बेईमान हो गये'''

कही पढा था'''भूला नही जाता एक व्यक्ति जब भी कही बाहर सफर पर जाता'''कोई कर्ज बाकी नही छोडता'''जिन्दगी का क्या भरोसा ! घडी की टिक-टिक कहा थम जाए ''मगर मेरी तो अभी बहुत देनदारिया बाकी हैं'' बेटे ! सफर तो हमेशा रिस्की ही होता है, कुछ हो जाये तो बहिन-भाई को'''

बस ! बस ! आगे के शब्द उसने पूरे न होने दिए''कुछ नही होगा ''इतने अभागे नहीं हैं हम'''आप सकुशल वापस आयेंगे'''आराम से जाइये' पता नहीं आखो की आर्द्रता को छुपाने के लिए ही तो वह पल्लव को गन्ने का रस पिलाने नहीं ले गया !'''पर युवा सोच आशावादी तो होना ही चाहिए'''।

ठीक एक बजे ड्राइवर सीट पर था, यात्री भी। धीरे-धीरे खिसकती बस के

साथ चाकर छोटे होते गये—शरीर [illegible]···ध्यान [illegible]! एक [illegible] हमारे साथ का भी···हमारे भागी भी "बच्चा बच्ची! अच्छा दाता!" कहकर बहुत ने मुस्कराया [illegible] वाले फैलाते था, मुझे भी नहीं आती!

मुझे सीट मिली थी मुस्कीकरणी दम्पति के पास और उनकी को केवल म, इनसे बातचीत का सुख तो लिया हो, सानन्द के बटवारे का दर्द भी झेलना पड़ा। सुख भर पास हंसी और नाराजेदान इसके पास!

करीब पौन घंटे बाद पहुंचा मत्या टाकरडा के मन्दिर में टेक कर माताबाड़ा से कुछ और सवारियां तथा परतापुर से कुछ मुड़े लेकर शाम को 6 बजे हम बांसवाड़ा पहुंचे। वहां लोग फिर बिखर गये···आत्मीय स्वजनों से मिलने आने का पता नहीं यह कौन-सा अवसर सूझा उन्हें। लक्ष्मणजी कहीं से जीनवर दो घंटे बाद आये। इस बीच हमारे सहित कितने ही यात्री बुढ़िया जाकोर को पी-पीकर गिन बन चुके थे।

आखिर बेहद बोर होकर 8.30 पर चले। फिर लगातार चलते रहे'' कभी जगे कभी सोते। 2 बजे एक झटके के साथ जब बस रुकी तो हम उज्जैन में धर्मशाला के आगे थे। वहां और भी कई यात्री-बसें खड़ी थी। उदयपुर की, बांसवाड़ा की, अहमदाबाद की। धर्मशाला में जगह नहीं मिली। मगर शौच के लिए वहीं शरण ग्रहण करके हम तारों की छाव में शिप्रा-तट पर स्नान के लिए पहुंच गये।

भारत के चार कुंभ-स्थलों में से एक यह भी है। मगर पानी का सीमित विस्तार और किनारों पर एकत्रित कचरे ने कुंभ जैसे पर्व की आपूर्ति में सवाए पैदा की। गैर डुबकी के अभाव में लोटा विकल्प बना। कपड़े पहनने तक हाथ पाँव ठंडे सुन्न हो चुके थे। सामने चाय की दुकान पर गये। अन्दर गर्मी मिली और चूल्हे की लपटों से बाहर भी ''।

'बड़ा गणेश' की अभूतपूर्व मूर्ति और महाकालेश्वर के दर्शन-पूजन तथा अन्य बहुत से मन्दिर देखते हुए बस रवाना हुई, इन्दौर पहुंच कर पाया एक पहिया पंक्चर है। बीच बाजार में बस रोककर नवलजी तो जुट गये पंक्चर सुधरवाने में और हम लोग चाय नाश्ता करके पास ही स्थित अन्नपूर्णा मन्दिर के दर्शन कर आये। मन्दिर की दीवारों के अन्दर-बाहर मूर्ति-चित्रित महाभारत, प्रथम बार देखी। अभिभूत से अधिक आश्चर्यचकित हुए। फिर न जाने कितना लम्बा रास्ता तय करती हुई बस सूर्यास्त से पहले नर्मदा तट-स्थित ओंकारेश्वर पहुंच कर ही रुकी।

पहाड़ियों के मध्य प्रवाहित स्वच्छ पारदर्शी जल को हाथों से छूते हुए हमने छोटी-छोटी नावों में बैठकर नर्मदा को पार किया। तट पर स्नान करते हुए, 'अठन्नी फेंको, हम निकालेंगे' कहने वाले हठीले किशोरों से बमुश्किल पिंड छुड़ाया। विद्योपार्जन की उनकी उम्र को गोताखोरी के हथकंडों में व्यर्थ जाता देखकर मुझे [illegible] [illegible] बढ़कर [illegible] खरीदते हुए ऊपर मन्दिर

में पहुंचे । प्राचीन स्थापत्य की अमूल्य धरोहर यहां भी बिखरी पडी थी स्तम्भों में, छतों में किन्तु भोले बाबा ! जिनकी एक झलक देखने ही आए थे हम इतनी दूर से वे वीतरागी तो अपने चिरपरिचित रूप में जल मग्न बैठे थे' बेल पत्रों का एक ढेर उतरता कि दूसरा चढ जाता ''भीड बढ जाने से मुख्य पूजा स्थल से शीघ्र ही बाहर आना पडा, जहां हमारे स्वागतार्थ कितने ही पुजारी खड़े थे 'कोई भैरवजी का प्रतिनिधि था तो कोई अम्बे माता का, कोई प्रथम पूज्य गणेशजी का स्मरण करा रहा था तो कोई उनके सहोदर कार्त्तिकेय को सजाये बैठा था—"ईश्वर तेरे रूप अनेक, किसको कह दूं सबसे नेक" वाली स्थिति हो रही थी ' खैर, त्वरित दर्शन, प्रणाम निवेदन और चिल्लर अर्पण, करते हुए शर्माजी को ढूंढते नीचे पहुंचे तो उन्हें बाहर खडे पाया '''अन्दर जी घबरा रहा था' सुनते ही अनुपस्थिति का अभियोग चिन्ता में बदल गया ''आठ माह पहले हुई हार्ट ट्रबल ने मुझे इनके प्रति काफी सतर्क बना दिया है। शुद्ध और मुक्त पवन की तलाश में त्वरा से आगे बढना ही समयोचित निर्णय लगा। मन्दिर के आगे की लम्बी गली के दोनो तरफ की दुकानें बराबर हरिद्वार के बाजार की याद दिला रही थी, जहां से मैं हजारों बार गुजरी हूं ''वही चूडियों, मालाओं, तस्वीरों, बर्तनों और लकडी के खिलौनों की दुकानें हलवाइयों की भी ''।

'तीर्थ पूर्व के हों या पश्चिम के, उत्तर के हों या दक्षिण के, परिचित परिवेश की छाप छोडने से नहीं चूकते। यात्रा या आराधना का स्थल कोई भी हो आराध्य तो वही होते हैं। 'कै फिर लौटिके द्वारिका आयो' वाली सुदामा की मन स्थिति से बहुतों का साक्षात् हुआ होगा'''शेष सहयात्री को मथर गति की अनुमति देकर हम कुछ तेज कदमों से नर्वदा के पुल पर आ गये। मद-मद बहते नर्वदा जल को छूकर आता समीर'' मन स्वत ही आध्यात्मिक चिन्तन में डूबने लगता है। दो-चार बच्चियों 'ए माई ! पैसे दें' की दुराग्रही धौंस जमाती आगे-पीछे डोलने लगीं, लगा जैसे किसी ने चोटी पकड कर सायास खींच लिया हो। अपेक्षाकृत सौम्य वेशी इन बालिकाओं को हाथ फैलाते देखकर मुझे दया से अधिक क्रोध उपजने लगा'''भिखारी परिवार की तो नहीं ही लगती' सोचते हुए मैंने एक से डपट कर पूछा, 'क्या करोगी पैसों का ?' 'गोली खाऊंगी' कहकर वो बालिका भाग गई। दाल नहीं गलेगी, शायद उसने भी भाप लिया 'तीर्थ स्थल क्या भिखारियों की नई पौध पैदा कर रहे हैं' सोचते हुए हम धर्मशाला आ गये।

धर्मशाला में नवलजी के चतुर रसोइये इस बीच भोजन तैयार कर चुके थे। गर्म भोजन अच्छा लगा। अपने अपने बर्तन साफ किये और एक कमरे में दरी बिछाकर आंखें मूंद लीं। सुबह 2 बजे फिर प्रस्थान है।

अगले दिन भोपाल के बाहर से गुजरते हुए हम खजुराहो पहुंचे। समयाभाव में भोपाल न देख पाने का दुख था। कुछ वर्ष पूर्व हुई गैस काड की त्रासदी रह-रह-

पर हमारी आंखों में घूमती रहीं। प्रत्यक्षदर्शी न होने पर भी आज के युग की संचार सुविधाएं और दूरदर्शन हम किसी खुशी या किसी दर्द की मार्मिकता से वंचित नहीं रहने देते।

खजुराहो को 'मंदिर-पुरी' नाम दें तो अतिशयोक्ति न होगी। किन्तु सौंदर्य की प्रतिमाओं के साथ ही एक खंडित प्रतिमा भी ध्यान आकर्षित कर रही थी। सहस्त्राधिक वर्षों से अमर कला की साक्षी ये प्रतिमाएं अमर नहीं कर सकीं तो सिर्फ अपने प्राण प्रतिष्ठापकों का नाम, जिन्होंने इन्हें अपने सम्पूर्ण जीवन की तपश्चर्या के रूप में आकार दिया, स्वयं अनाम, अज्ञात रहकर इन्हें पूज्य नमनीय, वंदनीय बनाया।

खजुराहो का सम्मोहन दिल पर बहुत दिनों से था आज धीरे-धीरे उतर गया एक सुखद अहसास के साथ''।

लम्बी मीटिंग के बाद दोपहर डेढ़ बजे हम चित्रकूट में पहुंच चुके थे। पत्थरों के मध्य प्रवाहित मंदाकिनी में स्नान कर एक दूसरी बस में बैठकर यहां के तीन समीपवर्ती दर्शनीय स्थल देखने गये। गुप्त गोदावरी में ऊंचाई पर स्थित पहाड़ी गुफा में कुछ देवमूर्तियां तथा किसी अदृश्य स्थान से निकलती हुई गोदावरी की धारा थी जो प्राचीन कथा के अनुसार किसी नारी की तपस्या का फल थी। बेशुमार भीड़ सीढ़ियों पर थी। बेहद संकुचित मुख्य स्थान में कुछ-कुछ लोगों को सिपाही किश्तों में भेज और निकाल रहे थे। एक रुपया टिकट का औचित्य यहां समझ में नहीं आया।

धर्मार्थ यात्रा में हर पड़ाव के लिए पुलक की पूंजी तन-मन में नहीं होने पर भी हम वहां जाते हैं। क्यों ? शायद अनिष्ट की आशंका से बचने के लिए। ऐसी ही आशंकाएं राष्ट्र-हित में क्यों नहीं उपजतीं हमारे मन में ?'''कुंभ स्नान के लिए जा रही हूं। यह अन्तिम पड़ाव है। अगली सुबह त्रिवेणी स्नान होगा पर देख रही हूं कि एक कुंभ तो मेरे साथ-साथ ही चल रहा है। आगे-पीछे यह उमड़ता हुआ जन सागर। गाड़ियां-ही-गाड़ियां, जत्थे-के-जत्थे पैदल जाते ग्रामीण लोग। कहीं भी अभाव है भीड़ का ? बसों में, ट्रेनों में, चौराहों पर। मिसेज शशिबाला शर्मा अभी से घबड़ा गईं ! अभी तो दिल्ली दूर है, आगे-आगे देखिए होता है क्या'''।

अनसूया आश्रम सौम्य लगा, पावन भी, घने जंगल के मध्य स्थित। क्या इसी पथ से गुजरे होंगे वनवासी राजकुमार और राजरानी सीता ? क्या यहीं दिया होगा महासती ने सती सीता को दिव्य पति भक्ति का उपदेश—

> "वृद्ध रोग-वश जड़ धन हीना, अंध बधिर क्रोधी अति दीना।
> ऐसेहु पति कर किय अपमाना, नारी पाव जमपुर दुःख नाना॥"

पत्नी को विविध-विधि दीक्षित करने वाले सो धर्मशास्त्रो ! तुमने पति नामक प्राणी के लिए भी तो एक आचार सहिता बनाई होती ? राम तो माना मर्यादा पुरुषोत्तम थे। लोकाभियोग की झझा से निजात पाने के लिए प्राण-प्रिया सहचरी को त्यागा अवश्य, मगर स्वय भी आजीवन जलते रहे वियोग की ज्वाला मे तिल-तिलकर और एक पत्नी व्रती का आदर्श कायम रखा। मगर आज का समाज सीता के आदर्श को तो दोहराता है राम के नही।

ऊपर मन्दिर मे अनसूया की जीवन-कथा की बहुआयामी झाकिया आकर्षक रूप मे सजी थी। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, त्रिदेवो को बाल रूप मे खिलाती हुई'' ब्रह्मानी, लक्ष्मी और पार्वती अपने-अपने पति की याचना करती हुई'''सुहाग चूडे चढ रहे थे और प्रसाद मे पुन. मिल भी रहे थे' 'स्फटिक-शिला तक पहुचने-पहुचते रात हो चुकी थी'''कुछ सीढिया चढकर धवल पत्थर की शिला। अरण्य काड मे तुलसी ने भी कहा है—

एक बार चुनि कुसुम सुहाए, निज कर भूषण राम बनाए।
सीतहि पहिराए प्रभु सादर, बैठे फटिक सिला पर सुन्दर।

और इन्द्रपुत्र जयन्त का दुस्साहस भी यही जागा था—

सीता चरन चोच हति भागा, मूढ मदमति कारण कागा।

108 वर्ष के सबल स्वस्थ ऋषि के दर्शन कर बस मे आ गये। चित्रकूट के इस विशाल क्षेत्र मे, जहां राम ने बनवास काल का काफी समय गुजारा यह बहुत से दर्शनीय स्थल छूट गये थे'''मगर हमे तो प्रयाग-धरा पुकार रही थी, रविवार की रात डेरा फैला चुकी थी।

कुछ घटे बाद हम इलाहाबाद की सीमा मे थे, मगर अप्रैल 86 मे हरिद्वार का कुभ नहाया मेरा मन, मेरी आखें यह मानने से इकार कर रही थी। मैं देखना चाह रही थी। रोशनी मे नहाया शहर मगर यहा तो ब्लैक-आउट का सा माहौल नजर आ रहा था। न जाने कितने दोराहो-चौराहो से गुजर जब ड्राइवर ने इजन बद किया तो हम विशाल रेलवे पुल के नीचे के मैदान मे थे और हमारे चारों ओर थी असख्य बसें-ही-बसें। मैदान मे भी रोशनी बस कामचलाऊ ही थी।

थकान के कारण रात हो आई। हल्की-सी हरारत के बावजूद मजिल को पहुच मे मन आह्लादित था। घडी की सुई पाच के पड़ौस मे पहुच रही थी। कपडे और लौटे संभालकर हम झटपट त्रिवेणी पथ की ओर बढ़ चले। हमारे सामने था गीले जमे हुए रेत का अन्तहीन रास्ता और रोशनी की एक अन्तहीन कतार।

एक ओर कुछ ऊचाई पर लोहे के लम्बे पाटिये जोड़-जोड़कर सड़क बनाई गई थी जहां से जीपें और कारें अनवरत आ-जा रही थी। भीड'''? लगता था

हो जाए, अशक्त हो जाए'''तो ?

मुझे लगा उ० प्र० सरकार ने कुंभ के साथ क्या अनपेक्षित रूप से आरोपित अवैध-शिशु सा व्यवहार नहीं किया'' ? दूध की सुविधाएं, खान-पान की सुविधाएं जगह-जगह पर देना क्या व्यवस्था के अन्तर्गत नहीं आता' ? 103 करोड़ की राशि किस पर खर्च की गई है ? इन चन्द कारों के राजपथ के लिए ? आम जनता तो रेत में ही गुजर रही है'''खैर, 17 कि० मी० फिर आना पड़ा।

एक सिपाहीजी नजर आए। खिसियानी बिल्ली खंभा नोंचे। इनकी सशक्त वर्जना के बावजूद मैं उसी से उलझ पड़ी। क्या व्यवस्था है आप लोगों की ? इतने बड़े एरिया में न चाय है, न कुछ खाने को, क्या इलाहाबाद में अकाल पड़ गया है ? 'हम क्या जानें, सरकार से पूछिए, हमारी ड्यूटी तो यहां खड़े रहने की है।' हां वो देखिए, उधर चाय है'''बस अड्डे के क्षेत्र में चमकते एक ठेले ने वर्दी का मान रख लिया।

सीट पर अधलेटे, पांव सहलाते हुए मठरियों की जुगाली कर ही रहे थे कि एक महिला सहयात्री रोती-कलपती आई। पता चला, उनका बटुआ किसी ने साफ कर दिया जिसमें कुल पूंजी डेढ़ हजार थी। सुनकर आंखें चौड़ी हो गईं' दुःख भी हुआ। सबने अपनी-अपनी अंटिया भी संभाली, आर्थिक सहयोग की भूमिका भी बनने लगी ' पर वाह री दिलेर रमणी ! साफ इंकार कर दिया हां उधार स्वरूप कुछ ले लिए।

संक्षिप्त ठहराव में समय की बड़ी कीमत होती है। 'इलाहाबाद आये और आनन्द भवन देखा तो क्या आनन्द आया' सोचकर हमने पांवों को पुनः थपथपाया। करीब 1 कि० मी० लम्बे रेलवे पुल से गुजरना पड़ा। यहां वन-वे-ट्रैफिक था, हम चल नहीं, सरक रहे थे। सिर पर से कितनी ही ट्रेनें अप-डाउन की धड़धड़ाती हुई निकल गईं। नीचे बह रही थी त्रिवेणी। दिल्ली का यमुना ब्रिज याद आ रहा था।

पुल पार रिक्शे मिले। हम तीन दंपति आये थे। तीन रिक्शे किये। कुछ सहयोगी जा चुके थे। कुछ बाद में आयेंगे। जहां बस नहीं जा सकती थी वहां स्वच्छन्द भ्रमण की छूट थी। आनन्द भवन जनता के लिए खुला था हर कमरा नेहरू परिवार की स्मृतियों को जी रहा था। तत्कालीन दैनिक उपयोग की वस्तुओं से भी और चित्रों से भी। वहां भी अपार जनसमूह था' । आजाद पार्क रास्ते में ही बहुत दूर छूट गया था। चलने की हिम्मत भी चुक गई थी। अस्थी-सी दुकान पर चाय-नाश्ता किया। वापस आये।

दाल-बाटी तैयार थी। बस की छत से उतार कर बाहर जमीन पर ही बिस्तर लगाये गये। चार रातें सफर में गुजारने के बाद आज शरीर को पांच फुट की छूट मिली थी। चारों ओर आती-जाती बसों का शोर। यहां वहां पड़ी जूठनों के ढेर। पानी की आती हुई टंकियों पर मची चिल्ल-पौं'''। मगर पता नहीं गंगा की

भारत के हर गाव, हर शहर की एक सडक यहा आकर मिल गई है। रग रूप मे समानता होने पर भी भिन्न-भिन्न वेशभूषा धारी अपनी अलग पहचान दिखा रहे थे। ग्रामीण डेरे की परवाह नही करते। सिर पर रखे गठ्ठर मे भोजन और ठहराव का पूरा समाधान समेटे ग्रामीण महिलाए गीत गाती झपाके से जा रही थी, अपनी भाषा मे गगार्चना के गीत गाती हुई।

करीब 6 कि० मी० चलकर हम त्रिवेणी तीर पर थे। प्रभात के उजास मे सब कुछ स्पष्ट था। जल भी, स्नानार्थी भी। पक्के घाट कही नही। दूर तक रेत-ही-रेत। सगम पर पहुचने के लिए नाव की प्रत्याशा मे इधर-उधर डोलते रहे। मगर आज दाल गलती नही देखकर कल पर छोडकर फिर इसी तीर नहाना तय किया'।

शीतल जल'''मोक्षदायी अमृत मे परिपूर्ण जल हमारी हथेलियो मे था, हमारे पावो के नीचे था। दूर तक चले जाओ घुटनों तक जल'''डूबने-बहने का कोई अंदेशा नही। फिर भी प्रतिरक्षा-नावें चारो ओर घूम रही थी। डुबकिया लगाई। एक-दो-तीन-चार'''ये इन्दु की ' ये लता की' 'ये रश्मि की'''ये उसके पति की' 'ये संजू की ' और ये पल्लव की' 'वरिष्ठता क्रम से। और फिर दूर-पास के सभी रिश्तेदार परिचित कई प्रश्न चिह्न आखों मे कौंध गये' 'और हमारी ? लो भई अब परिवार-वाइज ये खुर्जा वालो की, ये जहागीराबाद वालो की'''ये मुजफ्फरनगर वालो की ''ये हरिद्वार वालो की' 'ये कैलाशजी हर की ये सुरेशजी हर की ये सावित्री बहिनजी हर की'' और भी और अन्त मे सभी भूले-बिसरो की'''शर्माजी ने भी हाथ बटाया।

सूर्य को जलार्पण किया'' गगा पूजा की'''और फिर एक भरपूर नजर अपने आस-पास डाली। चारो ओर छोटी-बडी नावें-ही-नावें और डुबकिया मारते लोग'''आखिर जीवन का दूसरा सपना पूरा हुआ।

और अब लौटने का रुख किया तो जबान पर सिर्फ 'चाय' शब्द ललक रहा था। कुछ ऊचे चढे तो केवल एक बडी-सी मिठाई की दुकान नजर आई जहा दान पूजा के लिए लड्डू आदि मिल रहे थे।

पता नही, हमे ही नजर नही आ रही या मेला प्रबन्धक हमे यू० पी० एम० सी० की परीक्षा का प्रश्न-पत्र थमा रहे थे। न कही गर्मागर्म समोसा 'न कचौरी'''न नमकीन, न चाय। पेट अकाल क्षेत्र घोषित हो चुका था और 7 कि० मी० का रास्ता फिर सामने था। मैं डायबिटीज की मरीज, पाव भी जवाब दे चुके थे। चलो किसी टैक्सी का ही पता करते हैं। मगर पता चला टैक्सी इधर 'एलाउ' नही है। फिर'''ये कारें'''? ये जीपें ? ये स्कूटर ? ये तो धडाधड आ-जा रहे हैं। वी० आई० पीज० के लिए सब जगह सुविधाएं हैं। स्थानीय लोगों को निजी वाहन लाने की सुविधा है। मगर ये अगणन यात्री ? इनमे से कोई बीमार

हो जाए, अशक्त हो जाए'''तो ?

मुझे लगा उ० प्र० सरकार ने कुंभ के साथ क्या अनपेक्षित रूप से आरोपित अवैध-शिशु सा व्यवहार नही किया'''? दूध की सुविधाए, खान-पान की सुविधाए जगह-जगह कर देना क्या व्यवस्था के अन्तर्गत नही आता ? 103 करोड की राशि किस पर खर्च की गई है ? इन चन्द कारो के राजपथ के लिए ? आम जनता तो रेत से ही गुजर रही है'''खैर, 17 कि० मी० फिर आना पडा।

एक सिपाहीजी नजर आए। खिसियानी बिल्ली खभा नोंचे। इनकी सशक्त वर्जना के बावजूद मैं उसी से उलझ पडी। क्या व्यवस्था है आप लोगो की ? इतने बड़े एरिया में न चाय है, न कुछ खाने को, क्या इलाहाबाद मे अकाल पड गया है ? 'हम क्या जानें, सरकार मे पूछिए, हमारी ड्यूटी तो यहा खडे रहने की है।' हा वो देखिए, उधर चाय है'''बस अड्डे के क्षेत्र मे चमकते एक ठेले ने वर्दी का मान रख लिया।

सीट पर अधलेटे, पाव सहलाते हुए मटरियों की जुगाली कर ही रहे थे कि एक महिला सहयात्री रोती-कलपती आई। पता चला, उनका बटुआ किसी ने साफ कर दिया जिसमे कुल पूजी डेढ हजार थी। सुनकर आखें चौडी हो गईं'' दुख भी हुआ। सबने अपनी-अपनी अंटिया भी सभाली, आर्थिक सहयोग की भूमिका भी बनने लगी'''पर वाह री दिलेर रमणी ! साफ इन्कार कर दिया हा उधार स्वरूप कुछ ले लिए।

संक्षिप्त ठहराव में समय की बडी कीमत होती है। 'इलाहाबाद आये और आनन्द भवन देखा तो क्या आनन्द आया' सोचकर हमने पावों को पुनः थपथपाया। करीब 1 कि० मी० लम्बे रेलवे पुल से गुजरना पडा। यहां वन-वे-ट्रैफिक था, हम चल नहीं, सरक रहे थे। सिर पर से कितनी ही ट्रेनें अप-डाउन की धडधडाती हुई निकल गई। नीचे बह रही थी त्रिवेणी। दिल्ली का यमुना ब्रिज याद आ रहा था।

पुल पार रिक्शे मिले। हम तीन दपति आये थे। तीन रिक्शे किये। कुछ सहयोगी जा चुके थे। कुछ बाद में आयेंगे। जहा बस नही जा सकती थी वहा स्वच्छन्द भ्रमण की छूट थी। आनन्द भवन जनता के लिए खुला था'' हर कमरा नेहरू परिवार की स्मृतियों को जी रहा था। तत्कालीन दैनिक उपयोग की वस्तुओ से भी और चित्रों से भी। वहां भी अपार जनसमूह था'। आजाद पार्क रास्ते मे ही बहुत दूर छूट गया था। चलने की हिम्मत भी चुक गई थी। अच्छी-सी दुकान पर चाय-नाश्ता किया। वापस आये।

दाल-बाटी तैयार थी। बस की छत से उतार कर बाहर जमीन पर ही बिस्तर लगाये गये। चार रातें सफर मे गुजारने के बाद आज शरीर को पांच फुट की छूट मिली थी। चारो ओर आती-जाती बसों का शोर। यहां वहा पडी जूठनों के ढेर। पानी की आती हुई टंकियो पर मची चिल्ल-पौं'''। मगर पता नहीं गया को

गहर भागी ठनी बजार ??? पर फाड़िया देकर सुला गई। इतनी गहरी इतनी मीठी नींद तो किसी राजमहल के बीच नहीं पर भी किसी को न आई होगी।

सुबह हम सभी 55 प्राणी दो नावों पर सवार होकर सगम की ओर जा रहे थे। नाव-के-नाव भर यात्री किलोल कर रहे थे। यह गंगा है। यह यमुना और इधर विलुप्त सरस्वती। केवट अर्थात् गाइड की भूमिका अदा कर रहा था। सगम पर पहुंच कर उसने अपनी नाव भी दूसरे-दस की नावों के साथ जोड़ दी। 'नारियल, दूध चढ़ाने का यहा बड़ा महात्म्य है।' बताने वाले कई गुरु थे। स्नान किया, फिर दान पूजा का पुण्य भी लूटा''' खाते में जमा हुआ या नहीं ये तो चित्रगुप्तजी ही जानें। हमारी असली सी० आर० तो उन्हीं के कब्जे में है न'''।

वहा से लौटे तो सभी के हाथ मे गगा जल की केनें थी जो रोती हुई सगर माई-गुरी लौट रही थी गाना-खाकर 4 बजे बस ने वह स्थान छोड़ दिया। लक्ष्मणजी के निर्देशानुसार सारे शहर का चक्कर लगाकर जब हम कुभ के दूसरे हिस्से में आए तो एक विशाल जुलूस गुजरता देखा। कम-से-कम एक दर्जन बैंड''' हर बैंड के पीछे शानदार पीठिका पर किसी मत विशेष का रिक्त आसन और पैदल चलते हुए असख्य साधु, पुलिस और जनता किसी अखाड़े विशेष की शोभा यात्रा थी ।

कुछ कि० मी० और चलकर सत समाज आ गया। पडाल-ही-पडाल'''एक परिचित रामद्वारे के पडाल में शरण लेकर फिर हम चल पड़े वहा तक जहा तक पाव चल पाएंगे। प्रथम पडाल मे गुजराती सेठ बहुतायत मे नजर आये। भोजनालय का लम्बा-चौड़ा हॉल एक तरफ था' 'जहा कार्यालय से कूपन लेकर चाय कचौड़ी इच्छित वस्तु खरीद सकते थे। यहा पहली बार अच्छी चाय मिली। गोली खाकर दो कुल्हड़ पी''। समीप के एक खाली टेन्ट में कोई प्रदर्शनी नजर आई। दुनिया भीड़ देखकर जाती है, पर मुझे इसकी जनशून्यता ने आकर्षित किया' ।

मणिशिखा, 43, कैलाश बोस स्ट्रीट, कलकत्ता की ओर से श्री पुष्कर लाल केडिया की कलम और तूलिका के जादू से 'हमारा विराट स्वरूप' और देवों का मत्रिमडल शीर्षक से जो प्रदर्शनी लगी थी वह अनुपम लगी। स्वय मनुष्य और देवों को बड़े वैज्ञानिक रूप से परिभाषित किया गया था।

सच ! किसी तात्कालिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए नवगठित दल के साथ समान उद्देश्य के लिए यात्रा करने मे बड़ा धैर्य चाहिए। सब की अपनी-अपनी डफली अपने-अपने राग थे। यहा कहा, कब कितना रुकना है क्या-क्या देखना है आदि मुद्दों मे जनतत्रीय वातावरण रहता। नवल बस मालिक और पुरुषोत्तमजी संचालक होने पर भी सक्षम सत्तारूढ दल की भूमिका अदा नही कर पा रहे थे''' विरोधी दल हर समय काबिज रहता। हम तो जनता बने रहकर ही खुश थे।

रोशनी की गंगा इस क्षेत्र में बह रही थी'' किसी शिविर में सैंकड़ों साधुओं का सहभोज चल रहा था, किसी में आरती, किसी में अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रम। एक बहुत बड़े पंडाल में दूरदर्शन के बड़े पर्दे पर रामायण का प्रसारण हजारों दर्शक देख रहे थे' 'हम अस्थायी पुल पर कुछ दूर तक गये। बड़े-बड़े ड्रमों को जोड़कर बनाया गया यह पुल शहर के उस छोर को इस छोर से मिला रहा था' पुल बेहद लम्बा था लकड़ी के पट्टों पर से गुजरते वाहनों की आवाज दूर-दूर तक गूंज कर मानों इन अमख्य अनाहूत अतिथियों का खैरमकदम करती थी।

लौट कर आये तो अपने पंडाल में गुजराती महिलाएं भजन गा रही थी। वहीं पुआल पर बिस्तर बिछाकर लेट गये। नीचे रेतीली ठंडी जमीन' तट से आती शीतल हवा' 'बावजूद जुराबों के पांव सुन्न बने रहे।

सुबह मुंह अंधेरे उठकर रवाना हुए और दोपहर तक हम बनारस के बुद्ध-विहार में शरण ले चुके थे। शाम को बस में बैठकर नगर भ्रमण को निकले। बनारस विश्व विद्यालय का भव्य प्रवेश द्वार देखा और साश्चर्य देखा उसका 12 कि० मी० का विस्तार। मालवीयजी ने दान की राशि से जिस विश्व विद्यालय की नींव बर्षों पूर्व डाली थी आज वह भारत में प्रथम स्थान पर है।

भगवान शंकरजी के त्रिशूल पर बसी इस प्राचीनतम नगरी काशी का ज्ञान सारे देश के लिए नैतिक तौर पर मान्य होता है। देश-विदेश के अनेक विद्वानों को अपने मत की शुद्धता प्रमाणित करने के लिए काशी आना पड़ा था। एक उक्ति प्रसिद्ध है कि जिसे कहीं भी ठौर-ठिकाना नहीं मिलता उसे काशी में शरण मिल जाती है।

बिड़ला का विश्वनाथ का मन्दिर काफी विशाल क्षेत्र में फैला हुआ था। तुलसी मानस मन्दिर में लव-कुश की मूर्तियां बहुत सुन्दर थी। वहां चप्पलों से भी हाथ धोना पड़ा। दो-चार और छोटे-मोटे मन्दिर देखकर वापस आये।

अगली सुबह गंगा घाट जाना था। 4 कि० मी० तक उ० प्र० परिवहन की बस से तथा आगे पैदल गये। दशाश्वमेध घाट पर एक तिक्त अनुभव से गुजरना पड़ा शर्माजी पानी की नई कैन लेने के लिए कुछ पीछे रह गये। घाट पर जाने के दो रास्ते थे। सहसा ही हर परिचित यात्री भीड़ में एकाकार हो गया। मैंने स्वयं को घाट पर अकेला पाया। न आंखों पर चश्मा, न पांवों में चप्पल, न बगल में पर्स। यह हार्दिक सुझाव उस दिन पतिदेव का ही था। इधर-उधर ढूंढती रही। मगर भीड़ के उस महासागर में कोई पहचानी शक्ल नजर नहीं आयी। मुझे जबर्दस्त रोना आ रहा था। 'भीड़ में अकेला' किसे कहते हैं आज समझ में आया। एक-दो से पैसा सम्भालने को कहा तो 'न भाई' कहकर साफ मुकर गये। असंवेदनशीलता इसे कहते हैं। पंडे के पास पैसा टिकाने के लिए भी मुद्रा चाहिए। अन्त में एक बिहारी दम्पति ने मेरी व्यथा को समझा, सहानुभूति दिखाई ढाढस बंधाया और

थैला सम्भालने लगा । मुझे लगा कि मानवता अभी मरी नही है। गिनती की हुचकिया मारकर मै बाहर आई। रास्ते मे मिल जायेंगे सोचकर मै उन्हीं दोनों के साथ विश्वनाथ मन्दिर के निमित आगे बढी कि एक आवाज़ आई। 'अरे बहिन जी !' मोटर मालिक नवल ने सहसा आकर मेरी बाह पकड ली। शर्माजी कभी से परेशान हो रहे हैं। आपने एनाउन्समेंट सुना होगा ?

'मैंने कुछ नही सुना' मेरा आक्रोश आसुओ मे फूट रहा था। माना मेरे पास चश्मा नही था'' उन्हे तो ध्यान रखना था। कुछ दूर दूसरे घाट पर सब प्रतीक्षारत थे। ये दौडकर आये पर मैंने मुह फेर लिया''।

फिर दो नावो पर बैठकर घाटो-घाट होते हुए सभी मन्दिरो की यात्रा की। हरिश्चन्द्र घाट देखा जहा सत्य की रक्षार्थ राजा हरिश्चन्द्र ने स्वय को एक डोम के हाथो बेच डाला था। मणि कणिका घाट दिखा जहा कबीर ने रामानन्दजी को साग्रह गुरु बनाया था।

फिर आए काशी विश्वनाथ के प्राचीन मन्दिर की सकरी गली मे। कुम्भ की असली भीड यहा थी। पावो मे जैसे फैवीकोल लग गया था। घटो एक इच नही सरक पायें। अन्त मे एक झटके के साथ जब राह मिली तो हम दूसरी गली से बाहर आ गये। दर्शन शाम को शान्ति से किये।

सुबह अयोध्या के लिए बस मे बैठे तो धर्मशाला का मैनेजर एक तोहमत ले आया। उसके एक भाई ने वही बनारसी साडिया एक कमरे मे जमा रखी थी। कुछ यात्रियो को बेची थी 700 रुपये किसी पर बाकी है उसका आरोप था। सबने कहा—हमने चुका दिए ! पहचान वह पाया नही। यह भी सम्भव है किसी अन्य पार्टी का आदमी ले गया हो। खूब कहा-सुनी हुई। सबने कहा—थाने चलो तो वह चुप हो गया।

चले तो मन खिन्न था। यात्रा का कोई अन्त नही, इसका भी, जीवन यात्रा का भी। राम की जन्मभूमि अयोध्या देखी। सरयू-तट पर ऐतिहासिकता के सन्दर्भ मे शका जाहिर करने पर गाइड ने बताया 'सरयू वही है, मिट्टी वही है, स्थान वही है, और सब कुछ कितनी ही बार बदल गया।' अयोध्या मे राम जन्मभूमि विवाद से जुडी बाबरी मस्जिद और राम मन्दिर देखा'''। विवाद चाहे कुछ हो इतिहास चाहे कुछ हो, मस्जिद की कोख मे मन्दिर मे प्राण देखकर जल मे कुम्भ, कुम्भ मे जल की तरह लगा। राम और रहीम एक नजर आए। सारे देश मे शोर मचा झगडे हुए पर यहा कुछ नही। अखड कीर्तन'' दर्शनार्थियो की अनवरत भीड़ कनक मन्दिर की मूर्तिया बेहद सौम्य लगी दुग्ध-धवल-छवि·

और फिर राम के त्रेता युग मे कृष्ण के द्वापर आ गए। तीन मोर से ज्या मथुरा देखी। ब्रजभूमि के वो करील-कुज देखे जिन पर रसखान ने कलधौत कोटिन धाम भी न्यौछावर कर डाले थे। रमण-रेती मे लोटने का सुख

अनूठा था। और फिर बालाजी को मत्था टेककर हम फिर आ गये अपने कलयुग मे'''

जब-तब मन जुगाली करने बैठ जाता है। क्यो जाते हैं हम तीर्थों पर ? क्या अन्दर का सारा क्लुष घुल गया ? कहा घुला ? वही तो है राग-द्वेष, वही तो है लालसाओ और आकाक्षाओ का अनन्त आकाश ' महगाई-भत्ते की एक और घोषणा का इन्तजार'''

सब कुछ भूल जाता है। यात्रा का कष्ट-असुविधाए याद रहती हैं सिर्फ त्रिवेणी का वह असीम जल विस्तार, वह तट से आती ठडी हवा ''और वह अपार भीड़''' भीड़ के एक अश ही तो हैं हम सब'''सागर की एक बूद'' मन बार-बार कहता है—

चल रे मन ! मद समीरे
त्रिवेणी तीरे।

□
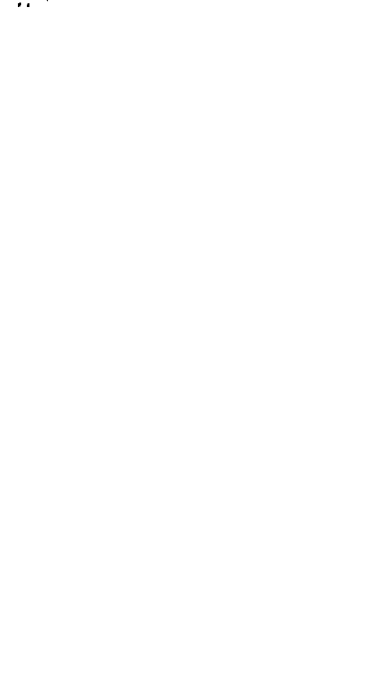
अनूठा था। और फिर बालाजी को मत्था टेककर हम फिर आ गये अपने कलयुग मे···

जब-तब मन जुगाली करने बैठ जाता है। क्यो जाते है हम तीर्थों पर ? क्या अन्दर का सारा कलुष धुल गया ? कहा धुला ? वही तो है राग-द्वेष, वही तो है लालसाओ और आकाक्षाओ का अनन्त आकाश · महगाई-भत्ते की एक और घोषणा का इन्तजार···

सब कुछ भूल जाता है। यात्रा का कष्ट-असुविधाए याद रहती हैं सिर्फ त्रिवेणी का वह असीम जल विस्तार, वह तट से आती ठडी हवा · और वह अपार भीड··· भीड के एक अश ही तो हैं हम सब···सागर की एक बूद···मन बार-बार कहता है—

चल रे मन ! मद समीरे
त्रिवेणी तीरे।

□

मन भरा नहीं मणिकर्ण से

दुर्गा भण्डारी

हिमाचल भारतीय प्राकृतिक सौन्दर्य का साम्राज्य है। चारों तरफ हिमाच्छादित पर्वतमालाएं हैं। गगनचुम्बी चीड़ और देवदार देखकर लगता है जैसे ये प्रति पल मानव को ऊर्ध्वमुखी होने को प्रेरित कर रहे हैं। इस फल-फूलों से लदी धरती को देखकर ही, शायद कभी किसी ने नन्दन कानन की कल्पना की होगी। यहां का जन-समूह भी बिल्कुल प्रकृति का सहचर है, वैसा ही सुन्दर-सुशील, सौम्य, सरल, सुडौल है। साहस उनके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। तभी तो वे उस विपरीत कठिन प्राकृतिक परिस्थितियों में भी कितना सहज जीते हैं। कितनी विडम्बना, कितना विरोधाभास है। एक तरफ इतना सुन्दर, आकर्षक भू-क्षेत्र, दूसरे उसमें रहने वालों के जीवनयापन की इतनी कठिन परिस्थितियां। यह कहना भी अच्छा लगता है कि वहां कभी घने बादल तो कभी वर्षा, कभी ओले तो कभी तेज सोने-सी धूप तो कभी बर्फीली-तूफानी हवा और फिर आदमी को अन्दर तक कंपा देने वाली सर्दी यह सब प्रकृति के विविध रंग, कभी-कभी तो एक दिन में रखे जा सकते हैं। फिर भी उनमें जीवन की कितनी आस है, विश्वास है, प्रभु में आस्था है, कितना संतुलित व्यवहार है उनका।

हिमाचल के विशेष दर्शनीय स्थानों में कुल्लू, मनाली, रोहतांगपास, शिमला, कुफरी, मण्डी, धर्मशाला आदि देखकर तो दर्शक का मन बाग-बाग हो ही जाता है किन्तु मणिकर्ण नहीं देखा तो कुछ भी नहीं देखा। क्योंकि मणिकर्ण में प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ-साथ हमारी प्राचीन सांस्कृतिक और भावनात्मक एकता के भी दर्शन होते हैं। ऐसा लगता है कि मणिकर्ण हिमाचल की आत्मा है, जो राष्ट्रीय एकता का संदेश देश-विदेश के यात्रियों में प्रसारित करती है। यह कुल्लू से करीब 45 कि० मी० दूरी पर घने ऊंचे पहाड़ी क्षेत्र में बसा है। भून्तर से व्यास नदी पार

करने के पश्चात् अति विकट सर्पाकार सड़क जाती है। सड़क पर एक तरफ गगनचुम्बी पहाड़ियां हैं जो कहीं-कहीं तो झुककर बस पर गिरती-सी लगती हैं। दूसरी तरफ पार्वती नदी का तूफानी प्रवाह। बस चालक के लिए वहां प्रतिपल परीक्षा का पल होता है, हर क्षण असीम साहस व कौशल का परिचायक होता है। हर मोड एक नई जिन्दगी-सा लगता है। यात्री उस निकटता मे जीवन-मौत के झूले मे झूलने-से जान पडते हैं और सोचते हैं अगर बस गिर जाय तो पार्वती का यह तूफानी प्रवाह उसका एक कण भी अवशेष के रूप मे नही छोडेगा।

पूरे रास्ते मे ऊंची पर्वतमाला पर दूर-दूर बनी झोपडियां वहां के जनसमूह के कठिन जीवनयापन और श्रम-क्षमता को परिलक्षित करती है। जगह-जगह फलो के व्यापारी उन भोले पर्वत पुत्रो को तोल, मोल, माल और दाम मे ठगते दिखाई देते हैं।

विकट रास्ते को पार करने के बाद जब हम मणीकरण की धरती पर पहुंचते हैं तो एक नजर मे ही वहां का पावन वातावरण विभोर कर देता है। बस स्टॉप के सामने पार्वती पर बने पुल के पार करने पर तो दर्शक जैसे ठगे-से रह जाते हैं। यह क्या, एक ही परिसर मे प्राचीन राम मन्दिर और भव्य गुरुद्वारा भी। दोनो धार्मिक स्थान हिन्दू सिख भाई-भाई का सदेश देते से जान पडते है। प्रकृति भी दोनो को समान रूप मे अपनी पावन गोद मे समेटे दुलारती, सवारती, पालती, पोसती-सी लगती है। दोनो के सामने तीव्र वेग से प्रवाहित पार्वती अपनी कल-कल छल-छल की सरगम मे सास्कृतिक एकता के गीत गाती-सी जान पडती है। दोनो मन्दिरो के प्रागण मे जगह-जगह गर्म पानी के प्रपात उस पर्वतीय शीतलता को अपनी गर्माहट देकर पर्यावरण को सतुलन प्रदान कर रहे हैं। एक ही स्थान पर अति शीतल और अति गर्म पानी का अनोखा सगम देखकर हम प्रकृति की रहस्यमयता के समक्ष नतमस्तक हो जाते हैं। मन्दिर या गुरुद्वारा दोनों मे ही 'अतिथि देवो भव' की आदर्श भावना से ओत-प्रोत, पुजारी लोग गर्म-गर्म चाय से स्वागत करते हैं। रास्ते की विकटता और शीतलता के बीच यात्री को कोई चाय पिला दे तो उस चाय का कहना ही क्या। चाय न पीने वाला भी यह देखकर चाय पीने को लालायित हो जाता है कि यह चाय गर्म प्रपात से बनायी गयी होती है।

रहने, खाने, सोने तथा चाय नाश्ता आदि की व्यवस्था वहां पर पूर्ण सम्मान व स्नेह के साथ नि:शुल्क उपलब्ध है। अरे वाह ! इन गर्म पानी के कुण्डों मे स्नान करने के पश्चात् तो सारी थकान ही गायब हो जाती है। एक अजीब ताजगी का अनुभव होता है। कहते हैं, इन गर्म प्रपातो मे कुछ ऐसे रसायन मिले हैं, जो चर्म रोगों को दूर करते हैं। भोजन शाला मे गर्म प्रपातो से तैयार किया गया अति सात्विक भोजन सैकड़ों यात्री एक साथ बैठकर, बिना किसी भेद-भाव के, खाते हैं। तब लगता है यह भारतीय भावात्मक एकता का प्रसाद है। दोनो स्थानों पर

अपने-अपने तरीके से पूजा-अर्चना होती है। प्रवचन, आरती, भजन, कीर्तन आदि
चलते रहते हैं। यात्री दोनो स्थानो पर समान रूप से श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।
एकमा भोजन एक ही स्थान पर बैठकर भिन्न-भिन्न धर्म जाति या प्रान्तो के लोग
प्रेम मे खाते हुए देखकर ऐसा लगता है भारत मे अनेकता नही केवल एकता ही
है।

राम मंदिर अति प्राचीन है। इस स्थान से जुडी एक किवदन्ती भी है कि एक
बार भगवान शकर भगवती के साथ इस सुरम्य स्थान से निकले। वहा के सौंदर्य
को देखकर भगवान ने कुछ समय वही रहने का निश्चय किया। एक दिन जल-
क्रीडा के समय पार्वती के कान की कर्णमणि खो गयी। उसे खोजने का कार्य शिव
के गणो को सौपा गया। कर्णमणि के न मिलने पर शेषनाग क्रोध मे आकर गणो पर
फुकार करने लगे। ऐसा विश्वास किया जाता है कि उसी फुकार के प्रतीक के रूप
मे वहा ये गर्म प्रपात आज भी खौलते से दिखाई देते हैं। यह नदी पार्वती के नाम
से जानी जाती है। यहा मे तीन दिन का दुर्गम चढाई भरा मार्ग पार करने पर नदी
का उद्गम 'खीर गगा' नामक स्थल आता है जो प्रकृति का अनुपम शृगार है।

गुरुद्वारे मे जाने पर ऐसा अनुभव होता है जैसे हम किसी हिन्दू मन्दिर मे
खडे हैं। चारो तरफ गीता के श्लोक तथा राम, कृष्ण, बुद्ध आदि की तस्वीरें ल
हैं। उस गुरुद्वारे मे कही भी धार्मिक कट्टरता, अलगाव, साम्प्रदायिकता दिखा
नही देती। वहा सिख पुजारी लोग सभी का समान रूप से स्वागत और आ
सत्कार करते हैं। एक ही परिसर मे दोनो स्थान एक आत्मा दो शरीर के स
लगते हैं। उस पावन आध्यात्मिक पर्यावरण से बिछुडते समय मन कहता है,
भरा नही मणिकर्ण से।'

के प्राँगण

दोषी कौन

शकुन्तला दायमा

उस वृद्धा की आँखों से लगातार बहने वाले आंसू उसकी आखों से न बहकर आज मेरी आखो से बह रहे हैं। एक शिक्षण सस्था की प्रशिक्षित अधिकारी उस अशिक्षित महिला के सामने अपने-आपको बौना महसूस कर रही है। आज उसके मन को तसल्ली देने के लिए मेरे पास कोई उपाय नही बचा। इससे पहले भी मैंने उसको कई बार तसल्ली दी है। उसकी निराशा को मैंने कई बार आशा मे बदलने का प्रयास कर उसके दुख को मात्र कम ही किया है।

पहली बार उस वृद्धा ने कृशकाय शरीर, मैली-कुचैली साडी, जिस पर कई पैबन्द लगे थे, झुर्रियों भरा चेहरा, पोपला मुह, कापते हाथ-पैर लिए गिडगिडाते शब्दों मे उस बालक के विषय मे प्रार्थना की थी। तब मैं द्रवित हो चली थी।

उस बच्चे का नाम शायद राजेन्द्र बताया था। गरीबी से परेशान हो उसके माता-पिता कमाने किसी शहर चले गये, उस समय राजेन्द्र पाच वर्ष का था। शहर जाकर राजेन्द्र के पिता ने कमाने का प्रयास किया परन्तु तीन वर्षों के अथक प्रयास के बाद भी राजेन्द्र के पिता रोजी-रोटी का भली प्रकार जुगाड न बैठा सका। परन्तु शहर में वह अपनी इकलौती सन्तान राजेन्द्र को स्कूल भेजना न भूला था। राजेन्द्र शहर मे कक्षा तीन का विद्यार्थी था। पिछले तीन वर्ष राजेन्द्र के पिता ने शहर में रहकर कठिन परिश्रम करते हुए भी अर्थ सकट मे किसी तरह जूझते हुए गुजार दिये। जब धैर्य का बांध टूट गया तो एक दिन अचानक पत्नी व बच्चे सहित गाव लौट आया।

गांव मे उसकी वृद्धा मा पहले से ही पड़ौस के सहारे अपना गुजारा कर रही थी। वह अपने पुत्र को परिवार सहित लौटा देखकर बड़ी प्रसन्न हुई। परन्तु निर्धन की प्रसन्नता कब चिरस्थायी होती है। परिवार के भरण-पोषण को

लेकर झगड़ा होने लगी। धीरे-धीरे यह झगड़ा इतना बढ़ा कि राजेन्द्र का पिता बिना बताये कहीं चला गया और उसकी माँ सास से लड़-झगड़कर पीहर चली गयी।

बेचारा राजेन्द्र इन झगड़ों से अनभिज्ञ दादी के पास रह गया। आस-पड़ौस के सहारे पलने वाली दादी ने उस नन्ही कली को सीने से लगा भली प्रकार परवरिश करने का निश्चय किया। परन्तु उसका दृढ़ निश्चय क्या विश्वास में बदल गया?

उस वृद्धा की प्रार्थना थी कि मैं किसी तरह उस बच्चे को कक्षा चार में दाखिल करवा दूं। जब मैंने उन्हें डी० सी० के बारे में पूछा तो उसने सब तरह से असमर्थता व्यक्त की। अन्त में मैंने उसे अपने स्तर पर पंचायत समिति के अध्यापकजी से बात कर कोई हल निकालने का आश्वासन दिया। मैंने अध्यापकजी से जब बात की तो उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि वह बी० डी० ओ० साहब से अनुमति लेकर उस बालक को स्वयपाठी छात्र के रूप में चौथी कक्षा की परीक्षा दिलवाकर पांचवीं कक्षा में अपनी शाला में प्रवेश कर लेंगे।

मैं आश्वस्त हुई। उस वृद्धा दादी को भी आश्वस्त करने का मैंने प्रयास किया। परन्तु उसे चैन कहां था। सत्र का समापन समीप आया।

जब वार्षिक परीक्षा प्रारम्भ हुई तो वह वृद्धा पुन: मेरे पास उसी तरह रोती हुई आयी। मैंने कारण जानना चाहा तो उस वृद्धा ने बताया, आपने तो कहा था कि वार्षिक परीक्षा उस बालक की स्वयपाठी के रूप में ले लेंगे, परन्तु उसे तो परीक्षा में बैठा ही नहीं रहे हैं।

मेरे मन में अध्यापकजी के प्रति खिन्नता हुई कि आश्वासन देने के बाद भी उन्होंने ऐसा क्यों किया, मैं दूसरे दिन अध्यापकजी से मिली। उन्होंने इसका कारण मुझे इस प्रकार स्पष्ट किया।

वृद्धा ने राजेन्द्र के भविष्य की अधिक चिन्ता करने के कारण मेरे आश्वासन के बावजूद किसी व्यक्ति को बी० डी० ओ० साहब के पास भेज दिया और उस जाने वाले व्यक्ति ने बी० डी० ओ० साहब को न जाने क्या कुछ अनुचित कहा कि उन्होंने उस गाव के किसी भी बालक-बालिका को स्वयपाठी के रूप में परीक्षा देने की स्वीकृति ही प्रदान नहीं की।

मैंने उस बालक को देखा है। वह बच्चा पढ़ने में अच्छा है, परन्तु अपने भविष्य की चिन्ता से अनभिज्ञ टुकुर-टुकुर अबोध दृष्टि से मुझे देखकर मुस्करा रहा था। मैं सोच रही थी, इस बच्चे का वर्ष क्यों खराब हुआ, वृद्धा की अधिक ममता के कारण या गाव के व्यक्ति की शिकायत के कारण अथवा बी० डी० ओ० साहब के अहं के कारण? मुझे इसका उत्तर कौन दे? □

मक्खन

श्रीराम शर्मा

अचानक, आधी रात के बाद, पत्नी ने मुझे जगाया—"उठिये ! सुनिये, यह कौन, चिल्ला रहा है ?" लगती आग थी। हड़बड़ाकर उठा। 'ओह ! तो तुम्हें पता नहीं। यह तो मक्खन गा रहा है।' मैंने कहा। अपरिचित को मक्खन का गाना चिल्लाने जैसा ही लगता है।

> उड-उड रे म्हारा काळा रे कागला,
> कद म्हारा प्रभुजी घर आसी।

प्रत्येक मध्यरात्रि के बाद उसके दो गीत होते हैं। वह इन्हें भजन कहता है, पर हैं दोनों गीत। और लोग भी हैं कि दोनों को भजन मानकर बड़ी श्रद्धा, तन्मयता और ठहाकों के साथ सुनते हैं। मक्खन को सुर और ताल का ध्यान कराना साजिन्दों के जिम्मे रहता है। हा ऽ आ, हा ऽ आ—करता हुआ मक्खन कहीं-का-कहीं जा पहुंचता है। वह गाता भी है, नाचता भी है। अब उसे सम और स्थायी का ध्यान कैसे रहे ! साजिन्दे और श्रोता हा ऽऽ, हां ऽऽ, हा ऽऽ, मक्खन ! करते हुए उसे इशारों-इशारों में बताते हैं कि बस अब अन्तरा शुरू करो। कभी सुर में, कभी बेसुरा, कभी भीमरी, कभी कौए और कभी गधे से सुर मिलाता हुआ मक्खन 'काळा कागला' पूरा करता है कि लोग दूसरे की मांग करने लगते हैं।

मक्खन इधर-उधर देखता है। शायद भेंट थोड़ी आयी। और लोग गृहपति की ओर इशारा करते हैं। हां भई तुम्हारी तरफ से भी ! गृहपति के कुछ दक्षिणा देते ही दूसरा भजन शुरू।

म्हारो-म्हारो दो-तीन बार बोलकर मक्खन चुप। वह तो भूल गया सब कुछ। लोगों ने याद दिलाया और उसके पांव थिरकने लगे—

म्हारो छोटो सोक गाव,
खास खाचरयास नाव ।
जी कैं आगै बम्बई लजाणी लागै ।
मीठोडी को मीठो-मीठो पाणी लागै ।

बाजा-ढोलक-झांझ-मजीरा और लोगों की तालियां। मक्खन का आ ऽऽ ओ ऽऽ और लोगों के ठहाके। अचानक कोई नींद से जगे तो उसे बड़ा अजीब लगता है। पर गाव में सबको पता है कि मक्खन गा रहा है। गाना सबको याद है। लोग याद दिलाते चलते हैं। आगे-आगे मक्खन और पीछे-पीछे साज वाले।

सब सू पैली आवै दिल्लो बीर हड़मान को।
पुजारी है अर्जुनदास भगत भगवान को।
ज्याका कुआ ऊपर सोगरी सुहाणी लागै ।
मीठोडी को मीठो-मीठो पाणी लागै ।

गाव के सभी प्रमुख लोगों का इस गीत में वर्णन है। मक्खन के रिश्ते के भाई श्री रतनलाल ने बनाया है और मक्खन ने इसे गाया है। कोई दूसरा गाये तो इसमें इतना मजा नहीं, पर मक्खन के साथ इसे तो सारा गाव गाता है।

ठाकर किशोर सुपरी-टेंन्ट,
पहरे हैट कोट और पेन्ट।
ज्यांकी हेली मा चमेली मनभाणी लागै ।
मीठोडी को मीठो-मीठो पाणी लागै ।

मक्खन पचास पार करने को है। सर्दी-गर्मी बरसात सभी में यह अवधूत नंगे बदन, केवल एक कच्छा पहने और सर पर काली टोपी लगाये इधर-उधर घूमता फिरता है। सारा क्षेत्र उसका अपना है। हर वार-त्योहार, शादी ब्याह सबके घर उसका एडवांस न्योता रहता है। मक्खन के आते ही आबाल-वृद्ध सभी उसका स्वागत करते हैं। बच्चों की खुशी का तो पार ही नहीं रहता, उसे छेड़ने में बड़ों को भी मजा आता है।

"डोन" कहते ही चिढ़ गया यह। गाली नहीं देगा। चीखेगा, चिल्लायेगा। मारवाड़ी की स्टाइल में। "अरे मानखा-मानखा, भले आदमी मानखा।" जितनी तेज उसकी आवाज उससे तेज लड़कों का स्वर—डोन, डोन, मीईंगी ईंगोई—और फिर हाथ में पत्थर लेकर डराने की मुद्रा में मक्खन पीछे और लड़के आगे। मारेगा नहीं पर, नाटक पूरा करेगा, जैसे मार ही देगा।

मक्खन अवधूत है, हमारे गांव का अवधूत। अपने मां-बाप का इकलौता

बेटा। पिता तो दस वर्ष पूर्व चले गये थे। अभी-अभी मक्खन की मा मरी है। मा की अर्थी के साथ मक्खन जो बिलख कर रोया, लोग दंग रह गये। पागल से दिखने वाले इस 'बाउल फकीर' ने लगातार पाच वर्ष तक अपनी वृद्धा मा की जो सेवा की थी वह अच्छे-से-अच्छे मातृ-पितृ भक्त बालक के लिए ईर्ष्या का विषय हो सकती थी। गाव से जो कुछ उसे मिलता पहले मा को खिलाता शेष आप खाता। अन्तिम दिनो में अशक्त-वृद्धा मा सारी नित्य क्रियाए बिस्तर पर ही करने लगी थी। मक्खन अकेला, अपने हाथो से मा का सारा काम करता था। कभी पास बैठता तो कहता—"तकदीर खराब थी मास्टरजी जो मेरी मां के मेरे जैसा बेटा हुआ। बूढ़ी है चली जायेगी बेचारी। भगवान जाने मेरा क्या होगा?"

मा चली गयी, मक्खन ठीक है। लोग उससे भविष्य पूछते हैं। 'बेटा होगा कि बेटी', सासुए बहू के सामने ही उसे पूछती हैं। मक्खन भी खूब समझता है। बहू उसकी खातिर करने वाली हुई तो ठीक अन्यथा—'बेटी होसी ईंक बेटो कठै' और आगे से बहू सावधान।

पत्थर लेकर किसी चिढ़ाकू बालक या कटखने कुत्ते के पीछे भागते हुए मक्खन को देखने वाला, रास्ते में बगुले की मुद्रा में, किसी कबूतर या कमेड़ी की ओर ताकते हुए मक्खन को देखकर चकित हो जाता है। मक्खन है कि उस चिड़िया से बातें कर रहा है। "खाले, खालै, क्यू फिरती फिरै है? गुटरगू, गुटरगू, कोको छ, कोको छै। थारै सिर को कोको छै। सझ्या होगी। अबार भूखी ही सोसी।" जैसे इस पछी की केवल उसी को चिन्ता है।

मक्खन गाव की सब बहन-बेटियो को जानता है। चरित्रवान इतना कि उनकी ओर देखना भी पाप, पर चार-छ माह में कोई गाव नही आयी तो घरवालो से पूछ बैठगा। "मास्टरजी—बा है न बा।"

'बा' कुण, मक्खन!'

बा बाई बाई नॉव'''

आप पाच-चार नाम बताओ।

"हा, बा। बा अबकै कोनी आयी।" और जो आई है उससे वह जरूर पूछता है।

"बाई कद आयी! थारा टाबर नीका है क!"

"हा भाई मक्खन ठीक है।" इतना कहते ही एक टाग में थोड़ा लगड़ाता हुआ मक्खन चल देता है। "चोखो भाया, भगवान राजी राखै। नीका रीजै।"

लोग मक्खन को चिढ़ाते हैं और मक्खन मुझे। वह मानता है कि मैं चिक-मंगलूर के नाम से चिढ़ता हू। मुझे देखते ही वह बोलता है—'चिक मंगलूर।' मैं मना करता हूं तो वह और जोर, और तेजी से इसे दोहराता है। पूरा चिक मगलूर न बोलकर, अन्त में जोर-जोर से चिक-चिक-चिक करने लगता है। और उसकी

इस अदा पर मैं झूम उठता हूं। सारी थकान जाती रहती है।

अपने गाने के अन्त में लोग मक्खन को वह अन्तिम विनोदी पद गाने को कहते हैं जिसमें स्वयं उसके बाउल होने की चर्चा है। मक्खन बड़े शाही अन्दाज में यह पद गाता है—

> छोटी-सी बस्ती में कोनी बावळा को घाटो।
> कोई काढ़ै गाळ और कोई बावे भाटो॥
> मक्खन, बशी और कृपाल,
> उद्दो बावळयो नन्दलाल।
> भामण मीरजी की गाल्या म्हानै प्यारी लागै।
> मीठोडी को मीठो-मीठो पाणी लागै।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने ठीक ही कहा है—"संत हृदय नवनीत (मक्खन) समाना।" हमारा मक्खन वास्तव में हृदय से संत है। □

जंगल मांगे न्याय

पृथ्वीराज दवे

पात्र

1 धर्मराज
2. चित्रगुप्त
3. दो यमदूत
4. नारद
5. मणचा भील—अनुसूचित जनजाति प्रतिनिधि
6. जगा—टाल वाला एव टिम्बर मर्चेण्ट
7. धन्ना सेठ—फैक्ट्री मालिक
8
9

पशु, मछली एव अन्य वन्य जीव-जन्तु

प्रथम 1

, दिखाई पडते
आसन पर में कुछ ढूढते दिखाई
हैं। द्वार हैं। दूर नेपथ्य में कही
सुनाई पास आने पर स्पष्ट होता
है।

चित्रगुप्त   अभी पता करता हूँ, महाराज। (दूत से) दूत ! जाओ, पता करो, यमपुरी में यह शोर कैसा है ?

दूत   जी, महाराज !

(लौटकर) महाराज ! यह तो एक जुलूस है जो हमारी ही ओर आ रहा है। बड़ा विचित्र जुलूस है, महाराज ! इसमें पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मछलियाँ, जलचर, नभचर सभी सम्मिलित हैं महाराज !

[शोर निकट आ रहा है, आवाज स्पष्ट होती जाती है।]

"अन्यायी को—कठोर दण्ड दो !"
"हमारा अस्तित्व—खतरे में है !"
"मानवता—विनाश के कगार पर है !"
"हमें भी—जीने का अधिकार है !"
"हमें—न्याय दो, न्याय दो !"

[नारे लगाता हुआ जुलूस मुख्य दरवाजे तक पहुँच गया है बाहर बड़ा शोर है...]

धर्मराज   दूत ! जाओ, इनसे कहो, अपने प्रतिनिधियों को वार्ता के लिये अन्दर भेज दें तथा शोर न करें।

[दूत बाहर जाता है, प्रतिनिधियों से अन्दर चलने का आग्रह करता है, प्रतिनिधि अन्दर आ जाते हैं।]

सभी प्रतिनिधि एक साथ—महाराज की जय हो !

धर्मराज   कहो, क्या मांगें हैं, तुम्हारी ? एक-एक कर बताइये। हां तो वृक्षराज क्या मांगें हैं आपकी ?

वृक्षराज   महाराज, हमें न्याय दिलवाइये !

धर्मराज   बिल्कुल आपको न्याय मिलेगा। बताइये किससे शिकायत है आपको।

वृक्षराज . महाराज ! मनुष्य अन्धाधुंध हमारी कटाई कर रहा है, जिससे जंगलों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। आज समूची मानवता विनाश के कगार पर है, आप इसके लिए जिम्मेदार लोगों को कठोर-से-कठोर दण्ड देकर, हमें अन्याय से मुक्ति दिलवाइये महाराज।

धर्मराज . चित्रगुप्तजी, वृक्षराज की शिकायत दर्ज की जाये। अपने रिकॉर्ड देखकर यह भी बताइये कि इनका आततायी कौन है ?

चित्रगुप्त : जी, महाराज ! (पत्र-पोथा देखता है और बताता है) महाराज ! ऐसा लगता है ये जो जंगली जातियां हैं, जो जंगलों में ही पली-

पनपी; यही जंगलो का विनाश सर्वाधिक करती हैं।

धर्मराज : तो इनके प्रतिनिधि को यहां हाजिर किया जाये।

चित्रगुप्त . जी महाराज ! (दूत से) दूत, जाओ और अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधि को पकड़कर लाओ।

यमदूत . जी महाराज !

(पर्दा गिरता है)

दूसरा दृश्य

[पर्दा उठने पर धर्मराज आसन पर विराजमान दिखाई पडते हैं। चित्रगुप्तजी आखो पर चश्मा चढ़ाये पोथे मे कुछ ढूंढने मे व्यस्त दिखते हैं, अन्य जगल प्रतिनिधि कतार मे खडे दिखाई पडते हैं तभी यमदूत कक्ष मे प्रविष्ट होते हैं।]

यमदूत महाराज की जय हो ! लीजिए महाराज, बडी मुश्किल से पकड़कर लाए हैं।

[वे हाथ बाधे एक व्यक्ति को आगे धकेलते हैं।]

प्रतिनिधि : महाराज की जय हो ! मेरा कोई कसूर नही हैं, मुझ बेकसूर को व्यर्थ मे ही पकड़ा है महाराज, मैं तो असतुष्टो के ग्रुप मे नही हू महाराज !

धर्मराज : चुप करो ! अभी सब पता चल जाएगा। क्या नाम है तुम्हारा ?

प्रतिनिधि अणचाराम भील, एम० एल० ए ··

धर्मराज . चित्रगुप्तजी ! बताइये इस पर क्या आरोप हैं ?

चित्रगुप्त . महाराज ! इस व्यक्ति पर जगलो के विनाश का आरोप है। इस व्यक्ति ने अपने निहित स्वार्थों की खातिर जगलो की लकडी काट-काटकर शहरों मे बेच दी। जिसमे समस्त पेड-पौधे, पशु-पक्षी, जलचर-नभचर सभी प्रभावित हुए हैं। समूचा पर्यावरण, प्रभावित हुआ है। इसीलिए जगल के सभी घटको ने मिलकर आपके न्यायालय मे केस दायर किया है।

धर्मराज : तो पहले वृक्षराज के बयान लिये जाए।

वृक्षराज : महाराज की जय हो ! मैं पृथ्वी पर मनुष्य से पूर्व अवतरित हुआ। समस्त प्राणियों का विकास मेरी स्निग्ध छाया मे हुआ। मैंने इन्हें सरक्षण दिया। आज भी इन्हे प्राण-वायु देता हूं। इनके पशुओं को चारा देता हूं, खेतो को खाद देता हूं, जडी-बूटिया और औषधिया

देता हूँ। रेगिस्तान को फैलने से रोकता हूँ। फल-फूल देता हूँ। वातावरण को सन्तुलन देता हूँ। बरसात करवाने में सहायता करता हूँ। नदियों में बाढ़ आने से रोकता हूँ। जमीन के कटाव को रोकता हूँ। हजारों पशु-पक्षियों को आश्रय देता हूँ। इमारती लकड़ी देता हूँ, जलाने को ईंधन देता हूँ। गोंद-लाख, रबर जैसे उत्पाद मेरे भाइयों से ही प्राप्त होते हैं। हजारों लोगों का रोजगार वृक्ष पर निर्भर है। वृक्ष पर रहते पशु-पक्षियों के रहने से इन्हें सहारा मिलता है। रेशम के कीट भी मेरे ही पत्ते पर निर्भर रहते हैं। कितनी बातें गिनाऊँ महाराज! मनुष्य का समूचा जीवन ही वृक्ष पर आश्रित है। यदि मेरे जन्म से मेरी स्वतः मृत्यु तक के उत्पादों की कीमत लगाई जाए तो उसका मूल्य 13 लाख 80 हजार रुपये होता है जबकि यह दुष्ट मात्र चन्द रुपयों की खातिर मुझे काट देता है। महाराज इस दुष्ट ने समूची मानवता की साँस में जहर घोलने जैसा अपराध किया है। इसे कठोर-से-कठोर दण्ड देकर मेरे अस्तित्व की रक्षा की जाये, महाराज!

भगवा भील महाराज, मैं बेकसूर हूँ।

चित्रगुप्त तुम चुप रहो।

धर्मराज वृक्षराज! हम तुम्हारी बात से बहुत द्रवित हुए। किन्तु कानून सिर्फ कानून होता है। क्या तुम्हारी इन सब बातों का कोई गवाह भी है?

वृक्षराज जी महाराज! जंगल के सभी पशु-पक्षी, नदी, मछली सभी इस बात के गवाह हैं। और कलकत्ता महानगर के उस बस्ती के बच्चे जहाँ तीन फीट की ऊँचाई से ऊपर ऑक्सीजन गैस नहीं है, जिसके कारण जिन बच्चों को मृत्यु का मुँह देखना पड़ा वे सभी मेरी बातों के गवाह हैं।

धर्मराज : चित्रगुप्तजी! वनराज के बयान लिए जाएँ।

चित्रगुप्त : जी महाराज! (दूत से) दूत वनराज को हाजिर किया जाए।

दूत : वनराज हाजिर हो, वनराज हाजिर हो।

वनराज : महाराज की जय हो। महाराज! प्राणी मात्र का जीवन वनों पर आधारित है। वनों के विनाश से जहाँ मानवता खतरे में पड़ी है वहीं हम जंगली जानवरों का तो अस्तित्व ही समाप्त प्रायः हो गया है। महाराज! अब हमारे छिपने का कोई ठिकाना नहीं रहा। हम शेरों की तो संख्या ही गिनती की रह गयी। अन्य अनेक प्रजातियाँ भी या तो समाप्त हो गयी हैं अथवा समाप्त प्राय हैं।

इसका कारण केवल जगलो का विनाश तथा इन दुष्टो के हाथो हमारा शिकार होना है। समय रहते इन्हे कठोर दण्ड व हमारे सरक्षण के उचित प्रयास न किये गये तो मानवता को इसके दुष्परिणाम भुगतने होंगे, महाराज !

धर्मराज : ओ हो, बड़े दुख की बात है। हा, तुम्हे क्या कहना है पक्षीराज !

पक्षीराज महाराज ! वनो के विनाश से हमारा भी अस्तित्व खतरे में पड गया है। हमारे भाई बहिन जो केवल फल-फूल पर आश्रित हैं, अब चारे के बिना समाप्त हो रहे हैं। हमे अब घोसले बनाने की जगह नही रह गयी है। आकाश में भी हम अब स्वच्छन्द विचरण नही कर सकते। पर्यावरण असन्तुलन से वायुमण्डल के ओजोन मण्डल में सूराख हो जाने के कारण सूर्य की हानिकारक किरणें सीधे हम पर पड़ती हैं जो अत्यन्त बुरा प्रभाव डालती हैं।

महाराज ! हमारी अनेक प्रजातिया नष्ट हो गयी हैं। कुछ प्रजातियों के अब इने-गिने सदस्य ही रहे हैं, जिन्हे भी वनो के विनाश के साथ नष्ट होना होगा। महाराज ! इस दुष्ट को घोर कुम्भीपाक नरक दिया जाये।

अणचा मीन · महाराज मेरी भी तो सुनिये ! मैं बेकसूर हू महाराज !

धर्मराज · तुम चुप रहो। सत्य ही पक्षीराज आपके साथ घोर अन्याय हुआ है। मछली रानी आपको भी कुछ कहना है !

मछली रानी : महाराज ! कारखानो से निकलने वाला धुआ वृक्षो के अभाव मे अवशोषित नही हो पाता और बरसात के मौसम मे तेजाब बनकर बरसता है। वही तेजाबी पानी वृक्षो के अभाव मे कही रुक नही पाता और बहकर सीधा नदियो मे आ मिलता है। फैक्ट्रियो से बहने वाला रासायनिक पानी भी नदियो मे आकर मिलता है, जिसके कारण नदियो का पानी विषैला हो जाता है और इस प्रकार हमारी अनेक प्रजातिया नष्ट हो गयीं।

पेडो की अन्धाधुन्ध कटाई से बाढ़ आती है, अकाल पड़ते हैं। बाढ आती है तो नदी किनारों का कटाव हो जाता है, सारी रेत बहकर नदियो मे आ मिलती है, नदियो की भराव क्षमता कम हो जाती है। इसी तरह अकाल के दिनों मे भी वृक्षों के अभाव मे सारी रेत उड़-उड़कर नदियो मे आ गिरती है और नदियो की भराव क्षमता कम हो जाती है, जिससे हमे अनेक परेशानियो का सामना करना पड़ता है।

नदियो मे बहती हुई रेत समुद्रो मे पहुचती है। यदि महाराज

जिस रफ्तार से हिम-खण्ड पिघल रहे हैं तो पता-नहीं होगा कि समुद्र का जलस्तर निरन्तर बढ़ रहा है। महाराज ये तट भी पता-नहीं होगा कि बचें! ऐसा अनुमान है सन् 2030 तक एक तिहाई समुद्र में डूब जायगा।

महाराज ! पृथ्वी का तापक्रम 1.5 डिग्री सेन्टीग्रेड बढ़ गया है तथा 2010 तक दो से तीन डिग्री सेन्टीग्रेड तक बढ़ने की सम्भावना है। वायुमण्डल में कार्बन कणों की संख्या निरन्तर बढ़ रही है। ध्रुवों की बर्फ पिघलनी प्रारम्भ हो चुकी है। वह पानी भी नदियों के रास्ते समुद्र में ही जाएगा।

महाराज ! हमारा पूरा संसार ही आक्रान्त हो चुका है। हमारा अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। सम्पूर्ण मानवता सन्त्रस्त है। इन सबका दोष इस दुष्ट के माथे पर है। महाराज इसे कठोर दण्ड देकर हमें न्याय दें।

अणचा भील महाराज ! मैं बेकसूर हूँ, मेरी भी तो सुनिये महाराज !

धर्मराज तुम चुप रहो। चित्रगुप्तजी, क्या और भी कोई गवाह है?

चित्रगुप्त महाराज ! गवाही देने को बाहर हजारों वृक्ष, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मछलियां, जंगली जानवर खड़े हैं किन्तु अपने प्रतिनिधियों के रूप में इतने ही सदस्य अन्दर भेजे हैं।

धर्मराज ठीक है। जन-जाति प्रतिनिधि अब तुम कहो ! क्या कहना है तुम्हें ? तुम्हारा जीवन ही जब जंगल पर आधारित था, तुम जंगलों में ही रहते थे वहां से जड़ी-बूटियां फल-फूल, लाख-गोंद, ईंधन, इमारती लकड़ी आदि बेचकर जीवनयापन करते थे तो तुमने जंगलों का विनाश क्यों किया ?

अणचा भील महाराज, मैं बेकसूर हूं। मुझे इतनी बातों की जानकारी नहीं थी। मैं अनपढ़-गंवार आदमी हूं महाराज ! यह सब मैंने पापी-पेट की खातिर किया है। फिर मुझे किसी ने रोका भी नहीं महाराज !

धर्मराज कौन रोकता तुम्हें !

अणचा भील महाराज, गांव के सरपंच को, सरकार को, पढ़े-लिखों को मुझे रोकना चाहिए। उल्टे उन लोगों ने तो मुझे ऊंट-गाड़े लोन में दिलवाये जिससे मैं और अधिक लकड़ी शहर ले जाने लगा। महाराज मैं बेकसूर हूं। सारा दोष तो गांव के सरपंच का है।

धर्मराज चित्रगुप्तजी ! सरपंच को हाजिर किया जाये।

चित्रगुप्त · जी महाराज ! (दूत से) दूत इसके सरपंच को हाजिर किया जाए।

दूत . जी महाराज (वे जाते हैं तथा सरपंच को पकड़कर लाते हैं) यह

लीजिए।

सरपंच : मेरा क्या कसूर क्या है ? कहा ले जा रहे हो मुझे। सबको देख लूगा, एक-एक करके निपट लूगा।

चित्रगुप्त : चुप रहो, बको मत। यह धर्मराज का कोर्ट है। बताओ तुमने अपने गाव के लोगो को जगल काटने मे मदद दी ? उनको सरकारी लोन से ऊट-गाडे दिलवाये ? उनको जगलो का विनाश करने से क्यो नही रोका ?

सरपंच : महाराज, मुझे क्षमा करें। यदि मैं इनको रोकता, जगल काटने से मना करता, इन पर केस करता, पकडवाता तो ये लोग मुझे वोट नहीं देते, यदि ये वोट नही देते तो मैं सरपच नही बनता तो मेरा यह ठाठ-बाट कैसे रहता। फिर महाराज वो जग्गा मुझे कमीशन भी तो इसी बात के लिये देता था।

धर्मराज जग्गा, कौन ?

सरपच : महाराज ! जग्गा को कौन नहीं जानता। जग्गा टालवाला एव टिम्बर मर्चेण्ट।

धर्मराज : चित्रगुप्तजी ! जग्गा टालवाला एवं टिम्बर मर्चेण्ट को हाजिर किया जाए···

चित्रगुप्त : दूत, जाओ जग्गा टालवाला एव टिम्बर मर्चेण्ट को हाजिर करो।

यमदूत : जी महाराज ! (जाते हैं तथा जग्गा टालवाले को पकड़कर लाते हैं) लीजिये महाराज जग्गा हाजिर है।

जग्गा : अरे रे ! मुझे पकड़कर कहा ले आ रहे हो, सभी का हफ्ता तो चुका दिया है, फिर क्या बात हुई ?

चित्रगुप्त . चुप करो ! यहा कोई हफ्ता-वफ्ता नहीं लेता है। यह धर्मराज का कोर्ट है।

जग्गा : होगा, कोई कोर्ट-वोर्ट। अभी-अभी तो थानेदार सा'ब, मुसिफ सा'ब, रेंजर सा'ब का हफ्ता चुकाया है, फिर कहा ले आए तुम मुझे !

धर्मराज : बकवास बन्द करो। तुमने गाव के सरपच को लालच देकर जगल का विनाश क्यो करवाया ?

जग्गा : दुहाई हो महाराज ! पापी पेट का सवाल है। भारत आजकल उन्नति पर है, दिनोदिन महगाई बढ़ रही है और धन्ना सेठ फल रहे हैं। उनकी फैक्ट्री में ज्यादा ईंधन चाहिए था और उनके बगलो

मे खूब फर्नीचर चाहिए था। महाराज, मैंने टाल खोल ली तो मेरा क्या कसूर ? मैं और मरणच मिलकर अगर जंगल कटवाते थे तो जंगल के फोरेस्टर, रेंजर ने हमें क्यों नहीं रोका ? जब उन्होंने नहीं पकड़ा तो आप कौन होते हैं पकड़ने वाले ? मैं हाई कोर्ट, सुप्रीमकोर्ट तक अपील करूंगा।

धर्मराज चुप रहो ! चित्रगुप्तजी ! मामला बड़ा पेचीदा है। रेंजर-फोरेस्टर को भी बुलवाओ।

चित्रगुप्त (दूत से) दूत, रेंजर व फोरेस्टर को पकड़ लाओ।

दूत जी महाराज ! (जाते हैं व नशे में धुत्त दो व्यक्तियों को पकड़ लाते हैं) यह लीजिये महाराज !

रेंजर अरे वाह ! यह भी कोई बात हुई ! हवा में उड़े और सीधे जग्गा टालवाले पास। ले, तू भी पी जग्गा। ऐं ! फोरेस्टर, बोतल कहां चली गयी।

चित्रगुप्त चुप करो ! यह धर्मराज का न्यायालय है। तुम इस समय हमारे मुजरिम हो।

दोनों ऐं ! हम और मुजरिम ! (चौंककर) महाराज की जय हो। क्या कसूर है हमारा ?

धर्मराज : तुम दोनों की नियुक्ति जंगल की रखवाली के लिए की गयी थी। तुमने अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया उल्टे जग्गा टालवाला एवं टिम्बर मर्चेण्ट से हफ्ता खाकर जंगल का विनाश करवा दिया जिससे समूची मानवता खतरे में पड़ गयी। यह सच है ना !

दोनों महाराज की जय हो। हमारा कोई दोष नहीं।

धर्मराज तो फिर किसका दोष है।

रेंजर मैं बताता हूं महाराज ! धन्ना सेठों को फैक्ट्रियों-कारखानों को चलाने के लिये लकड़ी चाहिये थी। उनके बंगलों में शानदार फर्नीचर चाहिये था। ऐशो-आराम चाहिए था तो फिर यह सब कहां से आता ! जंगल से ही तो ! फिर महाराज हमें भी तो धन्ना सेठ बनना था। महाराज बिना पैसे के कौन पूछता है दुनिया में। आप तो यहां बैठे-बैठे फैसले देते हैं। हमारी दुनिया में आए होते तो पता चलता। पैसे के बिना एक सांस भी लेना दूभर हो जाता।

धर्मराज चित्रगुप्तजी, मामला वास्तव में ही बड़ा उलझाने वाला है। धन्ना सेठ को बुलवाओ यह क्या कहता है।

चित्रगुप्त : दूतो ! धन्ना सेठ को हाजिर करो !

दूत : जी महाराज ! **(जाते हैं व धन्ना सेठ को पकड़कर लाते हैं)**

धन्ना सेठ : ऐं ! मन्ने कठे ले जारिया हो । हाल तो मारा टावर घणा छोटा है, हाल तो''

दूत : लीजिये महाराज !

धन्ना सेठ : अरे मू तो रुळ गियो रे ! मारा टावर रुळ गिया रे ! मारा पईसा रुळ जासी रे ! ''ऐं ! जग्गा टालवाला ने रेंजर सा'ब, फोरेस्टर सा'ब ये अठे कीकर । आ कांई बात हुई । कोई ऊपरली चैंकिंग आ गई कांई''

चित्रगुप्त : चुप करो चुप करो ! रेंजर-फोरेस्टर का कहना है कि तुमने इनको हफ्ता-कमीशन देकर इनसे गैर कानूनी काम करवाया और जंगलो का विनाश अपने निहित स्वार्थों की खातिर करवाया । जिससे समूची मानवता और प्राणी मात्र का अस्तित्व खतरे मे पड गया । क्यो न तुमको कठोर-से-कठोर दण्ड दिया जाये ।

धन्ना सेठ *महाराज की जय हो ! मेरा कोई कसूर नहीं ! भारत देश महान्* है । यहा कमीशन मे सभी छोटे-बडे काम होते हैं । बडे-से-बडा आदमी यहा कमीशन खाता है । नही तो कानून बनाकर फैक्ट्री मे कोल-चूरी अथवा सौर ऊर्जा अथवा बिजली अथवा परमाणु ईंधन अनिवार्य नही कर दिया जाता । तो पेड क्यो कटते । लेकिन नही महाराज ! यहा सब चलता है । यहा सब भ्रष्ट है, फिर मैं तो एक टुटपुंजिया फैक्ट्री का मालिक ही तो हू । महाराज मेरा क्या कसूर ! एक तरफ तो राष्ट्र को विकास की गति तीव्र करनी है, दूसरी ओर जगल नही काटे जाए, यह कैसे सभव है ? दो-दो काम एक साथ नहीं हो सकते महाराज । फिर मैंने तो लकडी काटी नही, मैंने तो पैसे देकर खरीदी । मेरा क्या कसूर है ? मैं आगे अपील करूगा ।

धर्मराज . यहा से आगे कोई अपील नही होती । हमारा फैसला ही अन्तिम फैसला होता है ।

धन्ना सेठ : कैसा अन्याय है ।

-धर्मराज : धन्ना सेठ ! तुमको अगर फैक्ट्री में पेड चाहिये थे तो तुमको लोगो को अधिक पेड लगाने को प्रोत्साहित करना था, पेड़ के महत्व को समझाना था, तुम पढ़े-लिखे थे, तुम्हारा दायित्व था । तुम ऐसी

जो जन्तु भी बनवाते जिनसे वनों का विनाश बराबर होता न कभी पेड़ कटते रहते । और ! अब बात ठीक हुई । अब तो तुम लोगों को सजा होनी ही।

सब एक साथ दुहाई हो महाराज ! हमें एक बार क्षमा करें। सिर्फ एक बार

धर्मराज चित्रगुप्तजी ! क्या और भी कोई गवाह है?

चित्रगुप्त नहीं महाराज !

धर्मराज तो सुनो ! हमने मामले की पूरी जाँच-पड़ताल की। इसको ध्यान-पूर्वक सुनकर हम इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि इस जीवनकाल के कारण पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों, जलचरों-थलचरों, सम्पूर्ण पर्यावरण की अपूरणीय क्षति हुई है। भूल पर तो होती है ही किन्तु यह तो जानबूझ-कर था, जबकि इनके अन्य साथी जानते-समझते हुए भी मानवता के विनाश के अपराध में सम्मिलित हुए अतः सभी को दस हजार वर्ष तक घोर कुम्भीपाक नरक भोगने की सजा दी जाती है।

सभी (रोते हुए) दुहाई हो महाराज ! दुहाई हो...

[पेड़, पौधे, पशु, पक्षी सभी महाराज की जय हो, जय हो... बोलते हैं।]

(पर्दा गिरता है)

तीसरा दृश्य

पात्र सभी अपराधी, यमदूत, नारद ।

[यमदूत सभी अपराधियों को पकड़कर ले जा रहे हैं कि नारद आ जाते हैं।]

नारद नारायण ! नारायण !

सभी भगवान् की जय हो । महाराज हमारे कष्टों से उद्धार का उपाय बताइये ।

नारद : नारायण ! नारायण ! क्या कसूर था तुम्हारा जो तुम ऐसा घोर कुम्भीपाक नरक भोग रहे हो।

सब . महाराज जंगलों के विनाश का घोर कसूर है हमारा। जिसके कारण हमें यह घोर कुम्भीपाक नरक मिला है महाराज ! हमें इस नरक से निकलने का उपाय बतलाइये महाराज !

नारद : नारायण ! नारायण ! वनों के विनाश का तो तुम्हें यह फल

मिलना ही था। अब तो यही इलाज है कि तुम्हारे पीछे की पीढ़ी यदि अधिक-से-अधिक पेड़ लगाये, तथा उनका संवर्द्धन-संरक्षण करे तो तुम्हारी सजा स्वत. ही कम हो जाएगी। इसके लिए मैं अभी मृत्युलोक मे जाता हूं तथा वहा घूम-घूमकर तुम्हारा किस्सा व तुम्हारी दशा उन्हें बताऊंगा वहां उन्हे वनों के विकास को प्रोत्साहित करूंगा। तुम्हारी सजा शीघ्र ही समाप्त होगी।

एक साथ भगवान् की जय हो!

नारद . नारायण! नारायण!

(पटाक्षेप)

कैसे कैसे लोग

अरनी राबर्ट्स

पात्र

बाबू दिलीप राय	. रिटायर्ड अफसर
श्रीमती राधा राय	दिलीप बाबू की धर्मपत्नी
डॉक्टर सुरेश सिंह	एक पड़ोसी
अमृत	दिलीप बाबू का बड़ा लड़का
अखिल	दिलीप बाबू का कॉलेज में पढ़ने वाला पुत्र
सुनीला	अमृत की पत्नी
शिशिर, नीति	अमृत के पुत्र व पुत्री

[डॉक्टर सिंघल, इन्स्पेक्टर आहूजा, एस० पी०, डी० एस० पी० व अन्य ।]

प्रथम दृश्य

[एक फ्लैट के ड्राइंग रूम का दृश्य । कमरा सुरुचिपूर्ण ढंग से सजा है—टेलीविजन, सोफा सेट, कुर्सियां, सेंटर टेबल, दीवारों पर माउंट किये गए दो कलात्मक चित्र, दरवाजों-खिड़कियों पर नीले पर्दे। दिलीप बाबू, जो रिटायर्ड अफसर हैं, चाय पीते हुए अखबार पढ़ रहे हैं ।]

दिलीप राय (हड़बड़ाते हुए) बाप रे !...सारा अखबार...हत्याओं...

खून-खराबे, डकैती, आत्महत्या, आगजनी, लड़ाइयों और दुर्घटनाओं से भरा पड़ा है। ओफ़''झुरझुरी-सी आती है अखबार पढ़ते हुए। सारे संसार में क्या हो रहा है—कहाँ गई शांति, प्रेम ''सहयोग और ईमानदारी? क्या दौर है जिन्दगी का। लगता है भले आदमियों का जीना दुश्वार होता जा रहा है। (माथा पकड़कर बैठ जाते हैं। तभी उनकी पत्नी राधा प्रवेश करती है, हाथ में नाश्ते की प्लेट है। वह पति को सिर थामे बैठे देखकर घबरा उठती है।)

राधा : अरे'''अरे आपको क्या हो गया है? अभी कुछ देर पहले तो भले-चंगे बैठे थे'''अब यह क्या हो गया। सुबह तो गाना गा रहे थे 'जाग मुसाफिर भोर भई अब कौन सोता है'''और अब''। लगता है फिर बी० पी० का चक्कर है' रामू ओ'''रामू।

[भागते हुए रामू का प्रवेश]

रामू : क्या हुक्म है मालकिन?

राधा : जा जल्दी से पड़ोस के डॉक्टर सुरेश को बुला ला। तेरे मालिक को बी० पी० का चक्कर है।

रामू : हैं?'' बीबी का' ? इसमें डॉक्टर क्या करेंगे?

राधा : अरे बेवकूफ बी बी'' नहीं बी० पी० जा जल्दी जा '।

रामू : (सिर खुजाते हुए) ये का बी० पी०'' पी० पी० होवे है हमको तो कछु ना होवे है ''खैर, हमारा क्या हम जावत हैं। (रामू जाता है)

[illegible]प राय : यह क्या हंगामा मचा रखा है'''अमृत की मां, जब देखो डॉक्टर बुलाओ'''क्या हुआ है मुझे? भला चंगा बैठा हूं तुम्हारे सामने।'' पड़ोस में डॉक्टर क्या हो गया, जब देखो बुलाओ डॉक्टर। मना करो रामू को'' मैं ठीक हूं। हे राम !'''यह तो जा चुका है। पर आप तो ऐसे माथा [illegible] चक्कर आ रहे हों।

[illegible] मैं नहीं आता'''मालूम है क्या हो रहा है [illegible]रे संसार में?

[illegible] क्या हो गया जी'''? परलय आ रहा है क्या? [illegible] में लिखा है कि परलय आएगा ''क्या परलय की [illegible] आ गई [illegible] पढ़ के गुनाओ जी! [illegible] भगवान! [illegible]न्दा है। यहां बिना

लगी है कि क्या होगा'''कैसे जीयेंगे ?

राधा 'क्यों जी क्या हो गया ? मुझे बताओ न।

दिलीप राय अरे दुनिया में क्या खलबली मची है। आगजनी'''विद्रोह हत्याएं'''दुर्घटनाएं, डकैतियां, लूट-खसोट, सारा अखबार ऐसी ही घटनाओं से पटा पड़ा है। अब तो अखबार उठाते ही डर लगता है।

[रामू का डॉक्टर सुरेश के साथ प्रवेश]

रामू डॉक्टर साहब आ गए है'''।

दिलीप राय आओ सुरेश बेटा' 'तुम्हें बेकार ही तकलीफ दी' 'मैं बिलकुल ठीक हूं। यह तुम्हारी चाची मुझे आंखें मीचे बैठे देख समझ बैठी कि बी० पी० हो गया है ''मैं तो अखबार की घटनाओं से विक्षुब्ध होकर सिर थामे बैठा था।' 'ये समझी' '।'

[डॉ० सुरेश जोर का ठहाका लगाता है]

सुरेश कोई बात नहीं बाबूजी 'अब आ ही गया हूं तो आपका बी० पी० जरूर चैक करूंगा'''जरा आस्तीन ऊपर कीजिए।

दिलीप राय (हंसते हुए) ठीक है बेटा लेकिन कोई लंबा-चौड़ा रोग मत बता देना।

[डॉ० सुरेश बी० पी० चैक करने लगता है]

सुरेश आजकल दवाइयों में भी बड़ी मिलावट आ रही है बाबूजी। कल अपनी क्लिनिक में एक बच्चे को इंजेक्शन लगाया तो थोड़ी देर में उसे बुरी तरह रिएक्शन हुआ अगर संभालने में थोड़ी देर हो जाती तो बच्चा खत्म हो जाता। मैंने उस इंजेक्शन को उसी समय मेडिकल कॉलिज की लेबोरेट्री में भिजवा दिया।

दिलीप राय . ओह'''। माई गॉड'''कितना बड़ा फ्रॉड। ऐसे कौन लोग हैं जो पैसा कमाने की खातिर मासूम लोगों की जिन्दगियों से खेल रहे हैं। ऐसे लोगों को तो सरकार को फांसी पर चढ़ा देना चाहिए। किस कम्पनी का इंजेक्शन था वह ? देखो हमारा अमृत और उसके दोस्त कितनी अच्छी दवायें अपनी कम्पनी में बना रहे है।

(डॉ० सुरेश चुप होकर बी० पी० चैक करने लगता है)

क्या बात है सुरेश चुप क्यों हो गए ?

सुरेश   बाबूजी बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि यह दवा अमृत और उसके दोस्तों की कम्पनी द्वारा ही निर्मित है। अमृत ने ही वह दवा मुझे सैंपल में देकर विक्रय की सिफारिश की थी।

[डॉ० सुरेश की बात सुनकर दिलीप राय जड़ रह जाते हैं]

दिलीप राय   यह क्या कह रहे हो बेटा सुरेश? अगर ऐसा है तो समझो सर्वनाश हो गया। अमृत ऐसा भी कर सकता है। मैंने जिन्दगी भर ईमानदारी से काम किया। मैं भी रिश्वत ले सकता था, कमीशन खा सकता था पर मेरा ईमान कभी नहीं डगमगाया। फिर अमृत ने'''।

[अखिल का प्रवेश। बीस वर्षीय आकर्षक व्यक्तित्व वाला नवयुवक है जो कॉलेज में पढ़ता है।]

अखिल . नमस्ते सुरेश भइया।

सुरेश . नमस्कार अखिल कैसे हो? पढ़ाई कैसी चल रही है?

अखिल   ठीक है भइया। पर अब कॉलिजों में पढ़ाई का माहौल कहां रहा? आजकल तो इन नशीली दवाओं का जहर जरूर विद्यार्थियों को बरबाद कर रहा है।
(अखिल एक पत्र निकाल कर दिलीप राय को देते हुए)
पापा'''यह पत्र आपके नाम प्रिंसिपल साहब ने दिया है।

दिलीप राय   हैं? मेरे नाम पत्र तुम्हारे प्रिंसिपल का? क्या बात है कुछ गड़बड़ तो नहीं की तुमने?

सुरेश   अच्छा बाबूजी मैं चलता हूं शाम को मुलाकात होगी।
(डॉ० सुरेश का प्रस्थान)

(दिलीप राय जोर से पत्र पढ़ते हैं)

प्रिय राय साहब,

नमस्कार। आपके सुपुत्र श्री अखिल राय और उसके साथियों ने नशे की दवाइयों के खिलाफ जो कॉलिज में अभियान छेड़ा और बहुत से भटके हुए नौजवानों से यह गंदी आदत छुड़ाई'''इसके लिए मैं व्यक्तिगत रूप से इनका आभारी हूं और साथ ही आपको बधाई देता हूं कि आपके होनहार पुत्र ने सामाजिक दायित्व निभाकर बहुत बड़ा

धन्यवाद।

[दिलीप राय अखिल को [illegible]]

शाबाश। अखिल! तुम्हारे जैसा पुत्र पाकर मैं गर्व अनुभव कर रहा हूं। (श्रीमती राधा का प्रवेश) देखो राधा'''अपने बेटे ने कितना बड़ा कार्य किया है। नशीली दवाओं का सेवन अपने कॉलेज में बंद करवा दिया है। प्रिंसिपल ने बधाई भेजी है और एक अमृत है जो मासूम जिन्दगियों से खिलवाड़ कर रहा है।

राधा — क्या किया है मेरे अमृत ने?

अखिल — पापा '''क्या किया है अमृत ने?

दिलीप राय — उसकी दवा कम्पनी नकली दवाएं बना रही है नकली दवाओं के सेवन से लोग मर सकते हैं।

राधा — मेरा अमृत ऐसा नहीं कर सकता।

दिलीप राय — हां'''तुम्हें तो उस दिन विश्वास होगा जब उसके हाथों में हथकड़ियां होंगी और वह जेल में चक्की पीस रहा होगा।

अखिल — यह तो सरासर गद्दारी है। मैं तो भइया को अपना आदर्श मानता था। पैसे के लोभ ने भइया को इतना गिरा दिया।

(सुनीला-अमृत की पत्नी का प्रवेश)

सुनीला — मम्मी'''आज खाने में क्या-क्या बनेगा? (चुप्पी छाई रहती है। सुनीला आश्चर्य से) क्या बात है आप सब लोग चुप क्यों हैं?

अखिल — भाभी, भइया की दवा कम्पनी नकली दवाएं बना रही है उनको जेल हो सकती है।

सुनीला — यह क्या कह रहे हो अखिल? वे ऐसा नहीं कर सकते हैं।

दिलीप राय — हमें भी विश्वास नहीं था पर वह ऐसा ही कर रहा है कल ही उसकी कम्पनी का बना इंजेक्शन एक बच्चे को [illegible] कर गया। अखिल तुम अभी फोन करके अमृत को बुलवाओ।

सुनीला — पर वे तो आज सुबह ही दिल्ली जा चुके हैं।

अखिल — मैं भइया और उनके साथियों के खिलाफ पुलिस में रिपोर्ट लिखाने जा रहा हूं।

सुनीला — अखिल [illegible] मत करो वे तुम्हारे भाई हैं।

अखिल — वे अपराधी और देश के शत्रु हैं।

दिलीप राय — तुम अपराधी मत बनो [illegible] और फिर तुम्हारा [illegible] क्या है?

अखिल : हां मेरे पास सबूत तो नहीं है। हमें भइया के वापस आने का इंतजार करना होगा।

[सुनीला जोर से रो उठती है। दिलीपराय, श्रीमती राधा और अखिल बेहद चिंतित नजर आते हैं।)

दूसरा दृश्य

[अस्पताल का दृश्य-ऑपरेशन थियेटर के बाहर दिलीप राय जी के समस्त परिवारजन मौजूद हैं। सुनीला की हालत चिंताजनक है। पिछली रात मेडिकल स्टोर से अस्थमा का दौरा उठने पर कैप्सूल मंगाकर खाया था। वही कैप्सूल बुरी तरह रिएक्शन कर गया। सुबह तक उसकी हालत बिगड़ गई। अमृत अभी तक दिल्ली से नहीं लौटा है।]

शिशिर : मेरी मम्मी···को क्या हो गया दादाजी ? उन्हें अन्दर क्यों बंद कर दिया ?

नीति : *मैं मम्मी के पास जाऊंगी। (सुबकने लगती है)*

राधा : चुप हो जाओ बच्चो ··तुम्हारी मम्मी ठीक हो जायेगी।

[डॉ० सुरेश का प्रवेश। दिलीप राय जी के पास आकर धीरे-धीरे बोलता है)

सुरेश : बाबूजी···यह दवा भी अमृत की कम्पनी की है। कुछ और रिएक्शन के केस आये हैं। कुछ की हालत चिन्ताजनक है। अभी डॉक्टरों को यह पता नहीं है कि सब नकली दवाओं के कारण हो रहा है। कुछ करना होगा वरना अमृत को सजा हो जायेगी।

दिलीप राय . हे भगवान पता नहीं क्या हो रहा है ? मेरी सारी इज्जत यह लड़का मिट्टी में मिला देगा। सुनीला की हालत में कुछ सुधार है या नहीं ?

सुरेश : कुछ नहीं कहा जा सकता—डॉक्टर सिंघल अभी थियेटर में ही हैं मेरा उनसे सम्पर्क नहीं हुआ है।

नीति : मेरी मम्मी···मेरी मम्मी कहा हैं ?

दिलीप राय : अजी तुम इन बच्चों को घर ले जाओ। वरना ये परेशान ...

(। (बच्चों के साथ उसका प्रस्थान)

दिलीप राय : अमित कहाँ रहा…? सुबह तो आया था हमारे साथ।
सुरेश : वह शायद अब। [illegible] के साथ दवा कम्पनी का केस [illegible] है ।
दिलीप राय (आँखें पोंछते हुए) हे भगवान यह क्या हो गया ' अमृत का क्या होगा ? सुनीता की जान बचेगी या नहीं ?

(दिलीप रायजी सिर थाम लेते हैं—सुरेश का प्रस्थान)

[अचानक अमृत बदहवास-सा प्रवेश करता है। बाल बिखरे हैं ''कपड़े अस्त-व्यस्त हैं।]

अमृत (दिलीप राय जी को झकोरते हुए) पापा'' क्या हो गया सुनीता को मुझे पता चला है कि उसकी हालत बहुत गम्भीर है ।

दिलीप राय सुनीता ही नहीं'' पता नहीं कितने और लोग भी इसी हालत में होंगे । वे सब लोग जिन्होंने तुम्हारी कम्पनी द्वारा निर्मित बोगस दवाइयों का प्रयोग किया है।

अमृत यह क्या कह रहे हैं आप ? क्या आपको विश्वास है मैं ''ऐसा कर सकता हूँ । हमारी कम्पनी एक विश्वसनीय नाम है ' लगता है पापा इसके पीछे गहरी चाल है।

दिलीप राय क्या कह रहे हो ? क्या ऐसा सम्भव है ?

अमृत इस दुनिया में सब कुछ सम्भव है—पापा मैं इसका पता लगाकर ही रहूँगा—बोगस दवाई वाली बात सबसे पहले आपसे किसने कही थी ?

दिलीप राय अपने पड़ोसी डॉक्टर सुरेश ने''' उसी से तो अपनी दवाइयों के प्रचार की सिफारिश की थी तुमने।

अमृत नहीं पापा ''मैंने डॉक्टर सुरेश से कभी अपनी दवाइयों के प्रचार के लिए नहीं कहा । लगता है इसके पीछे सुरेश का हाथ है । पापा'' मैं समझ गया उसने चालीस प्रतिशत लैस में सेल टैक्स रहित दवायें थोक में खरीदने की पेशकश की थी। जो मैंने और मेरे पार्टनर्स ने देने से इन्कार कर दिया था । मैं अभी सी० आई० डी० इन्स्पेक्टर आहूजा को फोन करता हूँ ।

दिलीप राय अच्छा एक बात बताओ कुछ दवायें विभिन्न मेडिकल स्टोर्स से ली गयी हैं ?

अमृत : इस शहर में तीन मेडिकल स्टोर्स सुरेश ब्रदर-इन-लॉज के हैं।

[तभी आपरेशन थियेटर का दरवाजा खुलता है। डाक्टर सिंघल अपने असिस्टेंट के साथ आते हैं।]

अमृत : नमस्ते डॉक्टर्स · कैसी है मेरी पत्नी ?

डॉ० सिंघल : डोंट वरी मिस्टर अमृत शी इज आउट आफ डेंजर नाउ · एण्ड इम्प्रूविंग रेपिडली · दरअसल कैप्सूल में जहर भरा हुआ था दवा तो नाम मात्र को थी।

अमृत : हे ईश्वर यो कैसा निर्दयी है जो कैप्सूल में जहर भर के लोगों को दे रहा है। डॉ० सिंघल मैं सी० आई० डी० विभाग को सूचित करने जा रहा हू फोन से। ऐसे पापी को जल्दी गिरफ्तार किया जाना चाहिए।

डॉ० सिंघल : मैं भी आता हू · डॉक्टर प्रकाश आप यहीं रहिए मिसेज सुनीला के पास।

डॉ० प्रकाश : ओ० के० सर।

[अमृत का डॉ० सिंघल के साथ प्रस्थान डॉ० प्रकाश थियेटर में चले जाते हैं। दिनेश राय कुछ सोचते से अकेले बैठे रह जाते हैं। मंच पर प्रकाश मंद होता जाता है फिर अंधेरा छा जाता है।]

तीसरा दृश्य

[दिनेश राय जी का बंगला—वही ड्राइंगरूम। एस० पी०, सी० आई० डी० इन्स्पेक्टर आहूजा, अमृत, अखिल, दिनेश रायजी, डॉ० सिंघल व सुरेश मौजूद हैं। इनके अलावा पत्रकार, एम० आई० व कुछ सिपाही भी हैं।]

इन्स्पेक्टर आहूजा : उपस्थित महानुभावो "यह एक षड्यन्त्र था, एक घिनौनी साजिश थी मिस्टर अमृत और उनके पार्टनर्स के खिलाफ—यह सब उनकी लोकप्रियता और अच्छी साख को गिराने का कुचक्र था।

एस० पी० शर्मा : यह षड्यन्त्र किस तरह रचा गया मि० आहूजा···? इस

दवाखाना और जहर-भरी दवायें सील करवा दीजिए तुरत।

एम० आई० भार्गव यस सर।

दिनेश राय आपके सहयोग के लिए हम आप सबके बहुत आभारी हैं। दुनिया में कैसे-कैसे लोग हैं'''यह अनुभव पहली बार हुआ।

एम० पी० शर्मा हर पुलिस वालों को तो ऐसे अनुभव रोज ही होते हैं।

(सब हंस पड़ते हैं। मंच पर अंधेरा हो जाता है।)

(समाप्त)

चोपटिया

रमेश भारद्वाज

पात्र

रामफल	45 वर्ष का एक प्रौढ़
गीताराम	रामफल का पुत्र आयु 25 वर्ष
भास्कर	40 वर्षीय एक प्रौढ़
सीतादेवी	रामफल की पत्नी
रश्मि	भास्कर की पुत्री आयु 20 वर्ष

प्रथम दृश्य

[मध्यवर्गीय घर की बैठक। एक ओर रखी मेज पर
कलेण्डर है जिसमे 13 मार्च रविवार दिख रहा है।
घडी भी रखी है जिसमें छह बजे हैं। मेज के पास कुर्सी
बैठे रामफल अखबार पढ़ रहे हैं। कुछ समय बाद सीतादे
एक ट्रे मे चाय तथा कुछ नमकीन ला कर मेज पर रख
हैं।]

सीतादेवी · सुन रहे है, आज रविवार है !

रामफल (अखबार एक ओर रखते हुए) सुन रहा हू और समझ रहा हू कि
आज रविवार है। (गाते हैं)
छह दिन जिसका रहता इतजार है।
जो खुशियो का भण्डार है।

दिन जो सबसे मजेदार है।
वही आज रविवार है।
आज बन्दे का अवकाश है।

सीतादेवी . अवकाश तो कल दूसरे शनिवार का मना लिया।

रामफल ओह ! कल सैकिन्ड सैटरडे मना लिया तो आज अवकाश न मनाया जाये यह कहा लिखा है ? (कुछ नमकीन खाकर चाय पीते हैं।)

सीतादेवी लिखा देखे बिना शायद तुम्हारी समझ में कुछ आता ही नहीं है।

रामफल सुबह-सुबह खाने को और कुछ नहीं मिला जो मेरा भेजा खा रही हो? या मेरे भेजे में कुछ खास स्वाद है ? न हो तो यह नमकीन खा लो।

सीतादेवी हां, कुछ खास स्वाद है न आपके भेजे में। बाबूगिरी करते-करते सारा भेजा तो फाइलों ने चाट लिया, अब रखा क्या है खाने को ? आग लगे इस गृहस्थी में।

[जाने लगती है, रामफल हाथ पकड़कर रोकते हैं।]

रामफल (चाय पीते हुए) अरे नाराज हो गयी ?

सीतादेवी · तुम्हारा कीमती भेजा जो खा रही थी।

रामफल अरे ! मैंने तो हमी में कहा था। मुझ सारे को ही खा जाओ तो उफ न करूंगा, भेजा क्या चीज है ?

सीतादेवी छोड़ो भी ! (हाथ छुड़ाने की चेष्टा करती है।)

रामफल आज सुबह-सुबह ही क्यों नाराज हो रही हो ?

[कलैण्डर की ओर देखकर नाक के सामने हथेली रखते हैं।]

सीतादेवी क्यों ? क्या हुआ ?

रामफल हुआ क्या ? तुम्हारी जैसी सावित्री ही जब सत्यवान के प्राण बचाने के बजाय प्राण लेने लगी तो मेरा ध्यान गया अपने स्वर पर, पता लगा कि दाया स्वर चल रहा है और चौघड़िया जो देखा तो उद्वेग का समय है।

सीतादेवी (तुनक कर) छोड़ो मुझे, चूल्हे में जायें तुम्हारे चौघड़िया और स्वर।

रामफल . आखिर बात क्या थी ?

सीतादेवी : तुम्हें कुछ ध्यान भी रहता है या चौघड़िया और स्वर ही देखते रहते हो ?

रामफल : तुम्हारी जैसी अर्द्धांगिनी के रहते मुझे फिक्र क्यों होने लगी ?

सीतादेवी रहने दो यह चापलूसी।

रामफल अच्छा रहने दो।

सीतादेवी आज तुम्हे जयपुर जाना था न ?

रामफल (चाय पीते हुए) किस खुशी मे ?

सीतादेवी (कपाल ठोकते हुए) हाय भगवान ! यह जिन्दगी कैसे निकलेगी

रामफल कुछ याद भी है ?

सीतादेवी वे अलवर वाले आये थे न ?

रामफल (चमक कर) अरे हा, मैं तो भूल ही गया। जाना है, जरूर जाना है। और देवी सत्यभामा सुन लो, यह बडा अच्छा रिश्ता है। हो जाये तो बस मजे ही मजे हैं। मैंने पाडेजी से बात की थी। वे कह रहे थे कि लडकी बहुत सुन्दर है, परी जैसी। घर के काम-काज मे भी चतुर है। पढने मे होशियार है। पहला नम्बर आती है।

सीतादेवी अपना मुन्ना तो पहला नम्बर क्या पहले दर्जे में भी कभी पास नही हुआ।

रामफल अरे तो उससे क्या फर्क पडता है ? लडकी के केवल एक भाई है। लडकी के बाप के पास तो लाखो हैं ही, लडकी की बुआ के भी कोई सन्तान नही है।

सीतादेवी बस-बस ज्यादा लालच बुरा है।

रामफल सुनो भी, लडकी की मौसी के कोई लडकी नही है। लडके लडके हैं। वह इसी को लडकी मानती है।

सीतादेवी तब तो खूब माल मिलेगा।

रामफल लडकी के चार चाचा हैं, लडकी एक के भी नही है।

सीतादेवी तो फिर कर लो सम्बन्ध।

रामफल हू, (मुह बनाकर) करलो सम्बन्ध ! यह कोई औरतो का काम है ?

सीतादेवी (नाराज होकर) तो फिर मना कर दो। तुमसे नही किया जाता तो मैं करा देती हू।

रामफल (चमक कर) अरे नही, ऐसा मत करना। तुम तो बडी भोली हो। इस भोलेपन पर ही तो मैं रीझ गया था वरना'

सीतादेवी वरना क्या ?

रामफल एक से बढ़कर एक परीजादिया इस घर को रोशन करने के लिए मुह धोये बैठी थी।

तो ले आओ एक-दो।

अब छोड़ो भी। चेहरे पर झुर्रिया पड गयी, बाल पक गये और अब परीजादी तो क्या कोई चुड़ैल भी साथ नही

सीतादेवी रहने दो यह चापलूसी।
रामफल अच्छा रहने दो।
सीतादेवी आज तुम्हें जयपुर जाना था न ?
रामफल (चाय पीते हुए) किस खुशी में ?
सीतादेवी (माथा ठोकते हुए) हाय भगवान ! ः
रामफल कुछ याद भी है ?
सीतादेवी वे अलवर वाले आये थे न ?
रामफल (चमक कर) अरे हां, मैं तो भूल ह
है। और देखो सत्यभामा सुन लो, य
जाय तो बस मजे ही मजे हैं। मैंने प
रहे थे कि लड़की बहुत सुन्दर है, पढ़ी
भी चतुर है। पढ़ने में होशियार है।
सीतादेवी अपना मुन्ना तो पहला नम्बर क्या प
हुआ।
रामफल अरे तो उससे क्या फर्क पड़ता है ? स
लड़की के बाप के पास तो लाखों हैं,
सन्तान नहीं है।
सीतादेवी बस-बस ज्यादा लालच बुरा है।
रामफल सुनो भी, लड़की की मौसी के कोई
लड़के हैं। वह इसी को लड़की मान
सीतादेवी तब तो खूब माल मिलेगा।
रामफल लड़की के चार चाचा हैं, लड़की एक
सीतादेवी तो फिर कर लो सम्बन्ध।
रामफल हूं, (मुंह बनाकर) करलो सम्बन्ध ! य
सीतादेवी : (नाराज होकर) तो फिर मना कर दो

भास्कर : बेटी, ठंडा पानी लाओ, यहा आते-आते थक गये होगे। गर्मी मे प्यास अधिक लगती है।

रामफल : सब ठीक है। रश्मि बिटिया को क्यो कष्ट देते हैं?

भास्कर . इसमे कष्ट कैसा ? कष्ट तो आप लोगो को हुआ है।

सीतादेवी : हमे तो जरा भी कष्ट नही हुआ। टैक्सी कर ली थी। घर से उसमे बैठे और यहा उतर गये।

रामफल : हा, गाडी का समय ठीक नही बैठता था सो टैक्सी कर ली। घर का पता आपने विस्तार से बता ही दिया था। बडा आराम रहा।

भास्कर : हमने तो सुबह् आपका बडा इन्तजार किया। आपने नौ-दस बजे तक आने के लिए कहा था। हम तो निराश हो चुके थे कि अब क्या आयेंगे।

सीतादेवी : आते क्यों नहीं ? आपको कह दिया तो आना ही था और आ ही गये।

भास्कर ' आ तो गये परन्तु देर हो गयी। आजकल लडके वाले तो होते हैं बादशाह और लडकी वाले'''।

रामफल होते होगे। हम उनमे से नहीं है। बात यह है कि प्रात काल का समय ठीक नही था।

सीतादेवी : ये स्वर, मुहूर्त, चौघडिया आदि मे बहुत विश्वास करते हैं।

भास्कर : तब तो दफ्तर भी शुभ मुहूर्त मे ही जाते होगे ?

रामफल ' हा, भरसक।

भास्कर : आप यह मानते हैं कि शुभ समय मे किया हुआ काम अवश्य सफल होता है और अशुभ समय मे किया हुआ काम प्राय निष्फल होता है?

रामफल ' क्यो नही ? क्या हमारे पुरखे पागल थे ?

भास्कर . यह तो मुझे नहीं मालूम परन्तु मुहूर्त-वुहूर्त मे मैं अधिक विश्वास नहीं करता।

रामफल : कुछ तो करते ही हैं।

भास्कर . समाज में रहने के लिए कुछ सामाजिक बुराइयो से समझौता करना पडता है।

[रश्मि एक तश्तरी मे मिठाई, दूसरी मे नमकीन और तीन पानी के गिलास एक ट्रे मे रख कर लाती है और सेन्टर टेबल पर रखती है।]

भास्कर : लीजिए, जल पान कीजिए, कुछ शान्ति मिलेगी।

भास्कर : बेटी, ठंडा पानी लाओ, यहां आते-आते थक गये होंगे। गर्मी में प्यास अधिक लगती है।

रामफल : सब ठीक है। रश्मि बिटिया को क्यों कष्ट देते हैं?

भास्कर : इसमें कष्ट कैसा ? कष्ट तो आप लोगों को हुआ है।

सीतादेवी : हमें तो जरा भी कष्ट नहीं हुआ। टैक्सी कर ली थी। घर से उसमें बैठे और यहां उतर गये।

रामफल : हां, गाडी का समय ठीक नहीं बैठता था सो टैक्सी कर ली। घर का पता आपने विस्तार से बता ही दिया था। बडा आराम रहा।

भास्कर : हमने तो सुबह आपका बडा इन्तजार किया। आपने नौ-दस बजे तक आने के लिए कहा था। हम तो निराश हो चुके थे कि अब क्या आयेंगे।

सीतादेवी : आते क्यों नहीं ? आपको कह दिया तो आना ही था और आ ही गये।

भास्कर : आ तो गये परन्तु देर हो गयी। आजकल लडके वाले तो होते हैं बादशाह और लडकी वाले'''।

रामफल : होते होंगे। हम उनमें से नहीं हैं। बात यह है कि प्रात काल का समय ठीक नहीं था।

सीतादेवी : ये स्वर, मुहूर्त, चौघडिया आदि में बहुत विश्वास करते हैं।

भास्कर : तब तो दफ्तर भी शुभ मुहूर्त में ही जाते होंगे ?

रामफल : हां, भरसक।

भास्कर : आप यह मानते हैं कि शुभ समय में किया हुआ काम अवश्य सफल होता है और अशुभ समय में किया हुआ काम प्राय निष्फल होता है ?

रामफल : क्यों नहीं ? क्या हमारे पुरखे पागल थे ?

भास्कर : यह तो मुझे नहीं मालूम परन्तु मुहूर्त-वुहूर्त में मैं अधिक विश्वास नहीं करता।

रामफल : कुछ तो करते ही हैं।

भास्कर : समाज में रहने के लिए कुछ सामाजिक बुराइयों से समझौता करना पड़ता है।

[रश्मि एक तश्तरी में मिठाई, दूसरी में नमकीन और तीन पानी के गिलास एक ट्रे में रख कर लाती है और सेन्टर टेबल पर रखती है।]

भास्कर : लीजिए, जल पान कीजिए, कुछ शान्ति मिलेगी।

[टेबल थोड़ी रामफल की ओर सरकाते हैं। तीनों थोड़ा-थोड़ा खाते हैं।]

भास्कर संकोच न करें।

रामफल नहीं साहब संकोच क्यों करेंगे ?

भास्कर आहारे-व्यवहारे त्यक्त लज्जा सुखी भवेत्।

[तीनों रुचि अनुसार खाकर जल पीते हैं।]

भास्कर अजमेर से कुछ मेहमान आये थे।

रामफल ऐसे घर में मेहमान क्यों नहीं आयेंगे ?

भास्कर (मुस्कराते हुए) आप जैसे सज्जनों की मेहरबानी है, वरना मैं किस लायक हूँ।

[रश्मि चाय कपों में डाल लाती है]

रामफल आओ, रश्मि बेटी बैठो !

[रश्मि खड़ी रहती है]

सीतादेवी क्यों बेटी इस वर्ष बी० ए० कर लिया ?

रश्मि जी।

सीतादेवी अब आगे और पढ़ने का विचार है ?

भास्कर यह तो इसकी ससुराल वालों पर निर्भर है। हमने तो बी० ए० तक पढ़ा दिया। आप चाय लीजिए।

[चाय का एक-एक कप तीनों को देकर एक कप स्वयं लेते हैं। तीनों पीने लगते हैं।]

सीतादेवी पढ़कर भी करना तो वही घर का काम है। बी० ए० तक पढ़ना क्या कम है ?

रामफल आपकी पुत्री सुन्दर, सुशील और शिक्षित है।

[रश्मि अन्दर चली जाती है।]

भास्कर इस तारीफ के लिए आपको धन्यवाद। आजकल लड़की बेचारी को कौन देखता है ? सभी उसके पिता की जेब देखते हैं।

रामफल सभी तो ऐसे नहीं होते।

भास्कर अधिकांश ऐसे ही होते हैं। तरह-तरह से लड़की के पिता की सामर्थ्य तौलते हैं। उसकी आय, उसके पुत्रों की संख्या, उसकी विवाहित और अविवाहित बहनों की संख्या। इससे अनुमान लगाते हैं कि कितना दुहा जा सकता है।

[सीतादेवी रामफल की ओर देखती हैं।]

लड़की के सुयोग्य होने पर भी यदि पिता गरीब है तो उसे तरह-तरह से टरका दिया जाता है। (मुंह बनाकर) अहं लड़की का कद

कम है, चाहे खुद के साहबजादे पाच फुटे ही हो। कोई कहेंगे (आवाज बदलकर) और तो सब ठीक है लडकी को जरा और पढाते। कोई कहते हैं कि जन्म पत्री मिलाये बिना विवाह नही करेंगे। वे लडके की जन्म पत्री तो देंगे नहीं। लडकी के पिता की गाठ मोटी हुई तो जन्म पत्री मिल जायेगी नही तो नही। टालने की और भी तरकीबें हैं हमने तो यही सोचा था कि आपने भी हमे टरका दिया। इसलिए'''

रामफल : यह तो आपने देख ही लिया कि हम ऐसे नही हैं।

भास्कर : पर अब तो पानी मुल्तान गया।

रामफल : (विस्मय से) क्या मतलब? हमे आपकी लडकी पसन्द है। क्यो मुन्ना की मा? सीतादेवी की ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से देखते है।

सीतादेवी : क्यों नही? लडकी तो हीरा है, किसे पसन्द नहीं आयेगी?

रामफल : (सीताराम की ओर देखकर) तुम्हे मुन्ना?

[सीताराम शर्म से सिर झुका लेता है]

सीतादेवी : इसे क्यो नही पसन्द होगी? यह मा-बाप के खिलाफ थोडे ही जायेगा।

रामफल : अभी तीन बजे तक शुभ समय है। हम बाजार मे कुछ सामान ले आते हैं, आप भी तैयारी कर लीजिए। शुभस्य शीघ्र।

भास्कर : क्षमा कीजिये, अब तो ''

रामफल : आप भी क्या शिष्टाचार निभाने लगे! कुछ शकुन तो करना ही पडेगा।

सीतादेवी : शकुन हो जाने से दोनो ओर मे निश्चितता हो जायेगी। कई लडकी वाले चक्कर लगाते हैं, उन्हें जवाब दे सकेंगे। आपकी भी भाग-दौड़'''।

भास्कर : आप सुनिये तो सही। हमने ग्यारह बजे तक आपकी राह ऐसे ही देखी जैसे चातक स्वाति नक्षत्र की वर्षा की देखता है। जब आप नहीं आये तो निराश होना ही था।

रामफल : आप कविता करते हैं?

भास्कर : फिर आप जानते ही हैं, कवारी बाई सहस्र वर। आपके यहा गया था उससे पहले भी एक जगह बात हुई थी। वे ही लोग अचानक ग्यारह बजे आ गये थे। आपसे तो निराश हो ही चुका था। वे लोग रश्मि को पसन्द कर दस्तूर कर गये हैं। अभी आपने जो नमकीन और मिठाई खायी वह उन्ही के यहा की थी। क्या करें रश्मि का संस्कार वही था।

[रामफल और सीतादेवी विस्मय से एक-दूसरे की ओर देखते हैं।]

रामफल भास्कर साहब ! आपने हमारी खूब बेइज्जती की। एक शरीफ आदमी का काम यह नहीं कि हमें बुलाकर बिना बात किये ही सम्बन्ध और जगह कर दें।

भास्कर और आप आते ही नहीं या लड़की को नापसन्द कर देते तो वह शराफत होती क्योंकि आप लड़के वाले हैं।

रामफल (उठते हुए सक्रोध) उठो मुन्ना, चलो यहां से, क्या बेइज्जत किया है भले आदमी ने यहां बुलाकर।

[तीनो उठकर जाते हैं। कुछ दूर जाने पर]

सीतादेवी चले तो अमृत योग में थे।

[रामफल क्रुद्ध दृष्टि से सीतादेवी को देखते हैं

[पटाक्षेप]

एक चित्रकार घोड़े पर सवार

रमेश गर्ग

अभी मैं शान्त बैठा हुआ था कि बेचैन होकर उठा और वापस आकर बैठ गया—पास वाले साथी ने पूछा—'क्या है ?' मैं उसे बता नहीं सकता कि हर दो चार मिनट के बाद मेरे मानस में एक नया चित्र उतर रहा है और मैं तय नहीं कर पा रहा हूं कि किसे चित्रित करूं।

सबसे पहले मैंने दो भूखेमार व्यक्तियों को गुत्थम-गुत्था होते हुए देखा था और उसके बाद एक पंख फैलाये पक्षी को ऊंचे आकाश में उड़ान भरते पाया था। इसके बाद दो पत्थरों के जोड़ पर *आलिंगन करते हुए और उन्हीं के बीच से धुमड़ती* हुई एक आकृति को अपने दायरे से बाहर निकलते हुए अब देख रहा हूं।

लगता है मैं भी अपनी परिधि को तोड़ने के लिए तड़फ रहा हूं। मुझमें बहुत तीव्र रफ्तार, शक्ति, साहस और स्पर्धा के साथ-साथ परिवर्तन ऐसे काम कर रहा है जो अति यथार्थवादी शैली में मुझसे कुछ कहलाना चाहता है। मुझे अब कहीं पर सिर्फ 'आंख', कहीं पर शक्ति शाली 'पांव', कहीं पर दांत फाड़े हुए 'जबड़ा', घोड़े की हुंक, मशीनी गेयर और एक सशक्त पुरुष की मांसलता दिखाई दे रही।

मैं देखता हूं *एक गिरे हुए घोड़े को जिसका सशक्त सवार, जो गिरकर फिर* हुंकार भरकर उठ गया है और पीछे मुड़कर परिस्थिति को जांचता है। इस सवार का कदम चित्र की पृष्ठ भूमि से निकल कर ठीक सामने आ गया है। मैं इसे चित्रित करता हूं पर मैं यह नहीं जान पाता कि मेरा यह घोड़ा गिरा क्यों है और मुझमें ऐसी क्या मानसिकता है जो ऐसा चित्र सृजित करना चाहती है"।

बीच में ही अपने पूर्व चित्र को छोड़कर दांतों की कतार के बीच आक्रोश व्यक्त करते हुए एक भूखेमार व्यक्ति का अंकन करता हूं। अभी इन क्षणों में [illegible] तो नहीं है पर 'चित्र सृजन' में एक नया मोड़ लेने के लिए

हो कर 'शृंगार' या 'शान्त' रस से बाहर निकल कर 'वीर' या 'रौद्र' की कविता को अति यथार्थवादी शैली में व्यक्त करना ज्यादा उचित समझता है।

: :

अब मैं एक बन्द कमरे में बहुत व्यथित हो गया हूँ। दीवार पर कई कागजी आकृतियाँ उभर रही हैं—मिट रही हैं। अलमारी में रखी बन्द फाइलें एक दूसरे पर हिंसात्मक हुई विचार कर रही हैं। एक तरफ भौंके हुए कुत्ते की भाँति है तो दूसरी तरफ दो कुतिया की आड़ में एक 'दुश्मन' का वार्तालाप। एक तरफ ऐसी मानव आकृति है जिसकी खोपड़ी के ऊपर का भाग खुला हुआ है और उसमें से राक्षस उछल कर बाहर आ रहे हैं और दूसरी तरफ एक चमत्कार पर दो नर-मुंड विमर्श करते हैं। मुझे मालूम है इन ढेर सारे चित्रों में से कुछ-एक चित्र ही 'चित्र' रूप में व्यक्त होंगे। जो बलवान होंगे उन्हें इस सृष्टि में जगह मिल जायेगी जो कमजोर होंगे वे विलीन हो जायेंगे'''।

मैं चित्र बनाने से पूर्व ऐसी विचित्र हालत में हूँ कि न तो अब मैं कोई सृष्टि का 'तत्व' देख सकता हूँ न 'रूप', न कोई 'रंग' और न कोई 'रेखा' ही। क्योंकि न जाने कौन-सा तत्व मुझे अच्छा लग जाये और मैं बीच में ही भटक कर अपने लक्षित स्थान पर पहुँचने से वंचित रह जाऊँ।

अभी तो हालत ऐसी है कि मैं किसी से मिल नहीं सकता, कोई संगीत नहीं सुन सकता क्योंकि न जाने वह मेरे मौजूदा 'रस' से मेल खाये या नहीं। अभी तो बस मैं आँख बन्द किये कान बन्द किये, यहाँ तक कि दिमाग बन्द किये समाज में विचरण कर सकता हूँ—क्योंकि मेरे सामने एक लक्ष्य है और जिसके राह में भटकने की अनुमति मुझे नहीं है।

आज सुबह उठते ही मैंने अपने सहयात्रियों से कह दिया था कि मैं साधारण मानसिकता में नहीं हूँ और स्वयं घूसा ताने हुए इस खोज में बैठ गया कि मानव स्वभाव की इस प्रक्रिया का भौतिक रूप क्या है और आध्यात्मिक स्वरूप क्या है। इस चित्र में दो आकृतियाँ बनाई गई हैं जिनमें से एक घूसा ताने हुए और दूसरी वह जिस पर घूसा ताना गया है।

मैं अपने आपको दोनों जगह स्थापित करके यह तय करना चाहता हूँ कि इनमें से किस आकृति का प्रतिनिधित्व मैं स्वयं करता हूँ और किसका कोई और। पर दूसरा कोई भी तैयार नहीं है मेरी इस आक्रामक मनोदशा को भोगने के लिए और मुझे खुद को ही दोनों की पात्रता निभानी पड़ी है।

: :

मामला विकट है पिछले 2-3 दिन से जो अन्तर्द्वन्द्व चल रहा था वह आज सुबह चित्र पूरा होने से पहले ही खत्म हो गया। मुझे चित्र पूरा करने के लिए इस

वक्त न केवल विद्रोह की आवश्यकता थी बल्कि तीव्र आक्रोश की चाहत भी थी। उधर प्रकृति साथ नहीं दे रही थी। सदियों की शान्त रातों से मैं उठा था और एक नये चित्र के सृजन की ओर प्रवृत्त होना चाहता था। मुझे ऐसा लग रहा था कि मेरे इस नये चित्र में अनेक चेहरे होंगे जिनके हाथ उठे हुए 'विद्रोह' व्यक्त करते होंगे।

इससे पहले कि मैं किसी आध्यात्मिक राह पर मोड़ ले लू मुझे अपने आपसे चिढ़ हो रही है कि पिछले तीस वर्षों से मैंने यथार्थ को छोड़कर कल्पना का सहारा लिया है। यदि मुझमें वास्तव में शक्ति है तो खुले मैदान में अपनी कुशलता का परिचय क्यों नहीं देता? पर अपने आपको असमर्थ पाकर धुआधार बेतहाशा पूर्व शक्ति को जुटाकर घोड़े पर बैठ जाता हू अर्थात अपने प्रथम चित्र को पूरा करता हूं।

मुझे मौजूदा परिस्थितियों से हार खाया हुआ हताश व्यक्ति तो नहीं कहा जा सकता पर 'हा' सीधी धारा के साथ समझौता नहीं करने वाला अवश्य कहा जा सकता है। मैं जानता हू कि समुद्र की लहर को रोक पाना तो सम्भव नहीं है पर एक ही धारा में बहने के लिए भी मैं तैयार नहीं हू' ।

मैं इस चित्र को जिसमें घोड़ा गिरा हुआ था—पर जिसका पाव बहुत बाहर निकल गया था बनाते वक्त इतना अव्यवस्थित हो गया हू कि जैसे कोई युद्ध के मैदान में गिरने के बाद और वापस सम्भलते वक्त योद्धा हो जाता होगा' ।

इस चित्र को बनाते वक्त ब्रश या रग मुझसे नहीं सम्भल पा रहे थे। यहा तक कि चित्र समाप्त करने से पूर्व रगो को और आकारो को व्यवस्थित करने के लिए मुझे अलग से योजना बनानी पड़ी थी।

अब मुझे स्वय आश्चर्य हो रहा है कि पिछले जीवन की राह पर 'अध्यात्म' से जो मेरा अटूट सम्बन्ध था वह इन चित्रों को बनाने में खूब छिन्न-भिन्न हुआ है और ऐसा हुआ तो क्यों हुआ।

: :

लगभग 8-10 दिन बाद जब होश सम्भाल रहा हू तो मुझे अहसास हो रहा है कि सामाजिक जीवन की व्यवस्थाओं को नजर अन्दाज करके ही मैं चल रहा था और उन्हीं व्यवस्थाओं ने मुझे यह चेतना दी कि मेरे चित्र समाज की वास्तविक स्थिति का प्रतिनिधित्व नहीं कर रहे। मुझे दौड़ते-दौड़ते एक जगह रुककर इस शाश्वत सत्य पर विचार करना पड़ा कि केवल भावावेश से जीवन की राह तय नहीं की जा सकती, बल्कि अथक परिश्रम से ज्यादा भावों की गहराई ही एक अच्छी कृति के सृजन के लिए आवश्यक है।

के सृजन में मैं इतना बेतहाशा दौड़ा कि मेरे घोड़े के पाव के नीचे

कितने ही लोगो के अरमान कुचने और मैं अपनी मनमानी पर तुला हुआ अपनी व्यक्तिगत सफलता प्राप्त करने के लिए कितना अन्धा हो गया था और अब अपने आपको व्यवस्थित करने के लिए एक और नये चित्र की शुरुआत करता हू जिसका शीर्षक है 'विस्तृत आकाश के नीचे' जिसमे एक आकृति आकाश की तरफ मुह करके दोनो कोहनियो को उठाये हुए ऐसे भावो मे विचार मग्न है कि जीवन की राह व्यक्तिगत स्वार्थ को पूरा करने के लिए है या उसमे सामाजिक दायित्व का भी कुछ निर्वाह करना आवश्यक होता है'''। ☐

नियुक्ति पत्र

नन्दकिशोर 'निर्झर'

अपनी खूबसूरत जिन्दगी के पांच बरस परिमल ने आवेदनों, परीक्षाओं तथा साक्षात्कारों में स्वाहा कर दिए थे। रात-दिन प्रयत्न करते पर भी उसे नौकरी नहीं मिल पा रही थी। वह दिनों-दिन अन्दर से टूटता जा रहा था। सरकारी सेवा में आने की आयु सीमा सन्निकट थी। उसके मन-मस्तिष्क में निराशा के घने काले बादल गहराने लगे थे।

उसके पिता प्रकाश बाबू पांच पुत्रियों के पिता थे। शिक्षा विभाग में सामान्य बाबू पिता को अपने ज्येष्ठ पुत्र से अनेक आशाएं-अपेक्षाएं थीं। पिता की सारी योजनाओं पर पानी फिरता नजर आ रहा था। वे अपने बेरोजगार पुत्र से क्या पा सकते थे। बड़ी मुश्किल से वे एक पुत्री का विवाह कर पाए थे, लेकिन दुर्भाग्यवश दो वर्ष पूर्व ही उसके पति ने कम दहेज का बहाना बनाकर उसे छोड़ दिया था। वह परित्यक्ता का जीवन व्यतीत कर रही थी। अपनी शेष पुत्रियों के हाथ पीले करने की चिन्ता उन्हें रात-दिन बेचैन किए रहती थी।

उनकी सेवा निवृत्ति शीघ्र होने वाली थी। वे चाहते थे किसी प्रकार परिमल को उनकी निवृत्ति से पूर्व नौकरी मिल जाए। वे सोचते थे यदि परिमल की आयु अधिक हो गई तो वह हमेशा-हमेशा के लिए सरकारी सेवा से वंचित रह जायेगा।

वे शाम को शहर से दूर सड़क पर टहल रहे थे।" सहसा उन्हें याद आया, सरकार अपने मृत कर्मचारियों के आश्रितों को नौकरी देती है। उनके अशान्त मन में अनेक संकल्प-विकल्प उदित हुए, अस्त हुए। अन्ततोगत्वा वे हार चुके थे और दूसरे ही क्षण उन्हें एक ट्रक कुचलकर आगे बढ़ गया।

कुछ दिन बाद डाकिये से परिमल को एक लिफाफा मिला, खोल के देखा, उसमें उसके लिए नियुक्ति पत्र था।

वह न रो सकता था, न हंस सकता था। □

कन्या

दिवाकरान्त

रमा ने जब पहली कन्या को जन्म दिया तो पति और सास-ससुर सबके मुंह उत[र]
गये थे। उस मासूम-सी [illegible] भी इन से नहीं दिया गया। दूसरी कन्या को जन्म दे[ने]
के बाद तो उसे तरह-तरह से सताया जाने लगा। तीसरी बार जब उसके पाव
भारी हुए तो वह स्वयं अज्ञात भय से कांपने लगी, क्यों इस बार भी ''। सास
पहले से ही साफ-साफ कह चुकी थी, पति ने अब की बेर लड़की जनी तो दोनों
को जान से मार डालूंगी।

ज्यों-ज्यों प्रसव के दिन नजदीक आने लगे उसकी घबराहट बढ़ने लगी। नवें
माह के आखिरी दिनों में वह बुरी तरह घबरा गई और अत्याचार सहने की
शक्ति उसमें नहीं रह गई थी। आखिर उसने एक सुबह कुएं में छलांग मार दी।
पुलिस ने जब उसे बाहर निकाला तो रमा की लाश ही बाहर निकली और एक
नवजात बालक भी।

कुछ देर में रमा की लाश को निकाल लिया गया साथ में एक नवजात बालक
की लाश भी।

□

मोती की स्वामिभक्ति

श्यामलाल पवार

बुलन्दशहर के पास एक छोटा-सा गाव है—दनकौर। वहा के गाव के सरपच भोपालसिंह थे। भोपालसिंह अपनी ईमानदारी और कर्तव्य परायणता के लिए आस-पास के गावों मे प्रसिद्ध थे। वे सदैव पचायत और गाव के विकास के लिए कार्य करते। पचायत के सभी सदस्यो का उन पर विश्वास था। सब उनका सम्मान करते थे। भोपालसिंह घुडसवारी के शौकीन थे। उनके परिवार मे अच्छी नस्ल के घोडे रखने का रिवाज था। भोपालसिंह के पास एक घोडा था। नाम था उसका मोती। जब कभी भोपालसिंह घोडे को नाम लेकर पुकारते, मोती तुरन्त हिनहिनाने लग जाता। भोपालसिंह मोती की अच्छी देख भाल करते। उसे चारा, दाना-पानी खुद अपने हाथो से खिलाते-पिलाते।

समीप के गावों मे जाने का काम पडता तो मोती की पीठ पर काठी कसकर भोपालसिंह कहते, 'चल मोती अमुक गाव चलना है।' मोती भी क्या घोडा था, हवा से बातें करता सरपट भागता।

एक दिन भोपालसिंह दनकौर से मोती पर सवार होकर दूसरे गाव आ रहे थे। रास्ते मे बीरान जगल था। कुछ लुटेरे इन्हीं दिनों उधर आये हुए थे।

ग्राम पचादर का ग्रामपाल मोती की अजीब हरकतों को देखकर शीघ्र ही भाप गया कि भोपालसिंह के साथ कुछ-न-कुछ घटना घटी है। ग्रामपाल मोती की पीठ पर सवार हुआ। मोती उसे शीघ्र ही वहां ले आया जहां भोपालसिंह की लाश पड़ी थी।

ग्रामपाल भोपालसिंह को जमीन पर मरा हुआ देखकर रो पड़ा। उसने चारो तरफ देखा पर कही कोई दिखाई नहीं दिया। उसने मोती की लगाम भोपालसिंह के हाथ मे थमायी। लाश को मोती के भरोसे छोड़ ग्रामपाल सीधा पुलिस स्टेशन गया। पुलिस अधिकारी फौरन उसके साथ घटना स्थल पर आये। दुर्घटना-स्थल का निरीक्षण कर लाश को गाड़ी मे डालकर पोस्टमार्टम कराया और तत्काल हत्यारो की खोज शुरू की।

भोपालसिंह की हत्या का समाचार जगल मे आग की तरह गाव मे फैल गया। सारा गाव उनके अन्तिम दर्शन के लिए उमड पडा। मोती भी उदास मन अपने स्वामी को देखकर आसू टपका रहा था। तीन दिनो तक मोती ने चारा-दाना-पानी नही लिया। तीसरे दिन हत्यारे पकड़े गये तभी मोती ने पानी पीया। मोती की उदासी कई दिनो तक देखी गई। मोती की स्वामिभक्ति की चर्चा आज भी दनकौर मे घर-घर सुनाई देती है। एक मूक प्राणी ने भी अपने स्वामी के लिए इतना प्यार दिखाया, यह लोगो की जुबान पर आज भी है।

☐

सच्ची सुन्दरता

अविनाश चन्द्र 'चेतक'

महाराज मनुशंकर कीर्ति देश के राजा थे। वे अपनी प्रजा के सच्चे हितैषी थे और विद्वानों, कलाकारों व मूर्तिकारों का बहुत आदर करते थे।

एक बार उनके दरबार में एक मूर्तिकार आया। राजा को जब उसके बारे में पता चला तो उसकी प्रशंसा करते हुए कहा, "मूर्तिकार जी, आप राजकुमारी की एक मूर्ति तैयार कीजिए। पसन्द आने पर आपको उचित इनाम दिया जाएगा।"

मूर्तिकार कुछ दिनों बाद राजकुमारी की मूर्ति लेकर दरबार में उपस्थित हुआ। उसने साधारण-सी मूर्ति बनाई थी। उसमें राजसी तड़क-भड़क नहीं थी। राजा ने मूर्ति की भूरि-भूरि प्रशंसा की और मूर्तिकार को सोने की सौ मोहरें इनाम में दीं।

मूर्तिकार सोने की सौ मोहरें पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सोचा, राजा ने इस साधारण-सी मूर्ति के लिए सोने की सौ मोहरें दी हैं तो वह सुन्दर और सजी-धजी मूर्ति के लिए पता नहीं कितनी मोहरें देगा। उसने राजकुमारी की एक सुन्दर व सजी-धजी मूर्ति राजा को भेंट करने का निश्चय किया।

अपनी बुद्धि से उसने राजकुमारी की एक सुन्दर मूर्ति तैयार की और राजा को जाकर सौंप दी। अब वह इनाम का इन्तजार करने लगा। राजा मूर्तिकार के लोभी स्वभाव को जान गया। उसने क्रोध में आकर कहा, "तुमने अपनी कला का उपहास उड़ाया है। तुमने धन के लोभ में अपनी कला को भुला दिया है। इससे तुम्हारी कला साज-सज्जा के आडम्बर में लुप्त हो गई है। एक बात सदा याद रखो कि जो सुन्दरता वास्तविकता में व सादगी में है वह आडम्बर वाली साज-सज्जा में कभी नहीं हो सकती। राजकुमारी की ऐसी मूर्ति बनाकर तुमने कला व उसकी

सुन्दरता की बेइज्जती की है। तुम एक कलाकार हो इसलिए तुम्हें चेतावनी देकर छोड़ रहा हूं। भविष्य में कभी भी अपनी कला को उपहास मत बनने देना।"

मूर्तिकार राजा का निर्णय सुनकर उदास हो गया। आज उसकी समझ में यह बात आ गई थी कि सादगी में सच्ची सुन्दरता होती है। □

तुनक मिजाजी

नमोनाथ अवस्थी

बड़े मियां आत्म-हत्या करने मकान के ऊपर चढ़े हुए थे। सारा मुहल्ला इकट्ठा हो रहा था। लोग नीचे से समझा रहे थे—मियां नीचे उत्तर आओ क्यों व्यर्थ जान गंवाना चाहते हो? पर मियां को एक भी नहीं लग रही थी।

किसी ने कहा—यार! अपना नहीं तो बीबी का तो ख्याल करो। मियां तल्खी से बोले—"अरे उसकी याद मत दिलाओ उसी हरामजादी ने तो मुझे मजबूर किया है।"

दूसरे ने कहा—"यार बच्चों की तरफ देखो।" मियां और भी बिफर गये—"किसके बच्चे, मेरा कोई बच्चा नहीं, हट जाओ, मुझे कूदने दो।"

लोग परेशान हो गये। बड़े मियां ने अन्दर से ताला लगा रखा था। कोई भीतर जा भी नहीं सकता था। काफी देर तक झमेला होता रहा—लोग समझाते रहे और बड़े मियां अपनी बात पर अड़े रहे।

इतने में ही एक फकीर आया और तमाशा देखकर बोला—हट जाओ—इस भले आदमी को मरने क्यों नहीं देते, यह परेशान हो रहा है.…तो बड़े मियां ऊपर से बोले—क्यों बे फकीर, तू कौन होता है वकालत करने वाला? जा, हम नहीं मरते, तू क्या कर लेगा। □

संयोग

प्रकाश कुमार शर्मा

[illegible] अध्यापक [illegible] के कुछ समय बाद ही उनकी नियुक्ति शहर के किनारे बसे एक ग्रामीण विद्यालय में हो गई।

शहर से उस ग्रामीण क्षेत्र में रोज आने-जाने में उन्हें कोई विशेष परेशानी नहीं होती थी। एक दिन एक कक्षा में, अकेले दिनों में, वे इस बात को अच्छी तरह समझाकर आये थे कि जब रोम में रहो तो रोमवासियों जैसा ही व्यवहार करो। साथ ही 'जैसा देश वैसा भेष' पर भी उन्होंने विस्तृत भाषण झाड़ दिया था।

उनका अध्यापकीय विषय कक्षा VI के सामाजिक ज्ञान का था। कक्षा में घुसने से पूर्व उन्हें कक्षा के एक छात्र ने उन्हें अपने विवाह में आने का निमन्त्रण दे दिया। वे जब कक्षा में घुसे तो दो तीन छात्र गर्व के साथ अपनी कमर में कटारें लगाये हुए दिखे, और पहली बार उन्होंने डायरी में लिखे गये निर्धारित पाठ को छोड़कर, बाल विवाह, पर्दा प्रथा जैसी कुरीतियों के बारे में छात्रों को प्रश्न-उत्तर विधि से पढ़ाना शुरू कर दिया।

न जाने क्यों उनकी जिज्ञासा जागी। उन्होंने कक्षा के सभी विवाहित छात्रों को अपने-अपने स्थान पर खड़े होने को कहा।

इस पर पूरी कक्षा खड़ी हो गई। कुछ देर वे तिलमिलाते हुए खड़े रहे। फिर सिर पर हाथ रखकर कुर्सी पर बैठ गये, क्योंकि इसमें छात्रों का भी कोई दोष नहीं था।

उस दिन शेष घटों में उन्होंने छात्रों को कुछ नहीं पढ़ाया। प्रधानाध्यापक से आधे दिन का अवकाश लेकर वे जल्दी घर पहुंचे उसी दिन उन्होंने अपने माता-पिता से कहा कि मा-बाप को अपनी सतान के भले बुरे का सबसे अधिक ध्यान रहता है।

अपने मा-बाप की पसद की लडकी से उन्होंने, लडकी को बिना देखे ही, विवाह की हा भर ली।

उस दिन रात को ही उनके घर का आंगन महिलाओ के गीतो से गूज उठा। कुछ गीतो मे मोहन लालजी की तुलना पितृ-भक्त श्रवण कुमार से की गई थी। अगले दिन वे जब विद्यालय गये तो अपने सभी साथियो के लिए मिठाई भी ले गये। अगले दिन पूरे विद्यालय मे उनके शीघ्र होने वाले विवाह की ही चर्चा रही।

चर्चा उन लोगो ने अधिक की जो विवाह के बाजार मे उन्हे 'ओवर-एज' मान चुके थे। □

खैयाम की प्रासंगिकता

सत्य शकुन

उमर खैयाम की रुबाइयात मे कितना डूबा जाये, यह मैं आज
पाया हू। लेकिन एक सच जरूर है कि अगर इसमे डूब पाने
किसी को भी इसमें पूर्णतया डूबकर ही संतोष होगा। हां, एक
जरूर रखें कि जीवन का एक-एक क्षण उड रहा है और ये क्षण क
इन्ही क्षणो मे बधा, नपा-तुला हमारा जीवन चला जा रहा है। इ
है तो कही-न-कही विरक्ति भी। सुख आसक्ति को जन्म देता है त
पैदा करता है। आसक्ति और विरक्ति मे डोलना मानव रह-रहकर
की ओर दौडता है, सध्या की तो वह कल्पना भी नही करना च
छोटे-से जीवनकाल मे, जिसका अन्त निर्बाधित, अभेद्य और निश्चित
कुछ पा लेना चाहता है। शायद अपनी शक्ति और सामर्थ्य से भी कहीं
लेने की चाहना तो मनुष्य मे जन्म से ही हो जाती है। तभी तो उमर
इस तथ्य को उद्घाटित करता है

Dreaming when Dawn's left Hand
was in the sky
I heard a Voice within the Tavern cry,
"Awake, my little ones, and fill the cup
Before life's liquor in its be...

जा स ...

सापेक्ष ... और पुन लौट पाने या न लौट पाने ...बोध उस अनन्त काल
बढता नही है। तभी तो खैयाम कहता है—

And, as the Cock crew, those who stood
before
The tavern shouted—"Open then the Door !
"You know how little while we have to stay,
And, once departed, may return no more."

यहा, जहा एक ओर नश्वरता की बात है तो दूसरी ओर ससार की ओर प्रबल रूप से आसक्त होने की बात है, कभी यहा मनुष्य को ठग भी लगती है क्योंकि वह आखिरकार सबल है तो असहाय भी है। वैसे देखा जाए, तो वह एक भ्रमजाल मे जीता है कि उसने कुछ पाया है। वस्तुत उसे प्राप्त कुछ नही होता अपितु वह खोता है। खोने की दशा मे तो वह चरम सत्य के निकट होता है बशर्ते वह इस स्थिति को चिरन्तन बनाए रख सके। लेकिन होता क्या है ?

Iram[1] indeed is gone with all its Rose,
And Jamshyd's seven-ring'd[2] Cup where
no one knows,
But still the Vine her ancient Ruby yields,
And still a Garden by the water blows.

युद्ध की चरम लालसा सूटस बन जाती है। वह लालसा मनुष्य को कोचती है और पुन. भौतिक विश्व की ओर लौट आने को मजबूर करती है। उसका पुरानी अभिलाषाओं को खोजने का दौर फिर से चालू हो जाता है और इसके साथ ही शुरुआत हो जाती है मानव की अशांति, अस्थिरता, उद्विग्नता और असमर्थता की। ये सब परेशानिया मानव मे आसानी से सुलभ हो जाने वाली पास की वस्तुओं के प्रति राग उपजाती हैं जबकि दूर के प्रति वैराग। इसी भावनावश खैयाम की लेखनी से निम्न पक्तिया नि सृत होती हैं—

"How sweet is mortal sovarnty !"—think
some :
Others—"How blest the Paradise to come !"
Ah, take the Cash in hand and wave the
Rest,
Oh, the brave Music of a distant Drum !

दूर आने का झझट कौन मोल ले। न जाने क्या-क्या और किस प्रकार के

1 शद्दाद नामक राजा का गुलाबों का लगाया गया बाग।
2. सात चक्र वाला प्याला जिसमें कि सातों आसमान, सातों नक्षत्रों और
[illegible] था।

गुजरे होंगे ? उस स्वर्ग की कामना भी नहीं है क्योंकि वह सुख नानाविध कष्ट सहने के बाद प्राप्त होगा जबकि संसार में भौतिक सुख तो उसके कदमों मे जरा से प्रयास करने मात्र से उपलब्ध हो सकते हैं। लेकिन यह सब भटकन मात्र है। यौवन काल की क्षणिक आनन्दानुभूति कह लीजिए और चाहे दीपक की आखिरी भभक। यह सच्चाई खैयाम से दूर नहीं—

The worldly Hope men set their Hearts
upon
Turnes Ashs—or it prospers, and anon
Like Snow upon the Desert's dusty face
Lighting a little Hour or two—is gone

× × ×

And those who husbanded the golden
Grain,
And those who flung to the Winds like Rain,
Alike to no such aureate Earth are turn'd
As, buried once, Men want dug up again

और फिर, एक अवस्था ऐसी भी आती है जबकि मनुष्य कुछ काल के लिए नश्वरता के बारे मे भी विचार करता है। वह इस विश्व मे अपने जीवन को जीर्ण-शीर्ण सराय में कुछ काल के लिए ठहराव मानता है किन्तु इस अल्प काल के प्रति मोहाच्छन्न भी रहता है क्योंकि शून्य मे विलीन होने के उपरान्त पुन शीघ्र लौट पाने के प्रति वह आश्वस्त नही होता।

Ah, make the most of what we yet may
spend
Before we too into the Dust descend,
Dust into Dust, and under Dust, to lie
Sans Wine, sans Song, sans Singer, and
sans End!

वर्तमान को जी भरकर भोगने की लालसा मे खैयाम साधु-सन्तो की वाणी को भी निरर्थक करार देता है। एक खास उम्र का यह भी तकाजा होता है कि सत्य को दर-किनार कर, एक सास मे वह समस्त सुखो को पा लेना चाहता है। ऐसी दशा मे खैयाम को निम्न पक्तिया लिखनी पडी होगी—

Why, all the saints and sages who discuss'd
Of the Two Worlds so learnedly, are thrust
Like foolish prophets forth, their words

to scorn

Are scatter'd and their Mouth are stopt
with Dust

इस विश्व मे 'यह होगा' और 'वह होगा' कहना सारहीन है। बड़े-बड़े महारथी, एक-से-एक दिव्य हस्तिया इस ससार मे हुई और चुपचाप कराल के गाल मे समा गयीं, फिर क्यो भविष्य की चिन्ता और भूत की परवाह? जो सम्मुख है, वही प्राण है, खैयाम ने इस बात को स्वीकार किया है—

Oh come with old Khayyam, and Leave
the Wise
To talk; one thing is certain, that life flies;
One thing is certain, and the Rest is Lies,
The Flower that once has blown for ever dies

कितने दिन रहेगा भोगवाद का यह ख्वार? क्षणभगुरता के अहसास से बचने के लिए भले ही हम कितने ही दर्शन बना लें, कितनी ही उक्तिया दे लें पर एक दिन हमे अपने गुजरे हुए क्षणों का आकलन तो करना ही होगा। जब पता लगेगा कि हमने तो जो कुछ किया, स्वार्थवश किया तो दोष किस पर मढा जायेगा? स्वय पर न! यौवन की खुमारी जब उतर जाए तो यह अहसास होना भी जरूरी है—

"Surely hot in vain
My substance from the common Earth was ta'en
That he who subtly wrought me into Shape
Should stamp me back to common Earth again"

× × ×

Indeed the Idols I have loved so long
Have done my Credit in Men's Eye much wrong
Have drowne'd my Honour in a shallow Cup,
And sold my Reputation for a song

पर यह अहसास आध्यात्मिकता के अन्त तक पहुचे तब ही सार्थक माना जाएगा—

And when Thyself with shining Foot shall pass
Among the Guests Star scatter'd on the Grass
And in thy joyous Errand reach the spot
Where I made one-turn down an empty
Glass [1]

उपर्युक्त रुबाई का अर्थ है ... चाहिए कि अपने ... उलट दो।' अब इसका
दोस्तो ! जब तुम आपस में मिलो तो तुम्हें चाहिए कि अपने ... उलट दो।' अब इसका
करो। जब उम्दा शराब पियो और हमारी बारी आए तब उलट दो।' अब इसका
आशय आप कितने गहन अर्थ में लेते हैं यह आप पर निर्भर है।

उमर ख़ैयाम का जन्म ग्यारहवीं शताब्दी में हुआ था और मृत्यु 12वीं शताब्दी में हुई। समय कालग्रह बनता गया। मनुष्य की खोजी प्रवृत्ति ने दार्शनिक, गणितज्ञ और ज्योतिषी ख़ैयाम को तो ढूंढ़ लिया पर काव्य के क्षेत्र में मात्र उनकी 1000 रुबाइयां प्राप्त हो पायी हैं। वैसे कुछ क्षेपक भी हैं जो बलात ख़ैयाम के खाते में डाल दिये गये हैं।

आज तक ख़ैयाम की फारसी रुबाइयों के कई अनुवाद हो चुके हैं। सभी पर उंगलियां उठी हैं। मुख्य रूप से रुबाइयों का रचना-क्रम अभी तक स्थापित नहीं हो पाया। जब तक इन्हें समयानुक्रम न किया जाये तब तक ख़ैयाम को समझ लेना भूल होगा। हिन्दी में अधिकांश अनुवाद उपर्युक्त फिट्‌जजेरल्ड के अंग्रेजी अनुवाद से किये गये हैं। फिट्‌जजेरल्ड ने 674 रुबाइयों में से केवल 75 रुबाइयों का अनुवाद किया है। कैसे कहा जा सकता है कि ये 75 रुबाइयां विशुद्ध हैं ? विशुद्धता का जब सवाल उठता है तो कहा जा सकता है कि क्या जानें मूल कवि का सिद्धान्त पकड़ में आया है या नहीं ? मेरा अपना विचार है कि अनुवादक लेखक की मन-स्थिति को कभी नहीं पकड़ सकता। कयास भले ही लगा लिए जाएं। मैं किस मन स्थिति में क्या लिखना चाहता हूं ? किस अर्थ में लिख रहा हूं। यह सम्भवतः दूसरा नहीं जान सकता। किसी भी लेखक के दर्शन को समझ लेने का दावा करने वाले कहीं-न-कहीं भ्रम में होते हैं। हां, वे अपनी समझ से उसे समझ लेने की बात कर सकते हैं। किसी भी लेखक की रचना को समझने के लिए लेखक के समय के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आध्यात्मिक पहलुओं को जानना भी तर्कसंगत रहता है।

11वीं सदी के फारस पर नजर डालें। वहां इस्लाम का आधिपत्य हो चुका था। 7वीं शताब्दी में इस्लाम ने फारस में कदम रखा था। उससे पूर्व वहां के लोग अफलातून, भारतीय वेदान्त दर्शन, कनफ्यूशियस और ईसा को भी जानते-पहचानते थे और इन धर्मों के प्रति सहिष्णुता की भावना रखते थे। कालान्तर में उनके अपने राष्ट्रीय धर्म जारोस्ट्रियन की स्थापना के साथ ही अन्य धर्मों के प्रति उदारता की भावना क्षीण हो गयी किन्तु मरी नहीं। आने वाले समय में इस्लाम वहां हावी हो गया किन्तु फारस के राष्ट्रीय धर्म की उदारता सूफीवाद के रूप में उभरी। सूफीवाद पर यूनानी, भारतीय और फारसी विचारों की छाप तो थी ही, इस्लाम के भी कुछ तत्व इसमें थे। कवियों ने धार्मिक कठमुल्लों से बचने के लिए अब अपने अद्वैतवाद के गीतों को सूफीवाद की आड़ दे दी। इस्लाम धर्म इसे प...

नहीं करता था क्योंकि इनकी पुकार रागात्मकता की ओर थी जबकि इस्लाम विरागात्मक धर्म था। फारस की सुन्दरता, उसकी भूमि के गुल, बुलबुल, बहार और शराब ने इन कवियों को विद्रोही प्रतीक प्रदान किये। ये दोहरे अर्थ लिए हुए थे। एक ओर जनसाधारण की दुर्बलता को इनमें सहारा मिलता था, दूसरी ओर मनीषियों को इनमें आध्यात्मिकता झलकती मिलती थी।

ऐसी फारस भूमि के निशापुर (खुरासान) में खैयाम का जन्म हुआ। स्वाभाविक था कि वे रागात्मक होंगे। यौवन की पुकार वैसे भी रागात्मकता लिए होती है। विज्ञान, ज्योतिष और दर्शन का यह विद्वान् इहलोकवादी भी निश्चित रहा होगा। वसंत और पतझड को कभी अलग किया जा सकता है? बसंत (यौवन) में तृष्णा उपजती है और तृष्णा कभी बुझती नहीं है, इसका अन्त नहीं होता, पर हां, आयु की ढलान के साथ अद्वैतवाद या ज्ञान की प्रधानता का उभरना आवश्यक है। वृद्धावस्था (पतझड) में नई कोपलों का विरोध सह पाना मुमकिन नहीं होता और फिर मुक्ति की लालसा भी तो करवट लेती है। अन्ततः वाणी धर्म प्रधान हो जाती है। यह चक्र मृत्यु के साथ समाप्त होता है। यही सब खैयाम के साथ भी निश्चित घटित हुआ होगा। तभी तो उनकी रुबाइयों में मन की भटकन, स्वप्नों की जगमगाती रोशनियां, तृष्णा का विस्तृत होता दायरा, अतीत के इतिहास से लिपटता अज्ञात हृदय दृष्टिगोचर होता है। मानव की यह पीडा आज भी उसी गति से चली आ रही है। उसके सोचने के ढंग में कोई बदलाव नहीं आया। यही कारण है कि आज भी हम जीवन के पार देखने की दृष्टि नहीं पा रहे हैं, फलस्वरूप सुख और दुःख में लिपटते-लिपटते, नाना प्रकार की तृष्णाएं मन में लिए 'चिर तृषित' ही इस जगत् से पलायन कर जाते हैं। □

समकालीन हिन्दी उपन्यास साहित्य मे व्यक्ति चेतना के स्वर

सरला भूपेन्द्र

समकालीन हिन्दी उपन्यास वर्तमान जीवन को सम्पूर्ण रूप मे प्रस्तुत करने
प्रयास है। समाज मे व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण व्यक्ति समाज से लड र
और कुण्ठित हो रहा है। इस सन्दर्भ मे डॉ० लक्ष्मीकान्त सिन्हा का कथ
"समाज मे व्यक्ति लड रहा है और समाज उसे कुठा (फ्रस्ट्रेशन) दे रहा है, उ
दे रहा है, उसे कुछ नही लेने देता।" (हिन्दी उपन्यास साहित्य का उद्भ
विकास डॉ० लक्ष्मीकान्त सिन्हा पृष्ठ 447) परिणामस्वरूप व्यक्ति
सत्रास, घुटन, पीडा, निराशा, अनास्था, अविश्वास आदि प्रवृत्तिया घर
है। समाज की परम्पराओ मे उसका विश्वास उठ गया है, वह विद्रोही
है। इस विद्रोह के माध्यम से व्यक्ति अपने 'स्व' को प्रतिष्ठित करना चा
इसकी प्रतिष्ठा के लिए यदि उसे ईश्वर का विरोध भी करना पडे तो किन
जीवन मे व्याप्त इन समस्त प्रवृत्तियो की अभिव्यक्ति ही साठोत्तर उप
प्रमुख स्वर है। साठोत्तर उपन्यास मे व्यक्ति चेतना की अभिव्यक्ति इन्ही
के माध्यम से हो रही है।

व्यक्ति चेतना की प्रमुख प्रवृत्ति ईश्वर के प्रति अनास्था है। आज व्यक्ति
ईश्वर मे विश्वास को अपनी प्रगति मे बाधक मानता है। ईश्वर के प्रति विश्वास
करना अपने सम्मान के विरुद्ध समझता है—"आज के जमाने मे धर्म-कर्म सभी
उठता जा रहा है। ईश्वर का नाम नही लेने मे मनुष्य अपनी प्रतिष्ठा समझ रहे
है। भगवान के भक्तो को लोग ओछी निगाहो से देखते है।" (माटी की महक
[illegible] 42) मुखर्जी बाबू के इस [illegible] स्पष्ट होता है कि
सच्चिद

व्यक्ति स्वय तो ईश्वर को नही मानता और मानने वालो के प्रति उसके मन मे घृणा एव अपमान का भाव रहता है ।

इतना ही नही उसकी चेतना तो मन्दिर मे रखी लाखो की सम्पत्ति को करोडो लोगो के हित के लिए सदुपयोग करना चाहती है । व्यक्ति का मानना है कि यदि वह सम्पत्ति व्यक्ति का हित नही कर सकती तो फिर उसकी सार्थकता क्या है ?—"मन्दिर ही जब किसी की भूख न मिटायेगा तो वह भगवान का घर कैसा ?" (दो गाव . मुबारक खान 'आजाद', पृष्ठ 229) मन्दिर की सम्पत्ति का सदुपयोग न होने पर उसे भगवान का घर मानने से इन्कार करना अनास्था की अभिव्यक्ति है ।

ईश्वर के प्रति अनास्था का चरम रूप तो वहा दिखाई पड़ता है जहा व्यक्ति ईश्वर को मरा हुआ घोषित करता है—"क्या स्वय ईश्वर भी मरा हुआ है नही ?" (अपने-अपने अजनबी अज्ञेय, पृ० 109)

साठोत्तर उपन्यास मे प्रमुखतया प्राचीन मूल्यो का विरोध और नवीन मूल्यो के प्रति आस्था व्यक्त हुई है । इसका प्रमुख कारण है व्यक्ति चेतना का विकास । आज व्यक्ति निश्शक होकर प्राचीन मूल्यो का विरोध कर रहा है क्योकि भविष्य को बदलने के लिए वर्तमान का विद्रोह आवश्यक है । इसी सन्दर्भ मे अरुण का कथन—"हमे ऐसा समाज बनाना है जो पुरानी व्यवस्था के पैर काट डाले ?" (टूटा टी सैट भगवती प्रसाद वाजपेयी, पृष्ठ 23) प्राचीन मूल्यो के प्रति अनास्था की अभिव्यक्ति है ।

वैवाहिक सम्बन्ध जो प्राचीन काल से चला आ रहा है, जो हमारी सस्कृति का आदर्श है, उसके सम्बन्ध मे भी आज मान्यताए परिवर्तित हो रही हैं । "जगल के फूल" उपन्यास के नायक सुलक के कथन मे यह बात स्पष्ट है—"हम अपनी जाति के ढग से विवाह नही करेंगे । अनविहाए रहकर ही एक साथ रहेंगे ।" (जगल के फूल राजेन्द्र अवस्थी, पृष्ठ 32) यहा पुरातन आदर्शों के ह्रास और स्वतन्त्र चेतना के माध्यम से व्यक्ति चेतना का प्रस्तुतीकरण ही हुआ है ।

वर्तमान समय मे समस्त सम्बन्ध परिवर्तित हो गये हैं । यदि कुछ है तो सिर्फ व्यक्ति की स्वय की सत्ता, उसका व्यक्तित्व । अपने व्यक्तित्व को सार्थकता प्रदान करना ही व्यक्ति का प्रमुख लक्ष्य है । उसके लिए वह कोई भी चुनौती स्वीकार कर सकता है । 'मुक्तिबोध' मे 'व्यक्तित्व' की स्वीकृति स्पष्ट हुई है । सहाय के मिनिस्टर का पद त्यागने के निर्णय पर उनकी पत्नी उन्हे चुनौती देती है, उस समय उनका कथन—"विधान निर्मम होता है, विधाता भी निर्मम होता है । उनके तले हम सबको ममताहीन और दृढ होकर चलना है । व्यक्तित्व को किसी हालत मे कीमत मे नहीं दिया जा सकता ।" (मुक्तिबोध जैनेन्द्र, पृष्ठ 17) यह उनके व्यक्तित्व की स्वीकृति है, अह का परिचायक है ।

व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के विकास के लिए स्वतन्त्रता को एक आवश्यक शर्त मानता है और स्वतन्त्र जीवन जीना चाहता है। अपनी स्वतन्त्रता में कोई भी बाधा उसे स्वीकार नहीं। यहाँ तक कि वह विवाह को भी एक बन्धन मानता है इस ...ए उसका विचार है कि—"बन्धन चाहे जैसा हो आखिर आदमी को बाँध लेता ... । तब आदमी दास बन जाता है, बिक जाता है। परवशता बुरी चीज है ... चाहे ...ह आदमी को ब्याह करने से मिले या अपने देश पर पराये शासक के अधिकार कर लेने से।" (जगल के फूल राजेन्द्र अवस्थी 'तृषित', पृष्ठ 37) इस पर भी यदि कोई उसकी स्वतन्त्रता का मार्ग बाधित करता है तो इसका अन्तर विरोध और अस्वीकृति से भर उठता है। कुछ मानती भी हूँ और इस मानने में बहुत कुछ अधिक है मेरा न मानना, मेरा बहुत बड़ा अस्वीकार स्वीकारो तुम, या अन्य। मेरे पास तो है नगर की मशालों से आलोकित या जलता हुआ मेरा हाहाकारमय एक अस्वीकार। किन्तु मेरे व्यक्तित्व के लिए तुम्हारे इस समाज की सत्ता, गौण, मिथ्या, प्रवचना एवं चींटी-सा न कुछ।" डूबते मस्तूल नरेश मेहता पृष्ठ 93)

यही नहीं, स्वतन्त्रता में बाधा उपस्थित होने पर व्यक्ति व्यवस्था से सम्मुख एक चुनौती बनकर खड़ा हो जाता है और व्यवस्था को यह बोध कराता है कि वह उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकती—"आपका यह समाज कहता है तू अकेली है। निरीह असहाय है। हम तुझे जीने नहीं देंगे। मैं कहती हूँ तुझमें इतनी सामर्थ्य नहीं है। मैं जीना चाहूँगी तो जी ही लूँगी। तू मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। (एक और अजनबी डॉ० सुरेश सिन्हा, पृ० 78)

समाज तो बहुत दूर की बात है, व्यक्ति अपने स्वतन्त्र जीवन में परिवार व यहाँ तक कि माता-पिता का हस्तक्षेप भी स्वीकार नहीं करता। 'एकोगी न राधिका' की नायिका अपने पिता के यह इच्छा व्यक्त करने पर कि वह उनके ... चले अपनी स्वतन्त्रता का परिचय देती हुई कहती है—"जो आप चाहते हैं हमेशा क्यों हो? क्या मेरी इच्छा कुछ भी नहीं है? मैं आपकी बेटी हूँ, यह ठी... पर अब मैं बड़ी हो चुकी हूँ और मैं जो चाहूँगी वही करूँगी।" (एकोगी राधिका - उषा प्रियम्वदा, पृष्ठ 61) माता-पिता तो क्या, अपनी स्वतन्त्र... बनाये रखने के लिए व्यक्ति अपने पति-पत्नी, प्रेमी-प्रेमिका किसी का भी ... कर सकता है। मालती पारुलकर के उपन्यास 'मुक्ता' की नायिका इसी ... प्रेमी जीनू को इसी कारण त्याग देती है। जीनू इसकी पर बन्धन लगाना ... है, उसकी स्वतन्त्रता पर प्रहार करता है परन्तु इसकी भी इतना यह न... कार पाती और वह जीनू को त्याग कर महि से विवाह कर अपनी स्वत... बनाये रखने का प्रयास करती है।

स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए व्यक्ति अपने आपको ... इसलिए काट लेता है कि वह अपने आपको 'व्यक्ति' ...

सके—"कि रजना एक व्यक्ति भी है अब जिसके लिए इन सामाजिक शिष्टताओ एव वाक चतुराइयो का कोई अर्थ नही रह गया है।" (डूबते मस्तूल नरेश मेहता, पृ० 101)

एक ओर जहा व्यक्ति अपनी स्वतत्रता के प्रति इतना सजग है, सघर्ष कर रहा है वही अधिकार के प्रति सजगता भी उसकी चेतना मे गहरे व्याप्त है। वह अपने अधिकार की माग करता है—"सवाल सिर्फ यह नही है कि दो व्यक्तियो का पारस्परिक सम्बन्ध हो, यह तो समाज की व्यवस्था का सम्बन्ध है। व्यक्ति के मूल अधिकार क्या हो, उसके सोचने का प्रश्न है। यौवन मे एक आकर्षण होता है। मुझे यह कहना नही चाहिए, क्या वह इतनी बडी समस्या है बडो के लिए कि वे उसमे अडगा डालें ? सयम की सीख वे दे सकते हैं। यह भी सत्य है कि हमारे अधिकाश प्रेम वासनामय होते हैं और केवल आकर्षण होते हैं, लेकिन इसके बावजूद हमे अधिकार होना चाहिए कि हम अपना साथी चुन सकें।" (पतझर डॉ० रागेय राघव, पृष्ठ 119) अधिकार न मिलने पर व्यक्ति किसी भी चुनौती को स्वीकार करने के लिए तत्पर रहता है। अधिकार के लिए लडने को ही वह अपना धर्म स्वीकारता है। 'अधिकार का प्रश्न' के नायक उपेन्द्र का कथन—"अधिकारो के लिए लडना हमारा धर्म है" (अधिकार का प्रश्न भगवती प्रसाद वाजपेयी पृष्ठ 12) इस बात की पुष्टि करता है।

एक बार जब उपेन्द्र के पिता उसकी स्वीकृति के बिना उसकी पत्नी को विदा कर देते हैं तो उसका कथन—"विवाह मेरा हुआ है आपका नही। विदा के सबध मे क्या एक बार भी आप मेरे से नही पूछ सकते थे।" (अधिकार का प्रश्न भगवती प्रसाद वाजपेयी, पृष्ठ 12) उसकी अधिकार सजगता को स्पष्ट करता है।

इसी प्रकार 'टूटा टी सैट' मे उच्चवर्ग की शांति बाई अपने धन की शक्ति के बल पर प्रीतिलता को मुडेर पर अगीठी रखने से मना करती है तब प्रीतिलता का कथन—"अरे चलो। बडी सेठ बनती हो। फ्लैट मुफ्त मे नही लिया है। दो हजार लिए बैठी हो। छप्पन चूहे खाय बिलैया चली हज्ज को।" (टूटा टी सैट भगवती प्रसाद वाजपेयी, पृष्ठ 31) उसकी अधिकार सजगता को स्पष्ट करता है। शांतिबाई के कहने पर कि फिर से कहना, क्या कहा—"प्रीतिलता ने आव देखा न ताव और शांतिबाई को तडातड तमाचे लगा दिए।" (टूटा टी सैट. भगवती प्रसाद वाजपेयी, पृष्ठ 31) व्यक्ति की सजगता की ही प्रखर अभिव्यक्ति है।

यह सघर्ष व्यक्ति को एकाकी बना देता है, वह निराश हो जाता है। उसमे अजनबीपन की भावना घर कर जाती है, वह रिश्तो को भूल जाता है—"यह कितनी विचित्र बात है कि अब मुझे सम्बन्धो के सम्बोधनो से घोर विरक्ति हो गई है। बल्कि कई रिश्तों के लिए तो मैं उचित शब्द भी भूल गया हू।" (अपने से

अलग गंगाप्रसाद विमल, पृष्ठ 101) यह स्थिति व्यक्ति को संवेदना शून्य बनाती है। जब सम्बन्धों से ही व्यक्ति विरक्त हो गया तो फिर संवेदना कैसी? रमेश बक्षी के उपन्यास 'जलता हुआ लावा' में इस स्थिति की बड़ी ही सूक्ष्म अभिव्यक्ति हुई है। इसमें लेखक पात्र की शवयात्रा के समय चारों व्यक्ति सिर्फ औपचारिकता निभाते हैं। दो आंसू बहाना तो दूर की बात है उन्हें उसकी मृत्यु का कोई दुःख नहीं है। उनमें से एक तो सिगरेट पीता हुआ जाता है। अंत में चारों शव को [illegible] में लगाकर चाय पीने चले जाते हैं। स्पष्ट है कि अजनबीपन की भावना के फलस्वरूप व्यक्ति चेतना में संवेदनहीनता ने भी विकास पाया है जिसकी अभिव्यक्ति साठोत्तर उपन्यास में हो रही है।

वर्तमान में व्यक्ति के समस्त सम्बन्ध परिवर्तित होते जा रहे हैं। माता पिता, भाई-बहिन, पति-पत्नी आदि आदि सम्बन्धों का कोई आधार रह गया है तो वह है अर्थ एवं स्वार्थ। "मुक्ति बोध' उपन्यास के सहाय मिनिस्टर बातों पर अनुभव करते हैं कि उनके मित्र, पत्नी, पुत्र-पुत्री, दामाद आदि सिर्फ अपने स्वार्थ के लिए उनके आश्रित थे। जब वे पद त्याग का निर्णय लेते हैं तो उनकी पुत्री का कहना— "आप तो जो करना था कर चुके। हमारी सारी उमर पड़ी है। उसका ख्याल क्यों रोकते हैं। बहुमत की बात बाहर ही नहीं, पर मेरी भी मानी चाहिए। अपनी मां से पूछा? बेटी से पूछा? सबसे पूछा? (मुक्ति बोध जैनेन्द्र कुमार पृष्ठ

मे कोई दुख कोई आक्रोश नही—"पहले पत्नी बनी फिर परित्यक्ता, अब 'कीप' रखैल।"'मेरी चाहत मुझे कहां तक ले आई है? मैं क्यो चली इस राह पर? अब चली हू तो इस चुनौती को स्वीकारना होगा। उसे पाने के लिए समाज के सभी कटाक्ष, उपहास हसकर सहने होंगे। झेलना होगा। अपनी बनाई इस कटीली राह पर कितने भी कष्ट आए, चलूगी।" (उसकी पचवटी कुसुम अंसल, उद्धृत-सचेतना, प्रकाशित दिसम्बर 1979, पृष्ठ 166) अपने निर्णय के परिणाम को दृढ सकल्प व्यक्ति चेतना का ही प्रस्तुतीकरण है।

इन सबके अतिरिक्त रेखा (भगवती चरण वर्मा), अंधेरे बद कमरे (मोहन राकेश), सन्तुलन असन्तुलन(मनहर चौहान), मजिल से आगे(महावीर अधिकारी) मित्रो मरजानी (कृष्णा सोबती), किस्से के ऊपर किस्सा (रमेश बक्षी) मछली मरी हुई (राजकमल चौधरी), चिडियाघर (गिरिराज किशोर), टूटती इकाइया (शरद देवडा), सत्तर पास के शिखर (मानु खोलिया), बसती (भीष्म साहनी), आदि उपन्यासो मे भी व्यक्ति चेतना की अभिव्यक्ति का प्रमुख आधार अर्थ एव काम ही रहा है।

स्पष्ट है कि वैयक्तिक स्वातन्त्र्य, समाज के प्रति विद्रोह, अह भाव का विकास चयन की स्वतन्त्रता आदि प्रवृत्तिया व्यक्ति को सजग कर रही हैं। वह अपने अस्तित्व के प्रति सचेत हैं फलत व्यक्ति अपने समस्त समाज अथवा समूह को नगण्य समझता है। उसे कही भी इनका हस्तक्षेप स्वीकार नही है। यदि कुछ स्वीकार है तो सिर्फ अपना 'स्व' व्यक्ति चेतना से प्रेरित समस्त प्रवृत्तिया साठोत्तर उपन्यास साहित्य मे उपलब्ध होती हैं। इसके अतिरिक्त साठोत्तर उपन्यास व्यक्ति चेतना मे होने वाले उन समस्त परिवर्तनो को भी अभिव्यक्त करता है जो व्यक्ति को व्यक्तिगत क्षेत्र मे कुठा, निराशा, अजनबीपन, विद्रोह की ओर ले रहे हैं।

□

सत्य और शान्ति

भगवन्त राव गाजरे

जीवन का मूल ही सत्य है अतः जीवन का लक्ष्य है सत्य का साक्षात्कार करना। यदि जीवन में मनुष्य सम्पूर्ण सत्य का पालन करे तो वह सब कुछ पा सकता है, क्योंकि सत्य ही ईश्वर है। सत्य के बिना जीवन का कोई सिद्धान्त या नियम अथवा आदर्श नहीं चल सकता। सत्य की खोज करने वाले मनुष्य में अभय या निर्भयता का गुण होना अनिवार्य है। अभय हुए बिना सत्य के दर्शन नहीं हो सकते। जैसे अहिंसा के सामने हिंसा शान्त हो जाती है, ठीक वैसे ही शुद्ध तथा पावन सत्य के आगे असत्य शान्त हो ही जाना चाहिए। जो मनुष्य पूर्ण रूप से सत्यमय होता है, उसके लिए निराशा जैसी कोई वस्तु संसार में नहीं है। क्योंकि सत्य का उपासक सदा ही आशावादी होता है।

आज समाज में सबसे बड़ी शक्ति लोकमत है और वह मत सत्य और अहिंसा से ही उत्पन्न किया जा सकता है। सच्ची शक्ति सत्य ही है। जो शक्ति तलवार के जोर से प्राप्त की जाती है वह असली नहीं होती है। स्वयं राष्ट्रपिता बापू ने एक बार कहा था—

"सत्य और अहिंसा के बीच यदि चुनाव करना पड़ेगा तो मैं अहिंसा को छोड़कर सत्य रखने में आगा-पीछा नहीं करूँगा।" यदि हमारे जीवन में सच्चाई है, तो उसका प्रभाव अपने आप लोगों पर पड़ेगा ही, अतः मानव को चाहिए कि वह जिस काम को सच मानता है, वही करे। अपनी आत्मा के मानने पर संसार भी उसको मानने लग जाएगा और वही वास्तव में सत्य होगा। एक बात और ध्यान में रखिए कि जब सत्य ईश्वर है तो उसके लिए कुछ दुष्कर भी नहीं है। क्योंकि सत्य सदैव ही इतना विशाल, विराट और व्यापक होता है कि उसमें सब बातों का समावेश हो जाता है। सत्य सदा ही स्वावलम्बी होता है तथा

पुरुषार्थ या शक्ति तो उसके स्वभाव में ही होती है। इतनी अटूट शक्ति होते हुए भी सत्य में प्रेम तथा कोमलता मिलती है। सत्य के प्रेमी की कथनी और करनी में कभी अन्तर नहीं होता, क्योंकि सत्य ही कहना व सत्य ही करना उसकी प्रकृति बन जाती है। उसका जीवन-दर्शन सत्यमय हो जाता है। सत्य साध्य है और अहिंसा उसका साधन, यह साध्य ही धर्म की सच्ची प्रतिष्ठा है। जो व्यक्ति मनसा, वाचा, कर्मणा सत्य का आचरण करता है, वह अवश्य ही परमेश्वर को पहचानता है।

यदि हम सत्य की उपासना व इसका पालन नियमित रूप से करें तो हमें सही शान्ति, मानसिक और आत्मिक शान्ति प्राप्त हो सकती है। शान्ति पूर्णतया अन्दर की वस्तु है, अत वह बाहर की किसी भी चीज में नहीं मिलती। शान्ति हथियारों से नहीं प्रेम से स्थापित होती है। आज विश्व में हथियारों की होड लगी है अत दुनिया अशान्त ही है। प्रेम से बढ़कर मनुष्य को जोड़ने वाली वस्तु दुनिया में दूसरी नहीं है। हमारी अन्तरात्मा जिसे सच्चा और शुभ माने वही करने में हमारा सुख है, हमारी शान्ति है। मानव को हिमालय की कन्दराओं में जाने से शान्ति नहीं मिलेगी, बल्कि असली शान्ति समाज की सेवा में समर्पित होने में ही है। इस जीवन में हमें उसकी परम आवश्यकता महसूस होनी ही चाहिए। क्योंकि मन के विकारों को त्यागने के लिये भी शान्ति की परम आवश्यकता है। वह शान्ति तभी सम्भव है, जब मानव अपनी वृत्तियों पर पूर्ण नियन्त्रण कर ले। यही शान्ति हमारे जीवन के लिए परम पावन और वाछनीय निधि है। शान्ति के चाहने वाले को अपने अन्दर झाकने का अभ्यास करना चाहिये। बाह्य जग में अधिक दृष्टि नहीं जमनी चाहिए। जिसके जीवन की आवश्यकताएं जितनी कम होंगी वह उतनी ही शान्ति प्राप्त कर सकेगा। शान्ति अपरिग्रह में है, परिग्रह में नहीं।

जो मनुष्य लौकिक और भौतिक उथल-पुथल तथा झझावात में रहते हुए भी मानसिक शान्ति कायम रख सके, वही सच्चा पुरुष है। उसी में सच्चा पुरुषार्थ माना जायेगा। 'सर्वे भवन्तु सुखिन' का मूल मन्त्र जिसने सीख लिया, सबका कल्याण करना ही जिसका लक्ष्य है वही मानवता का सही अर्थों में विकास कर सकता है तथा स्थाई शान्ति पा सकता है। सबके उदय और उत्थान में ही मानवता के चरम विकास का मूल मन्त्र छिपा है। साधन एक नहीं अनेक हैं, किंतु शान्ति हमारा साध्य हो तो हम निश्चित सिद्धि प्राप्त करने में सफल हो सकेंगे और तभी यह मानव जीवन सार्थक कहा जा सकेगा। अत. मानव-धर्म है कि वह परम सिद्धि हेतु सतत प्रयत्नशील बना रहे। □

सत्य और शान्ति

भगवन्त राव गाजरे

जीवन का मूल ही सत्य है अत: जीवन का लक्ष्
यदि जीवन में मनुष्य सम्पूर्ण सत्य का पालन करे
क्योंकि सत्य ही ईश्वर है। सत्य के बिना जीवन क
आदर्श नहीं बन सकता। सत्य की खोज करने व
का गुण होना अनिवार्य है। अभय हुए बिना सत्य
अहिंसा के सामने हिंसा शान्त हो जाती है, ठीक वै
आगे असत्य शान्त हो ही जाना चाहिए। जो मनुष्य
उसके लिए निराशा जैसी कोई वस्तु संसार में नहीं
सदा ही आशावादी होता है।

आज समाज में सबसे बड़ी शक्ति लोकमत है अं
से ही उत्पन्न किया जा सकता है। सच्ची शक्ति सत
के जोर से प्राप्त की जाती है वह असली नहीं होती है
बार कहा था—

"सत्य और अहिंसा के बीच यदि चुनाव करः
छोड़कर सत्य रखने में आगा-पीछा नहीं करूंगा।" य
है, तो उसका प्रभाव अपने आप लोगों पर पड़ेगा ही,
वह जिस काम को सच मानता है, वही करे। अपनी
भी उसको मानने लग जाएगा और वही वास्तव में
ध्यान में रखिए कि जब सत्य ईश्वर है तो उसके f
क्योंकि सत्य स्वयं ही इतना विशाल, विराट और क
बातों का समावेश हो जाता है। सत्य